

# मतादर्श

सामाजिक विज्ञान, मानविकी एवं वाणिज्य की शोध पत्रिका

संपादक

**शैलेन्द्र सेंगर**

निदेशक, एकेडमी ऑफ एडमिनिस्ट्रेटिव सर्विसेज, दिल्ली

**मेखला प्रकाशन**

एफ-3/139, सेक्टर-16, रोहिणी

दिल्ली-110089

वर्ष : 6 अंक : 4 □ अक्टूबर-दिसम्बर, 2013

## मतादर्श

मतादर्श भारत में समाचार पत्रों के निबंधक (आर.एन.आई.) द्वारा अनुमोदित है।

**सलाहकार संपादक**

डा. गिरीश मिश्र

**संपादक**

शैलेन्द्र सेंगर

**संपादक मंडल**

डॉ. आर. एन. कुंअर

डॉ. बामेश्वर सिंह

डॉ. विवेकानन्द शुक्ला

डॉ. रवीन्द्रनाथ राय

प्रो. राम अयोध्या सिंह

डॉ. लक्ष्मेश्वर ठाकुर

**साज-सज्जा**

पंकज झा

**संपादकीय सम्पर्क:**

448, पॉकेट-5, मयूर विहार, फेज-1,

दिल्ली-110091

फोन : 011-49050844, 22053916, 47541851, 64683387

e-mail : editorialindia@yahoo.com

---

**मूल्य : ₹ 1500.00**

मुद्रक एवं प्रकाशक अलका सिंह द्वारा एफ-3/139, सेक्टर-16, रोहिणी दिल्ली-110089 से प्रकाशित तथा बी. के. ऑफसेट, नवीन शाहदरा दिल्ली-32 से मुद्रित

---

**नोट:** पत्रिका में प्रकाशित लेखकों के विचार अपने हैं। उसके लिए पत्रिका/संपादक/संपादक मंडल को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। पत्रिका से सम्बंधित किसी भी विवाद के निपटारे के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

## Editorial

Colleges and universities are not appointing teachers on regular posts. Instead they hire non-regular or contractual teachers at a pittance, many of whom are not fully qualified. It is an unacknowledged crisis swamping the higher education system in India, which otherwise tom-toms its rapid expansion. Neither the department of higher education nor the University Grants Commission (UGC) has a complete picture about vacancies in universities and colleges, and the contractual non-regular teachers appointed to tide over these vacancies. A parliamentary standing committee in its report in May this year recorded only partial figures. Against 16,324 sanctioned teaching posts in central universities, 6,254 posts — 38% — were vacant. Information for only 47 state universities (out of a total of 297) was available showing that out of 11,645 sanctioned posts, 4,710 or 40% posts were lying vacant. Colleges and universities are not appointing teachers on regular posts. Instead they hire non-regular or contractual teachers at a pittance, many of whom are not fully qualified. It is an unacknowledged crisis swamping the higher education system in India, which otherwise tom-toms its rapid expansion.

Neither the department of higher education nor the University Grants Commission (UGC) has a complete picture about vacancies in universities and colleges, and the contractual non-regular teachers appointed to tide over these vacancies. A parliamentary standing committee in its report in May this year recorded only partial figures. Against 16,324 sanctioned teaching posts in central universities, 6,254 posts — 38% — were vacant. Information for only 47 state universities (out of a total of 297) was available showing that out of 11,645 sanctioned posts, 4,710 or 40% posts were lying vacant. A leading Daily collected information on pay scales of contractual teachers and their numbers from regional teachers' associations and federations across the country. The findings are shocking, and indicate a crumbling higher education setup in the country. An estimated 40% of college teachers are non-regular, designated variously as temporary, contractual, ad hoc, guest or self-financing. They usually get anything between Rs. 4,000 and Rs. 20,000 per month, and work for about six months in a year on contractual basis. They get no other benefits. If university and college teachers are being paid such low salaries, and with many not even fully qualified, to expect good quality teaching from them is unreasonable.

— *Editor*

## इस अंक में

### मनोविज्ञान

प्राथमिक शिक्षा में प्रगतिरोध और माता-पिता की मनोवृत्ति - मधु कुमारी 7

### भूगोल

भारत में खाद्य सुरक्षा एवं कुपोषण: एक चुनौती - डॉ० नूतन कुमारी 10

### दर्शनशास्त्र

धर्म की अवधारणा का विकास - डॉ० वीरेन्द्र कुमार सिंह 27

### संस्कृत

न्यायसूत्र के षोडश पदार्थों का विश्लेषण - सुमन्त कुमार 32

वेदकालीन समाज की राजनैतिक दशा - डॉ० नरेन्द्र झा 38

मृच्छकटिक में वर्णित आभूषण और श्रृंगार प्रसाधन की विवेचना-डॉ० राजकुमार 45

### इतिहास

भारत में पर्यटन संस्कृति: बिहार के विशेष संदर्भ में - डॉ० किरण कुमारी 49

गांधी और नेहरू के वैचारिक मतभेद का सच - शीतांशु शेखर 64

पल्लव राजवंश में प्रान्तीय एवं स्थानीय प्रशासन: एक अवलोकन-डॉ० ममता पांडेय 68

वैशाली गणतंत्र का ऐतिहासिक विश्लेषण - डॉ० शेखर सिंह 73

### हिन्दी-साहित्य

आचार्य शिवपूजन सहाय की सम्पादन-कला - डॉ० पूजा कुमारी 76

हिन्दी के आदिवासी उपन्यासों में स्त्री-शोषण की चित्रित समस्याएँ-डॉ० रश्मि जैन 80

### गृह विज्ञान

प्राचीन भारतीय आहार, पोषण का आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता - नीलम कुमारी 84

### समाजशास्त्र

सूचना का अधिकार से समाज की उन्नति - संजीव कुमार सिंह 87

## राजनीतिशास्त्र

वर्तमान भारतीय राजनीतिक परिदृश्य - विपिन दूबे	91
आधुनिक भारतीय चिन्तक डॉ० भीमराव अम्बेडकर के राजनीतिक विचार - डॉ० मुखलाल राय	100

## HISTORY

Inscribed Stupas, Self-assertive Their Personality — <i>Mohd. Sameel Naseem, Dr. Sanjay Kumar</i>	105
Non-Cooperation Movement in Bihar and Dr. Rajendra Prasad— <i>Dr. Ravi Shankar Kr. Choudhary</i>	112
A Historical Study of Socio-Cultural Change in Pre-Independence Mithila— <i>Dr. Madan Paswan</i>	124
Agricultural Economy of Awadh— <i>Dr. Manisha</i>	132

## PSYCHOLOGY

Birth Order and Personality Traits Among College Students— <i>Dr. Shashi Kala Singh</i>	138
Mental Health Related to the Working Status of Women— <i>Dr. Anita Arora</i>	145
Parent-Child Relationship and Academic Achievement of Tribal School Students— <i>Dr. Bharati Roy</i>	150

## PHILOSOPHY

Ethical Aspect of Abortion— <i>Dr. Ajit Kumar Barnwal</i>	155
Sun Worship in Gaya— <i>Dr. (Prof.) Kumkum Sinha</i>	158

## ECONOMICS

Floods in North Bihar and its Management: A Critical Analysis— <i>Ranjay Kumar Singh</i>	164
Marketing of the Products of Barauni Refinery— <i>Dr. Hira Lal Pandit</i>	176
Resource Mobilization for Universal Old Age Pension in India— <i>Prashant Prakash</i>	178

## ENGLISH

Post-modernist Elements in the Novels of Vikram Seth— <i>Dr. Raj Kumar Singh</i>	193
Recent Trends in the Novel 'The Blue Bedspread' of Raj Kamal Jha— <i>Dr. Ganga Sagar Pd. Singh</i>	196
Diaspora Writing: The Indian Perspective— <i>Ishrat Fatma</i>	201

## HEALTH CARE

Involvement of Various Stakeholders in Health Care Provision in MCD Schools of South Delhi— <i>Mrs. Manisha, Prof. S. Vivek Adhish, Prof. J.V.Singh</i>	207
--	-----

## MANAGEMENT

Management for All: Building and Gearing-up Efficiency!— <i>Rajnish Kumar</i>	213
---	-----

**POLITICAL SCIENCE**

India-China in Africa: Issues and Debates—*Sushmita Rajwar* 216

**EDUCATION**

Education in the Emerging Indian Society:  
A Sociological Perspectives—*Kanak Chaturvedi* 220

**GEOGRAPHY**

The Modes of Transport and Patterns of Movement—*Santosh Ram* 227

# प्राथमिक शिक्षा में प्रगतिरोध और माता-पिता की मनोवृत्ति

मधु कुमारी

शोध छात्रा ( मनोविज्ञान ), जे०पी० विश्वविद्यालय, छपरा

शिक्षा क्या है? इस पर समय-समय पर विभिन्न विज्ञानों तथा शिक्षा शास्त्रियों ने अपना विचार व्यक्त किया है। उनके विचारों पर देश, काल तथा समाज का प्रभाव पड़ा है। समाज की बदलती हुई परिस्थितियों तथा आवश्यकताओं के अनुसार परिभाषाओं में भी परिवर्तन आया है। शिक्षा का शाब्दिक अर्थ भारतीय दृष्टिकोण से विचार करने पर यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा शब्द की व्युत्पत्ति 'शिक्ष् शिक्षणे' धातु से हुई है। इसका अर्थ है विद्या ग्रहण करना। दूसरे शब्दों में शिक्षा का तात्पर्य विद्योपार्जन है।

पश्चिमी विज्ञानों के अनुसार एजुकेशन शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'एडकेटम' शब्द से हुई है। लैटिन में 'ई' का अर्थ है 'अन्दर से बाहर' और डकों का अर्थ है 'निकालना'। अतः 'एडूकेशन' का अर्थ है 'अन्दर से बाहर की ओर निकालना'। इस दृष्टिकोण से एजुकेशन का तात्पर्य व्यक्ति की अन्तर्निहित शक्तियों एवं योग्यताओं के विकास से है।

शिक्षा को दो अर्थों में प्रयुक्त किया गया है। साधारण बोल-चाल की भाषा में शिक्षा का अर्थ स्कूल में प्राप्त की जाने वाली शिक्षा से है। अतः जब हमारा ध्यान उस शिक्षा की ओर जाता है जो शिक्षालय में शिक्षक द्वारा पाठ्य सामग्री की सहायता से प्रदान की जाती है, तब हम शिक्षा को सीमित अर्थ में लेते हैं। पाठ्य-पुस्तकें पाठ्यक्रम तथा शिक्षा संगठन आदि शिक्षा का काम स्थान और समय निश्चित होता है। ऐसी शिक्षा को साविधिक शिक्षा भी कहते हैं।

द्वितीय के अन्तर्गत शिक्षा को व्यापक अर्थ में लेते हैं तब शिक्षा केवल वह नहीं होती जिसे स्कूलों में प्रदान की जाती है। व्यापक अर्थ में शिक्षा सम्पूर्ण जीवन तक चलने वाली प्रक्रिया है। व्यक्ति जीवन से लेकर मृत्यु तक कुछ न कुछ सीखता रहता है, नई बातें और नये अनुभवों को प्राप्त करता रहता है। इसलिए यह कहा जाता है कि शिक्षा जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। इस तरह शिक्षा एक गतिशील विषय है। इसका रूप स्थिर नहीं है। शिक्षा में सरिता का स्वाभाविक प्रभाव होता है। शिक्षा चेतन है, जड़ नहीं। शिक्षा का सम्बन्ध जीवन से होने के कारण उसमें गति और ग्रहण करने की शक्ति है। शिक्षा एक जीवित प्रक्रिया है। इसे एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जाता है कि जिस प्रकार कमल सूर्य का प्रकाश पाकर खिल उठता है और शिक्षा न मिलने पर अविकसित रह जाता है।

व्यापक अर्थ में शिक्षा से हमारा तात्पर्य उस क्रिया से है जो मनुष्य को इस योग्य बनाती है कि वह समाज का उपयोगी प्राणी बनकर विकास में सहयोग प्रदान कर सके। शिक्षा वह कार्य है जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है। शिक्षा मनुष्य को सभ्य बनाता है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य उन शक्तियों को विकसित करता है जो उसे सफलता प्राप्त करने में सहायक होती है। शिक्षा ऐसी कुछ नहीं है जो एक वस्तु के रूप में दी जा सके। शिक्षा एक प्रकार की 'चेतना' है जिसे मनुष्य

स्वयं प्राप्त करता है। शिक्षा मानव समाज की संचित सीख है जिसे परम्परा और परिस्थिति के अनुसार मनुष्य ग्रहण करता है।

प्राकृतिक जगत् की भाँति सामाजिक जगत् भी परिवर्तनशील है। समाज कोई स्थिर संरचना नहीं बल्कि सम्बन्धों का जाल है और सामाजिक सम्बन्ध नित्य ही ही नहीं सकते। शिक्षा सामाजिक व्यवस्था का ही एक अंग है। यह एक व्यापक प्रणाली की उपप्रणाली है। अतः शिक्षा प्रणाली में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है, शिक्षा समाज की नाड़ी है। कार्ल मार्क्स (1947) ने माना कि परिणामात्मक परिवर्तन ही एक खास सीमा पर होने पर गुणात्मक भेदों में बदल जाता है। हेगेल (1947) ने भी अपना विचार व्यक्त किया है।

शिक्षा के संदर्भ में उपर्युक्त अध्ययनों पर दृष्टि डालने पर बच्चों को किस प्रकार से शिक्षा प्रदान की जाय, यह व्याख्या की गई है। वर्तमान संदर्भ में इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि हमारे सम्पूर्ण भारत वर्ष की शिक्षा व्यवस्था एक प्रणाली पर आधारित है। शिक्षा लेने वाले बच्चों को सरकारी विद्यालयों में दोपहर का भोजन भी दिया जाता है। अनुसूचित जाति, जनजाति के बच्चों को अनाज के साथ ही दो सौ रूपया प्रतिमाह दिया जाता है ताकि वे नियमित रूप से स्कूल में अपनी उपस्थिति दर्ज करावें। वर्तमान में बिहार सरकार ने हाई स्कूल में बालिका साईकिल योजना और ड्रेस भी उपलब्ध कराई है। बच्चों में शिक्षा के प्रति जागरूक करने के हर प्रयास जारी है। लेकिन इसके बावजूद अगर विद्यालय से पलायन या प्रगतिरोध की स्थिति उत्पन्न होती है तो इसका कुछ कारण तो अवश्य ही होगा जिसकी जानकारी प्राप्त करना इस अध्ययन का उद्देश्य होगा। प्राथमिक शिक्षा सवैधानिक स्तर पर अनिवार्य हो गया है जिसे अभी पूर्णरूप से कार्यरूप में परिणत करना बाकी है, लेकिन इस दिशा में केन्द्र एवं राज्य स्तर पर प्रयास जारी है।

शिक्षा से सम्बन्धित अध्ययनों के क्रम में कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिकों में कैम्पवेल तथा होरोक्स (1961), सिगेलमैन (1965), थौमस (1986), एडवन्स (1986), पालभर एवं कोचरण (1988), कुमारी रंकि (2010) के द्वारा किया गया अध्ययन काफी महत्वपूर्ण है।

**क्षेत्र** - मुजफ्फरपुर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले माता-पिता पर अध्ययन किया गया।

**प्रतिदर्श:-** मुजफ्फरपुर के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाले तीन सौ माता-पिता को अध्ययन क्षेत्र में सम्मिलित किया गया।

## संयग एवं मापनी : माता-पिता की मनोवृत्ति मापनी

प्राथमिक शिक्षा में प्रगतिरोध और माता-पिता की मनोवृत्ति को मापने के लिए ठाकुर (2008) के द्वारा निर्मित मनोवृत्ति को मापनी का चयन किया गया। ठाकुर ने प्राथमिक शिक्षा के प्रति बच्चों में निराशा एवं स्कूल से पलायन करने की प्रवृत्ति पर माता-पिता के मनोवृत्ति का क्या प्रभाव पड़ता है, इसे देखने का प्रयास किया है। यह एक पाँच बिन्दु मापनी है। जिस मापनी के आधार पर निम्नतम प्राप्तांक छत्तीस एवं उच्चतम प्राप्तांक एक सौ अस्सी की संभावना है। इस मापनी में कुल व्यक्तियों की संख्या छत्तीस है। इस मापनी का अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता .70 तथा परीक्षण पुनः परीक्षण विश्वसनीयता .79 पायी गयी है। मापनी की वैधता के लिए ज्ञात समूह तुलना विधि के प्रयोग के आधार पर प्राप्तांकों के मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता टी०- 8.49 है जो .001 स्तर पर प्रमाणित

है। प्रयोगों की प्राथमिक शिक्षा में प्रगतिरोध एवं माता-पिता की मनोवृत्ति को मापने के लिए ठाकुर (2008) द्वारा हिन्दी में निर्मित माता-पिता की मनोवृत्ति मापनी का चालन किया गया। इस मापनी के आधार पर अधिकतम प्राप्तांक एक सौ अस्सी तथा न्यूनतम प्राप्तांक छत्तीस की संभावना है। प्रतिदर्श के प्राप्तांको का प्रसार तथा वितरण सारिणी संख्या-1 में वर्णित है।

#### सारिणी संख्या -1

मध्यमान	मध्यांक	बहुलांक	प्रमाणिक विचलन	मध्यमान की प्र० त्रुटि
128.68	128.5	128.14	14.66	.85

प्राथमिक शिक्षा में प्रगतिरोध एवं माता-पिता की मनोवृत्ति मापनी के आधार पर वर्तमान प्रतिदर्श से प्राप्त प्राप्तांको के ऊपर वर्णित-प्रसार के सहयोग से किये गये परिणामों के तुलनात्मक विवेचन से स्पष्ट होता है कि केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीनों ही मापों-मध्यमान, मध्यांक तथा बहुलांक में इतनी निकटता है कि वर्तमान प्रतिदर्श को वास्तविक जनसंख्या के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। इस प्रतिदर्श के मध्यमान की प्रमाणिक त्रुटि .85 पाया गया है जिसके आधार पर यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि प्रतिदर्श का मध्यमान जनसंख्या मध्यमान से अधिक से अधिक 1.64 ( $.85 \times 1.96$ ) की सीमा में ही विचलन प्रदर्शित कर सकता है।

#### प्राथमिक शिक्षा में प्रगतिरोध एवं माता-पिता की मनोवृत्ति प्राप्तांको का तुलनात्मक अध्ययन

#### सारिणी संख्या - 02

प्राथमिक शिक्षा में प्रगतिरोध एवं माता-पिता की मनोवृत्ति	उच्च मनोवृत्ति समूह	निम्न मनोवृत्ति समूह
संख्या	150	150
मध्यमान	148.95	137.14
प्र० विचलन	20.20	16.67
मध्यमान की प्र० त्रुटि	2.61	2.05
मध्यमानों का अन्तर	11.81	
मध्यमानों के अन्त की प्रमाणिक	3.85	
टी० अनुपात	3.59	
सार्थकता स्तर	01	

ऊपर वर्णित सारिणी में दोनों ही समूहों के माता-पिता की मनोवृत्ति के सार्थकीय प्राप्तांको के तुलनात्मक विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा में प्रगतिरोध के प्रति माता-पिता की मनोवृत्ति प्राप्तांको का मध्यमान 148.95 तथा 137.14 पाया गया है जो 298 डी० एफ० पर .01 स्तर पर सार्थक प्रमाणित होता है। अतः यह निष्कर्ष लिया जा सकता है। प्रस्तुत अध्ययन में माता-पिता के दो समूहों में उच्च मनोवृत्ति एवं निम्न मनोवृत्ति का निर्धारण कर अध्ययन किया गया है। प्राप्त निष्कर्ष से यह स्पष्ट होता है कि माता-पिता के मनोवृत्ति का प्रभाव पड़ता है। इसे और अधिक स्पष्ट करने के लिए सम्पूर्ण प्रतिदर्श पर प्रोडक्ट मोमेंट सह-सम्बन्ध विधि के द्वारा अध्ययन किया गया। इस जाँच के आधार पर दोनों ही समूहों के बीच .42 सह-सम्बन्ध गुणांक पाया गया जो 298 डी० एफ० के लिए गुणांक दोनों ही चरों के बीच धनात्मक घनिष्ठ सम्बन्ध को प्रदर्शित करता है।

## प्राप्त निष्कर्ष

- (क) इस चर का जनसंख्या में सामान्य वितरण प्रमाणित होता है।
- (ख) प्राथमिक शिक्षा में प्रगतिरोध एवं माता-पिता की मनोवृत्ति के द्वारा यह स्पष्ट होता है कि सभी माता-पिता अपने बच्चों के शिक्षा के प्रति एक ही तरह की मनोवृत्ति नहीं रखते हैं फिर भी अध्ययन के द्वारा प्राप्त निष्कर्ष इस दिशा में महत्वपूर्ण है।
- (ग) दोनों ही समूहों के बीच उच्च एवं सार्थक सह-सम्बन्ध पाया गया है।

## Reference

1. Garettec H.E. (1955): Satisfaction in Psychology and education (Fourth edition long man green & co. New York.
2. Thakur. L. (2008): Parental attitude towards education questionnaire, B.R.A. Bihar University Muzaffarpur.
3. Campbell, RobertEand Horrocks, Jhon, E. (1961): A note on relationship between student and parents mine & Oja Teacher Attitudes inventory scores journal of educational Psychology 1961, 52 (4) 199-200.
4. Thomas, charls, B (1986): Southern Methodist Perkins school of values a predictors of social activists behavior, Human relation vol . 39 (3) 179-193.
5. Siegle Man, M. (1965): College students Personality Correlates of early Parent child relationship journal of consult Psychology, 1965, 29 (6) 558-564.
6. Palmer, Sylvia & Cochran Larry(1988): Parents as agents of Career (1988) development, journal of counseling psychology, (Jan) Vol. 35 (1) 71-76.
- ``Kumari Rinki (2010): Child development Regarding social, economical & Others variables of Personality. A Thesis of B.R.A. Bihar University, Muzaffarpur.

# भारत में खाद्य सुरक्षा एवं कुपोषण एक चुनौती

डॉ० नूतन कुमारी

भूगोल विभाग, बी०आर०ए० बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

सामान्य अर्थों में खाद्य सुरक्षा से अभिप्राय देश के सभी नागरिकों को उनकी शारीरिक आवश्यकतानुसार पर्याप्त मात्रा में प्रत्येक समय भोजन की उपलब्धता से है। विश्व विकास रिपोर्ट ने खाद्य सुरक्षा की परिभाषा सभी व्यक्तियों के लिये सभी समय पर एक सक्रिय एवं स्वस्थ जीवन के लिये पर्याप्त भोजन की उपलब्धि के रूप में की है। जबकि विश्व खाद्य एवं कृषि एवं कृषि संस्था (FAO) अनुसार सभी व्यक्तियों को सभी समय पर उनके लिये आवश्यक बुनियादी भोजन के लिये भौतिक एवं आर्थिक दोनों रूपों में उपलब्धि के आश्वासन को खाद्य सुरक्षा माना गया है। इन परिभाषाओं से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं-

1. खाद्य सुरक्षा के लिए किसी देश की समग्र जनसंख्या को खाद्यान्न की भौतिक उपलब्धि आवश्यक है।
2. सभी को पर्याप्त खाद्यान्न उपलब्ध कराने के लिये यह जरूरी है कि लोगों के पास पर्याप्त क्रयशक्ति हो ताकि वे अपनी जरूरत के लिये खाद्य पदार्थ हासिल कर सकें।
3. स्वस्थ जीवन के लिये उपलब्ध खाद्य, गुणवत्ता और मात्रा दोनों रूप में पर्याप्त होने चाहिए ताकि वे पोषण संबंधी आवश्यकता को पूरा कर सकें।

## खाद्य समस्या की स्थिति

विश्व की जनसंख्या के बढ़ने के कारण लोगों की क्षमता तथा खाद्यान्नों की सापेक्षित पूर्ति कम होती जा रही है। फलतः इस समय पूरे विश्व में लगभग 84 करोड़ लोग भूखमरी और कुपोषण के शिकार हैं। विश्व में शहरी जनसंख्या प्रतिवर्ष 6 करोड़ की दर से बढ़ रही है, जिसके कारण खाद्य वितरण एक बड़ी चुनौती बनता जा रहा है। सोमालिया, सूडान, रवांडा और इथियोपिया में लाखों लोग भूखमरी के कारण मर चुके हैं। विश्व खाद्य संगठन के एक रिपोर्ट के अनुसार उन विकासशील देशों की स्थिति और खराब है, जहाँ खाद्यान्न उत्पादन और वितरण दोनों तुलनात्मक रूप से काफी निम्नस्तरीय हैं। जहाँ तक भारत का प्रश्न है, 1960 के दशक में प्रारंभ हुई हरित क्रांति की पहुंच अभी तक मात्र 30 प्रतिशत खेतों तक ही हो पायी है। 1974 में रोम (इटली) में विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा आयोजित विश्व खाद्य सम्मेलन में विश्व के कुल खाद्य भंडार के स्तर में लगातार होने वाली कमी पर गंभीर चिंता व्यक्त की गयी थी। इस सम्मेलन में 1984 को लक्ष्य वर्ष इस प्रकार घोषित किया गया था कि इस वर्ष के पश्चात् कोई भी व्यक्ति भूखा न रहे तथा विश्व का कोई भी व्यक्ति शारीरिक या मानसिक कुपोषण से प्रभावित न हो। इसके पश्चात् विभिन्न देशों द्वारा इस दिशा में तेजी से कदम उठाया गया, जिसके फलस्वरूप कई विकासशील देशों में कृषि उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है।

#### विश्व में खाद्य एवं पोषक आहार की उपलब्धता

- 1- **अल्प कैलोरी- अल्प प्रोटीन:** 2500 कैलोरी से कम तथा 30 ग्राम प्रोटीन से कम जिन देशों में खाद्यान्न प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध होता है उसे इस वर्ग में रखा गया है। इस वर्ग में मिस्र तथा दक्षिण अफ्रीका को छोड़कर, अफ्रीका के सभी देश लैटिन अमेरिका में ब्राजील तथा अर्जेंटीना को छोड़कर सभी देश, एशिया में जापान, चीन तथा तेल निर्यातक देशों को छोड़कर सभी देश तथा दक्षिणी प्रशांत एवं हिंद महासागर के सभी तटीय देश सम्मिलित हैं।
- 2- **मध्यम कैलोरी-मध्यम प्रोटीन:** इस वर्ग में 2500 से 2900 कैलोरी तथा 60 से 80 ग्राम प्रोटीन प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध कराने वाले देशों को रखा गया है। ऐसे देशों में ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका, कोरिया, तुर्की, पुर्तगाल, अल्बानिया, पूर्वी यूरोप तथा पूर्व सोवियत संघ के रूस को छोड़कर सभी देश सम्मिलित हैं।
- 3- **उच्च कैलोरी-उच्च प्रोटीन:** इस वर्ग में 2900 कैलोरी से अधिक तथा 80 ग्राम प्रोटीन से अधिक खाद्यान्न प्रति व्यक्ति उपलब्ध कराने वाले देशों को रखा गया है। इस वर्ग में मुख्यतः विकसित देश तथा तेल निर्यातक देश सम्मिलित हैं। इनके पास खाद्यान्नों की कमी है। परंतु पर्याप्त पूंजी होने के कारण इनका आसानी से आयात करके अपनी अपेक्षित आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेते हैं।

विकासशील देशों की 33 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रही है। यद्यपि पूरे विश्व में खाद्यान्न की कुल आवश्यक मात्रा उपलब्ध है, परंतु खाद्यान्न का असमान वितरण इस समस्या को जटिल बना देती है। यदि प्रति कैलोरी उपलब्धता की दृष्टि से देखा जाय तो आज विश्व के प्रत्येक व्यक्ति के लिये 2500 कैलोरी अधिक है। परंतु मुख्य समस्या असमान वितरण तथा लोगों की क्रय शक्ति के अभाव की है। इसके कारण आज विश्व के लगभग 84 करोड़ लोग पर्याप्त दैनिक भोजन नहीं कर पाते हैं। दक्षिण एशिया की लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या कुपोषण की शिकार है। संयुक्त राष्ट्र संघ के एक आकलन के अनुसार विश्व की लगभग 10 करोड़ जनसंख्या किसी न किसी रूप में कुपोषण की शिकार है जबकि 9 करोड़ लोग गरीबी, बीमारी एवं कम आयु में मृत्यु जैसे कारणों से ग्रसित हैं। विकासशील देशों में प्रतिवर्ष 1.5 करोड़ बच्चे कुपोषण तथा 50 हजार अन्य पर्यावरणीय बीमारियों के कारण मौत के शिकार हो जाते हैं।

विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार विश्व में मात्र 33 देश ऐसे हैं, जहाँ प्रति व्यक्ति दिन 3000 या उससे अधिक कैलोरी खाद्यान्न उपलब्ध होता है।

### खाद्य समस्या के कारण

विकासशील देशों में विश्व की 74 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। ये देश कुपोषण के साथ-साथ खाद्यान्नों के अभाव की स्थिति से गुजर रहे हैं। इनमें से कुछ देश वर्षों से अकाल एवं भुखमरी से ग्रस्त हैं। विकासशील देशों में खाद्यान्न समस्या का मुख्य कारण जनसंख्या विस्फोट, निम्न उत्पादकता, कृषि में विविधता का अभाव, वितरण संबंधी असमानता, पारगमन क्षति, बीमारी के कारण फसलों की बर्बादी, कृषि के आधुनिकीकरण का अभाव, भूमि वितरण में असंतुलन आदि हैं।

विकासशील देशों में प्रति हेक्टेयर उत्पाद काफी कम है तथा भूमि पर जनसंख्या का अत्यधिक दबाव होने के कारण लोगों की आवश्यकता पूरी नहीं हो पाती है, जिससे खाद्य समस्या उत्पन्न हो जाती है। यहाँ कृषि में विविधता का भी अभाव है। प्रायः अधिकांश खेतों में एक फसली संयोजन पाया जाता है।

विकासशील देशों में कृषि अत्यंत पिछड़ी हुई अवस्था में है। कृषि में आधुनिक तरीकों का प्रयोग नहीं किया जाता है तथा फसलों में अनेकों प्रकार की बीमारियाँ फैल जाती हैं। कृषक ज्ञान के अभाव में कभी-कभी अधिक मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग कर देते हैं, जिससे उत्पादित खाद्यान्नों में रासायनिक तत्वों की बहुलता हो जाती है। इन दूषित खाद्यान्नों का सेवन करने से कई तरह की बीमारियाँ फैलती हैं। फसलों का एक बड़ा भाग भी बीमारियों के कारण नष्ट हो जाता है।

भारत में खाद्यान्न उत्पादन और प्रति व्यक्ति उपलब्धता							
01-सं. वर्ष	जनसंख्या %करोड़ में 1/2	खाद्यान्न का कुल उत्पादन %करोड़ 1/2	खाद्यान्न शुद्ध उत्पादन %करोड़ में 1/2	खाद्यान्न आयात %करोड़ में 1/2	खाद्यान्नो की कुल उपलब्धता %करोड़ में 1/2	प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता %ग्राम में 1/2	
1.	1951	36.3	5.49	4.81	.48	5.24	395
2.	1961	44.2	8.23	7.20	.35	7.57	469
3.	1971	55.1	10.84	9.49	.20	9.43	469
4.	1981	68.9	12.96	11.34	.07	11.43	455
5.	1991	85.2	17.63	15.43	-.01	15.86	510
6.	1997	95.5	19.94	17.45	-.05	17.62	506
7.	1998	97.1	19.22	16.82	-.25	15.96	450
8.	1999	98.7	20.31	17.77	-.13	16.94	470
9.	2000	100.2	20.59	18.02	-.10	17.05	466

खाद्य समस्या का एक राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय कारण वितरण संबंधी असमानता है जिससे गरीब विकासशील देशों में जनसंख्या का अधिकांश भाग अपनी आय का बहुत हिस्सा ही पोषक तत्वों में लगा पाता है। इससे लोगों में प्रोटीन विटामिन आदि की कमी बनी रहती है। विकासशील देशों में रख-रखाव, प्रोसेसिंग, तथा पैकिंग एवं रेफ्रिजेशन की सुविधा में कमी तथा पिछड़ी प्रौद्योगिकी होने के कारण बहुत अधिक खाद्यान्नो की बर्बादी हो जाती है।

### भारत में खाद्य समस्या

देश के सभी नागरिकों को समुचित मात्रा में गुणवत्तायुक्त खाद्यान्न/भोजन सदैव उपलब्ध रहे, इसको सुनिश्चित करने का नैतिक दायित्व प्रमुख रूप से सरकार का होता है। लेकिन अभी भी देश के कई भागों में कभी-कभी खाद्यान्न की अनुपलब्धता से अनेक लोगों को भुखमरी का सामना करना पड़ता है। जैसे पश्चिमी उड़ीसा में नुआपाड़ा, कालाहांडी, बोलनगीर, कोरापुट, रामगढ़ आदि ऐसे जिले हैं, जहाँ पूरे वर्ष औसत ग्रामीणों और आदिवासियों को दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं हो पाती है। भूख से मरने की घटना सिर्फ उड़ीसा में ही नहीं, बल्कि देश के सबसे धनी प्रदेश महाराष्ट्र तक में हुई है। आंध्र प्रदेश भी इसका अपवाद नहीं है जो कि साईबर स्टेट कहा जाता है।

### खाद्य सुरक्षा हेतु संचालित विभिन्न योजनायें

क्र.सं.	योजना/कार्यक्रम का नाम	प्रारंभ होने का वर्ष	प्रमुख उद्देश्य	अन्य विवरण
1.	मध्याह्न भोजन योजना	1995-96	स्कूली बच्चों को नियमित रूप से निःशुल्क खाद्यान्न प्रतिमाह उपलब्ध कराना।	प्राथमिक विद्यालय में अध्ययनरत बच्चों को प्रतिमाह निःशुल्क गेहूँ/चावल उपलब्ध कराया जा रहा है।
2.	सोशल संप्टीनेंट	1995-96	आंगनवाड़ी केंद्रों के माध्यम से बच्चों हेतु पोषक आहार उपलब्ध कराना।	इस योजना के अन्तर्गत आंगनवाड़ी केन्द्र खोलने और उन्हें पोषाहार की समुचित व्यवस्था हेतु प्रयास किया जाता है।

3.	लक्षित खाद्यान्न	1997-98	चयनित गरीबों को आधी दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराना।	4.42 लाख सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकानों से 30 हजार करोड़ रुपये का अनाज आधी दरों पर दिया जा रहा है। जुलाई 2001 से 10 किलो के स्थान पर 25 किलो अनाज प्रति परिवार प्रतिमाह कर दिया गया और एक अप्रैल 2002 से इसे और बढ़ाकर 25 से 30 किग्रा. प्रति माह कर दिया गया।
4.	समन्वित बाल विकास योजना के अन्तर्गत पोषण कार्यक्रम	1998-99	बच्चों के उचित पोषण गरीब परिवारों को सस्ती दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराना।	गरीबी की रेखा के नीचे के परिवार को बी.पी.एल. दरों पर अनाज उपलब्ध कराया जा रहा है।
5.	अन्नपूर्णा योजना	1999-2000	निराश्रित वृद्धों के लिये प्रतिमाह 10 किलोग्राम खाद्यान्न मुफ्त दिया जाना। वृद्धावस्था पेंशन के	राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन के अन्तर्गत अनाच्छादित व्यक्तियों को 10 किलो प्रति व्यक्ति अनाज निःशुल्क उपलब्ध कराया जाता है।
6.	अंत्योदय अन्न योजना	2000-2001	अत्यंत गरीब परिवारों को अत्यंत सस्ती दरों पर प्रतिमाह खाद्यान्न उपलब्ध कराना।	इस योजना के अंतर्गत प्रति परिवार प्रतिमाह 25 किलोग्राम गेहूँ/चावल एक करोड़ गरीबों को 2/3 रुपये प्रतिमाह के हिसाब से उपलब्ध कराया जा रहा है।
7.	संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना	2001-2002	रोजगार के साथ खाद्य सुरक्षा हेतु प्रत्येक कामगार को नगद प्रतिदिन 5 किग्रा अनाज उपलब्ध कराना।	15 अगस्त 2001 को प्रधानमंत्री द्वारा घोषित इस योजना अन्तर्गत राज्यों को 50 हजार टन अनाज निःशुल्क दिया जाता है।
8.	काम के बदले अनाज योजना	2001-2002	सूखा और बाढ़ से प्रभावित क्षेत्रों के लोगों के हेतु काम के बदले खाद्यान्न उपलब्ध कराना।	सूखा और बाढ़ प्रभावित राज्यों को सरकार द्वारा 2,425 करोड़ रुपये मूल्य का 24.42 लाख टन अनाज राज्य सरकारों को निःशुल्क प्रदान किया गया है।

## खाद्य सुरक्षा तथा भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली

भारतीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली को हालांकि अब 60 वर्ष से अधिक हो चुके हैं, खाद्यान्नों की खरीद, भंडारण और वितरण के लिए बुनियादी ढाँचा तथा इसके वर्तमान रूप में इस प्रणाली की शुरुआत 1965 में भारतीय खाद्य निगम की स्थापना से ही मानी जा सकती है। इसके लिए फूड कारपोरेशन ऑफ इंडिया एक्ट, 1964 संसद के एक अधिनियम के रूप में लाया गया था। देश की खाद्य नीति के हिस्से के रूप में इस संगठन के सुझाए गए तीन उद्देश्य इस प्रकार थे-

1. लाभकारी कीमतें उपलब्ध कराकर किसानों और उत्पादकों के हितों की रक्षा करना।
2. समाज के, विशेषकर कमजोर वर्ग के लोगों को वाजिब कीमतों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराना।
3. सूखा, बाढ़ तथा तूफान आदि जैसी दैवी विपदाओं के कारण उत्पन्न स्थितियों का सामना करने के लिए खाद्यान्न का सुरक्षित भंडार बनाकर रखते हुए खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराना।

फिर से संशोधित और बेहतर लक्ष्य वाली मौजूदा लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली जून 1997 में अस्तित्व में आई। इसका उद्देश्य है आर्थिक दृष्टि से बेहतर वर्ग की अपेक्षा गरीबों की जरूरतों को और अधिक पूरा किया जा सके। इसके अलावा कई अन्य योजनाओं के अन्तर्गत भी खाद्यान्न जारी किए जाते हैं। इसमें मुख्य रूप से लक्ष्य गरीबों का हित रखा जाता है और उनकी आवश्यकताओं को और अधिक केन्द्रित होकर ध्यान दिया जाता है। इसमें अंत्योदय, सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, प्राथमिक शिक्षा के लिए पोषाहार उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम और कुछ अन्य सामाजिक कल्याण योजनाएं शामिल हैं।

### खाद्यान्न उत्पादन की स्थिति

देश में वर्तमान में उपलब्ध खाद्यान्न भंडार और खाद्यान्नों के वार्षिक उत्पादन के आंकड़ों को देखकर प्रतीत होता है कि देश में खाद्यान्नों का उत्पादन और इसकी उपलब्धता हमारी वर्तमान आवश्यकता से अधिक ही है और देश खाद्यान्न के मामले में पूरी तरह आत्मनिर्भर हो गया है। लेकिन वास्तविकता ऐसी नहीं है। तालिका से यह स्पष्ट है कि देश में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता 395 ग्राम से बढ़कर 1991 में 510 ग्राम तक पहुंच गयी, जो अब उत्पादन बढ़ने के बावजूद भी 466 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन रह गयी है, क्योंकि खाद्यान्न उत्पादन के अनुपात में जनसंख्या की वृद्धि दर अधिक रही है। तालिका के अवलोकन से यह तथ्य भी सामने आता है कि वर्ष 1991 तक खाद्यान्नों का आयात भी किया जाता रहा जबकि इसके बाद से आयात की तुलना में निर्यात की मात्रा अधिक रहने से आयात ऋणात्मक रहे हैं।

भारत में खाद्य समस्या का एक दूसरा पक्ष भोज्य पदार्थों में पोषक तत्वों की कमी है। प्रोटीन, विटामिन, खनिज, वसा आदि संतुलित भोजन के अनिवार्य घटक हैं, परंतु 90 प्रतिशत भारतीयों के भोजन में किसी न किसी पोषक तत्व की कमी बनी रहती है। 2000-01 में भारत में लगभग आधे बच्चे एवं एक तिहाई से अधिक वयस्क कुपोषण से ग्रस्त पाये गये। नेशनल न्यूट्रीशन मॉनीटरिंग ब्यूरो (N.N.M.B) के एक सर्वेक्षण के अनुसार 1975-79 में 61.5 प्रतिशत बच्चे कुपोषित थे। 1991-32 में इनकी संख्या घटकर 56.2 प्रतिशत तथा 2000-01 में 47.7 प्रतिशत हो गयी है। केरल एवं तमिलनाडु में कुपोषणता के प्रतिशत में तीव्र गिरावट पायी गई, जबकि मध्यप्रदेश एवं उड़ीसा में अभी भी कुपोषण 70 के दशक के स्तर पर बरकरार है। इस कुपोषण तथा अल्पपोषण के कारण उनकी कार्यक्षमता में कमी होती है तथा वे बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। 1958 के पोषण सलाहकार समिति के एक अनुमान के अनुसार एक वयस्क पुरुष के लिये 2780 कैलोरी तथा महिला के लिये

2080 कैलोरी प्रदान करने वाले पदार्थों की आवश्यकता होती है। कम शारीरिक श्रम करने वाले व्यक्तियों के लिये कम कैलोरी की आवश्यकता होती है। औसत आधार पर औसतन प्रतिदिन 2250-3000 कैलोरी तथा 62 ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता होती है। उल्लेखनीय है कि विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन ने पुरुष एवं महिला के लिये क्रमशः 2600 और 1900 कैलोरी का आहार आवश्यक माना है। भारतीय भोज्य पदार्थों में दूध, मांस, अंडे, मछली, फल, सब्जी तथा खाद्य पदार्थों की कमी है।

### भारत में दैनिक औसत आहार एवं संतुलित आहार

विवरण	औसत वास्तविक		संतुलित		
	विभिन्न राज्यों में खाद्यान्न भंडारण की स्थिति				
राज्य का नाम	भारतीय निगम	खाद्य भंडार	केंद्रीय भंडार	राज्य भंडार	कुल भंडार
आंध्र प्रदेश	21.15	11.09	5.83	12.85	50.92
बिहार	5.76	1.53	2.69	5.49	15.47
गुजरात	10.84	3.26	1.44	2.25	17.79
हरियाणा	14.28	2.44	10.90	15.90	43.52
कर्नाटक	6.22	2.55	4.94	4.31	18.02
केरल	5.46	0.68	1.87	0.79	8.80
मध्य प्रदेश	13.99	7.45	16.56	5.25	43.25
महाराष्ट्र	17.02	11.31	9.26	13.69	51.26
उड़ीसा	4.23	1.35	2.39	4.52	12.49
पंजाब	75.85	6.39	31.43	60.67	174.34
राजस्थान	12.49	2.19	5.88	0.03	20.89
तमिलनाडु	9.50	6.05	6.24	24.33	46.12
उत्तर प्रदेश	25.81	9.36	15.38	14.95	65.20
पश्चिम बंगाल	11.54	5.49	2.55	1.31	20.89
जम्मू-कश्मीर	1.01	0.08	0.00	1.49	2.58
हिमाचल प्रदेश	0.27	0.05	0.00	0.40	0.72
गोवा	0.15	0.17	0.00	0.14	0.46
असम	2.99	0.46	2.50	1.10	7.05
अरुणाचल प्रदेश	0.18	0.00	0.00	0.05	0.23
मणिपुर	0.19	0.00	0.00	0.23	0.42
मेघालय	0.16	0.00	0.11	0.01	0.28
मिजोरम	0.21	0.13	0.00	0.11	0.45
नागालैंड	0.55	0.00	0.00	0.07	0.62
सिक्किम	0.34	0.24	0.00	0.31	0.89
त्रिपुरा	0.22	0.02	0.00	0.00	0.24
केंद्रशासित प्रदेश	5.01	1.57	0.00	0.35	6.93
<b>योगफल</b>	<b>245.42</b>	<b>73.86</b>	<b>119.97</b>	<b>170.60</b>	<b>609.85</b>

	आहार	आहार
खाद्यान्न	471.0	396.2
दालें	64.0	85.0
पत्तीदार सब्जी	24.0	113.4
अन्य शब्जियां	116.2	170.1
घी एवं वनस्पति तेल	26.1	56.7
दुग्ध एवं दुग्ध पदार्थ	26.1	283.5
मांस, मछली एवं अंडे	93.8	193.4
फल एवं मेवे	16.4	85.0
चीनी एवं गुड़	18.9	56.7

### खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की अवधारणा

विगत दशकों में शनैः शनैः खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की आवश्यकता विकसित हुई है, जिसका संबंध न सिर्फ खाद्यान्न उत्पादन तंत्र से है अपितु खाद्यान्न की उपलब्धता से भी है। इसका संबंध ऐसी स्थिति से है जब व्यक्ति पोषण की दृष्टि, मात्रा एवं गुणवत्ता में उपयुक्त आहार ग्रहण करता है तथा मुक्त पदार्थ जैविक दृष्टि से स्वास्थ्यवर्द्धक तथा जीवनदायी होता है। खाद्य सुरक्षा के व्यापक रूप से स्वीकृत परिभाषा के दो भाग हैं-

- प्रत्येक व्यक्ति को भौतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय रूप से संतुलित आहार प्राप्त हो, जिसमें सूक्ष्म तथा स्पष्ट पौष्टिक तत्व विद्यमान हो। जिसके अंतर्गत स्वच्छ पेयजल, स्वच्छता, पर्यावरणीय स्वच्छता, प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा तथा शिक्षा आते हैं। ये स्वस्थ जीवन प्रदान करने में सहायक होते हैं।
- पारिस्थितिकी मित्र विधियों द्वारा अनुकूल उत्पादन तकनीकी की मदद से खाद्यान्न प्रसंस्कृत किया जाता है। जो फसल, पशुपालन, वानिकी तथा मत्स्यपालन के प्राकृतिक संसाधन आधार को तेज एवं संरक्षित करता है।

उपर्युक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है कि खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के चार विभिन्न पहलू हैं-

**भौतिक रूप से उपलब्धता:** 1980 तथा 90 के दशक में खाद्य पदार्थों की भौतिक रूप से उपलब्धता हमारी विकास रणनीति का अभिन्न अंग रहा है। कृषि उत्पाद में भारी वृद्धि के मद्देनजर प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थ की उपलब्धता में बढ़ोतरी हुई है।

देश के विभिन्न भागों में कुपोषण और छद्म भुखमरी मुख्य समस्या है, क्योंकि उपलब्ध खाद्यान्न अपर्याप्त तथा असंतुलित रहता है। दाल, फल, सब्जी, दूध, अंडे तथा अन्य पशु उत्पादन की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में कमी आयी है, जिससे पोषण की दृष्टि से खाद्य असुरक्षा उत्पन्न हुई है। खाद्य पदार्थों में पोषक तत्वों का अभाव सर्वाधिक ध्यानाकर्षक पहलू है।

**आर्थिक रूप से उपलब्धता:** हरित क्रांति के कारण खाद्यान्न के उत्पादन में वृद्धि से खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को गारंटी नहीं प्रदान की जा सकी है। विनाशकारी गरीबी, क्रय शक्ति का अभाव, बढ़ रही बेरोजगारी तथा बढ़ रही जनसंख्या इसके प्रमुख कारण हैं। सन् 1998 में किया गया नमूना सर्वेक्षण अध्ययन से पता चलता है कि उस समय 40 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करती थी। एक अन्य आकलन के अनुसार भूमिहीन श्रमिकों को वर्ष में 100-150 दिन काम

नही मिलता है। अतएव, वे अपनी पोषण आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते हैं? प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता के स्थायित्व, अन्न भंडार का अनुरक्षण, जन वितरण प्रणाली के प्रयास तथा कई विकास कार्यक्रमों के बावजूद करीब 35 करोड़ लोग आर्थिक रूप से पोषक खाद्यान्न खरीदने में सक्षम नहीं हैं। खाद्य पदार्थों के मूल्य में उतार-चढ़ाव के कारण खाद्यान्न स्फीति पर अंकुश लगा हुआ है। इससे लोगों की क्रय शक्ति में कमी आती है और परिस्थिति बदतर हो जाती है।

आर्थिक रूप से खाद्यान्न की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए यह आवश्यक है कि खाद्य एवं पोषण नीति में उत्पादक एवं आयवर्द्धक पद्धति पर जोर दिया जाए जिससे रोजगार तथा आय का सृजन हो सके। इसके लिए बहुआयामी रोजगार अवसर की आवश्यकता है, जिससे लोग आवश्यक वस्तुओं व्यवसाय विकसित करके प्राप्त किया जा सकता है। इस संदर्भ में प्रत्येक घर में खाद्य पोषण सुरक्षा के लिए कृषि क्षेत्र में विविधता आवश्यक है। लघु ऋण के आधार पर बाजार आधारित लघु उद्यमों को विकसित करने पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

**सामाजिक रूप से उपलब्धता:** सामाजिक रूप से खाद्य एवं पोषण सुरक्षा हेतु लिंग, वर्ग और जाति विभेद पर ध्यान देना आवश्यक है। महिला, जनजाति, लघु एवं सीमांत किसान तथा भूमिहीन श्रमिक परिवार, खाद्य एवं पोषण असुरक्षा के शिकार होते हैं। इसके साथ-साथ व्यक्ति पर ध्यान देना भी उतना ही आवश्यक है। घर में भी महिलाएं एवं लड़कियां पुरुष और लड़कों की तुलना में प्रोटीन एवं अन्य पोषक तत्वों में पीछे रहती हैं।

**परिस्थितिकी रूप से उपलब्धता:** इसके तहत पोषण पदार्थ को जैविक दृष्टि से उपयोगी बनाने की प्रक्रिया शामिल होती है। जल द्वारा फैलने वाली बीमारियों, संक्रमण तथा पर्यावरणीय आपदाओं का प्रतिकूल प्रभाव हमारे शरीर तंत्र पर पड़ता है। समाज कुपोषण से प्रभावित वर्ग पर इनका दुष्प्रभाव अति शीघ्र पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्र में सिर्फ 4 प्रतिशत लोग स्वच्छता-स्वास्थ्य के मापदंड पर खरे उतरते हैं। खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के लिए प्राकृतिक संसाधन, मिट्टी की गुणवत्ता, फसल उत्पादन, पर्यावरणीय स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सेवाओं का संरक्षण किया जाना चाहिए।

## खाद्य सुरक्षा पर प्रोग्रेस फॉर चिल्ड्रेन रिपोर्ट

संयुक्त राज्य राष्ट्र बाल कोष (यूनिसेफ) ने मई में प्रोग्रेस फॉर चिल्ड्रेन रिपोर्ट जारी कर दुनिया को कुपोषित बच्चों की मौजूदा दशा से वाकिफ कराया। इसमें दुनियाँ, खासकर भारत के लिए कई हैरत अंगेज खुलासे किए गए। अपने नौनिहालों को पूरा पोषण देने के मामले में फिसड्डी ठहराए गए इस देश को दोहरा वार तब झेलना पड़ा जब जून में विश्व बैंक ने एक रिपोर्ट जारी कर यह बताया कि समस्या से निबटने के भारतीय तौर-तरीके भी त्रुटियों से लैस हैं। नौ फीसदी की संवृद्धि दर और शेरर सूचकांक की सरपट दौड़ के करिश्मे से वशीभूत देश को खबरदार करने के लिए इतने जोर का झटका पर्याप्त होना चाहिए। लेकिन झटके और उसके संभावित असर के विश्लेषण से पहले यह जान लेना ठीक होगा कि कुपोषण आखिर किस बला का नाम है।

### यूनिसेफ का बयान

विकासशील देशों में पांच वर्ष से कम आयु के 14.6 करोड़ बच्चों का वजन सुरक्षित समझे जाने वाले मानक (2.5 किलो) करोड़ है। भारत की बाल आबादी का यह लगभग आधा है। 47 फीसदी का यह अनुपात सर्वाधिक पिछड़े समझे जाने वाले सहारा के दक्षिणवर्ती अफ्रीकी देशों से भी अधिक या बराबर है, लेकिन कम नहीं। भारत की इस असफलता के लिए यूनिसेफ ने बच्चों को समुचित पोषण मुहैया कराने की क्रियाविधि को जिम्मेदार ठहराया है।

## संस्था की चिंता की वजह

बच्चों के हितों पर केंद्रित संयुक्त राष्ट्र की यह संस्था दरअसल सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों के तहत हो रही प्रगति का मूल्यांकन कर रही है। 2015 तक कुपोषित बच्चों की तादाद में आधी कमी करने के लक्ष्य के विरुद्ध भारत अभी तक केवल मामूली प्रगति कर सका है। 1990 में 54 फीसदी की तुलना में 1998 में यह अनुपात 47 फीसदी पर लाया जा सका है। 0.8 फीसदी सालाना कटौती की रफ्तार से भारत को लक्ष्य हासिल करते-करते 2015 लग जाएगा।

चीन के बराबर संवृद्धि दर पाने की भारतीय कोशिशों के मद्देनजर यह जानना क्षोभजनक है कि पहले को यूनिसेफ ने जोरदार शाबाशी दी है। कुपोषण के घरेलू फैलाव में चीन आधी से ज्यादा कटौती कर चुका है। एशिया-प्रशांत क्षेत्र के 59 फीसदी बच्चों के देश की इस उपलब्धि के बगैर यूनिसेफ की रिपोर्ट स्यापा भर रह जाती। भारत को खास तवज्जो मिलने का एक कारण यह भी है कि यदि वह अपनी रफ्तार बढ़ा ले तो पहले सहस्राब्दी विकास लक्ष्य को दुनिया हासिल कर सकती है।

प्रसंगवश जरूरी है कि यूनिसेफ की दूसरी मुख्य चिंता पर भी गौर कर लिया जाए। हाल के वर्षों में औद्योगिक देशों में भी अल्पभारतीय बच्चों का अनुपात बढ़ा है। लेकिन यहाँ इसके लिए गरीबी जिम्मेदार नहीं है। चिकित्सामूलक प्रगति को इसकी वजह बताया गया है। गर्भधारण की दवाओं के चलते जुड़वां-तिरवां बच्चों के जन को घटनाएं बढ़ी हैं और ऐसे जनन को मेडिकल प्रौद्योगिकी पर्याप्त सुरक्षा मुहैया कराया।

केन्द्र सरकार द्वारा खाद्य सब्सिडी पर खर्च			
Ø.सं	वर्ष	धनराशि /करोड़ में½	सकल सरकारी व्यय का :
1.	1990-91	2450	2.33
2.	1991-92	2850	2.53
3.	1992-93	2785	2.27
4.	1993-94	5537	3.90
5.	1994-95	4509	2.80
6.	1995-96	4960	2.75
7.	1996-97	5166	2.46
8.	1997-98	7500	3.23
9.	1998-99	8700	3.11
10.	1999-00	9200	3.03
11.	2000-01	8100	2.39

## खाद्य असुरक्षा के कारण

1. जलवायविक दृष्टिकोण से पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश एवं तमिलनाडु का समुद्रतटीय भाग चक्रवात प्रभावित है। इन क्षेत्रों में चक्रवात पूर्व सूचना प्रणाली का न तो कोई समुचित प्रणाली विकसित है और न ही राहत बचाव दल पूर्ण रूपेण संगठित है। इस कारण इन क्षेत्रों में चक्रवात के कारण फसलों, मवेशियों एवं जान-माल की अपूर्णीय क्षति होती है।

2. मध्य भारत के राज्य मुख्यतः मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, गुजरात एवं राजस्थान सूखा प्रभावित है जहाँ प्रत्येक तीन वर्ष में खाद्यान्न उत्पादन किसी न किसी रूप में बुरी तरह प्रभावित होता है। यद्यपि इन क्षेत्रों में जन वितरण प्रणाली के 450,000 केंद्र खुले हुए हैं जिसके द्वारा आवश्यकता धारण नहीं कर पाती है।
3. भारत की खाद्य सुरक्षा की समस्या गंभीर होने की अपेक्षा चिरकालिक है। यहाँ के खाद्य पदार्थों में पोषक तत्वों की कमी होती है जिसके कारण लोगों को आवश्यकता के अनुरूप कैलोरी की मात्रा प्राप्त नहीं हो पाती है।

## खाद्यान्नों के बढ़ते भंडार

वर्तमान में देश में खाद्यान्न का जो भंडार है उसे देख कर कोई भी अनुमान लगा सकता है कि देश में खाद्यान्नों का उत्पादन आवश्यकता से अधिक हो रहा है और भारत इस मामले में पूरी तरह आत्मनिर्भर हो चुका है। यदि जनसंख्या की वृद्धि दर से खाद्यान्न उत्पादन वृद्धि दर की तुलना करें तो स्थिति स्पष्ट हो जाती है। खाद्यान्न की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में वृद्धि न होने के बावजूद खाद्यान्न के क्रेताओं का अभाव इस तथ्य को उजागर करता है कि देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा आर्थिक रूप से इतने कमजोर है कि वह अपनी प्राथमिक आवश्यकता को पूरा करने की स्थिति में भी नहीं है। इसका एक अर्थ यह भी है कि देश में गरीबी की रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वालों की संख्या बढ़ रही है तथा कुपोषण की समस्या पहले से और भी विकराल रूप धारण कर रही है। देश में लोगों की क्रय शक्ति में कमी आने के साथ-साथ खाद्यान्नों के भावों में मंदी आने का एक बड़ा कारण देश में पर्याप्त खाद्य उत्पादन के बावजूद विदेशों से खाद्यान्न आयात है। खाद्य वितरण प्रणाली में दोष के कारण ही एक ओर भारतीय खाद्य निगम के भंडारों में आवश्यकता से कई गुना अधिक खाद्यान्न एकत्रित हो गया है, तो दूसरी ओर कुछ राज्यों में भुखमरी और कुपोषण से लाखों व्यक्ति प्रतिवर्ष अकाल मौत के शिकार हो रहे हैं।

## उपलब्धियाँ एवं चुनौतियाँ

स्वतंत्रता के पश्चात् के प्रारंभिक वर्षों में अधिकाधिक खाद्यान्न उत्पादन करने तथा वहन करने योग्य मूल्य पर उसके प्रभावी वितरण पर जोर दिया गया। आज देश में 3 करोड़ टन के खाद्यान्न का सुरक्षित भंडार है। अनुप्रयुक्त शोध, उन्नत तकनीकी, पर्याप्त प्रणाली के माध्यम से उचित वितरण तथा संतुलित कृषि उत्पाद मूल्य के सहारे उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि की जा सकी है। इसके साथ-साथ कई रोजगार सृजन कार्यक्रमों का भी इस उपलब्धि में योगदान है। इनमें काम के बदले अनाज कार्यक्रम (FWP) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (NRRP), स्वरोजगार हेतु ग्रामीण युवकों को प्रशिक्षण (TRYSEM), जवाहर रोजगार योजना (JRY) एकीकृत बाल विकास योजना (ICDS), ग्रामीण महिला एवं बाल विकास (DWCRA), क्षेत्र विकास के विशेष कार्यक्रम जैसे मरूभूमि विकास कार्यक्रम (DDP) एगहन कृषि विकास कार्यक्रम (IADP), कमांड क्षेत्र विकास कार्यक्रम (CADP) प्रमुख हैं।

इन उपलब्धियों के बावजूद भारत की खाद्य सुरक्षा को चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है क्योंकि भारत की जनसंख्या प्रतिवर्ष 1.8 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है। जनसंख्या की इस द्रुत वृद्धि के अनुरूप खाद्यान्न का उत्पादन हो सका। इसका मुख्य कारण हरित क्रांति के पश्चात् भारतीय कृषि में विज्ञान एवं तकनीकी के व्यापक उपयोग से अपेक्षित उत्पादन किया जा सका। किंतु अब हरित क्रांति का असर कम होते जा रहा है। ऐसा अनुमान किया जा रहा है कि वर्ष 2030 तक 4 करोड़

टन खाद्यान्न का आयात करना पड़ेगा। एसी शर्मनाक स्थिति स्वतंत्रता पूर्व के भारत में भी नहीं थी। परिस्थिति को ठीक से समझने के लिए वर्तमान खाद्यान्न की स्थिति तथा वर्ष 2030 तक की अनुमानित आवश्यकता पर ध्यान देना आवश्यक है।

## अंकुश एवं अवसर

अब निवेश में कमी के कारण कमजोर आधारभूत संरचना में कई अंकुश उत्पन्न हुए हैं, किंतु इससे अवसरों में बढ़ोतरी आयी है। भारत में अधिकांश फसल उत्पादन विश्व के औसत से कम है। इससे इस बात के संकेत मिलते हैं कि देश में फसल उत्पादन की क्षमता बढ़यी जाए। यदि सही पद्धति अपनायी जाए तो विशेषज्ञों की राय में उपलब्ध संसाधन से देश में 25 करोड़ टन अतिरिक्त अन्न का उत्पादन किया जा सकता है। इसके लिए निवेश में वृद्धि उत्पादकता में बढ़ोतरी, उचित जल प्रबंधन, पर्यावरण अनुकूल फसल पद्धति, मिट्टी की गुणवत्ता में वृद्धि, संरक्षित क्षेत्र की उत्पादकता बढ़ाना होगा। जिन क्षेत्रों की संभावनाओं का पूर्ण दोहन नहीं किया गया है, उनके दोहन के लिए उपयुक्त प्रबंधन पद्धति अपनानी चाहिए।

भारत के पूर्वी भाग में उत्पादकता बहुत कम है। अतएव इस क्षेत्र की संभावना के दोहन की विपुल संभावना है। हमारे कृषि क्षेत्र का 67 प्रतिशत अर्थात् 9 करोड़ 70 लाख हेक्टेयर भूमि वर्षा जल पर आश्रित है। इस क्षेत्र से आबादी के 40 प्रतिशत का भरण-पोषण होता है तथा देश के खाद्यान्न उत्पादन का 44 प्रतिशत इस क्षेत्र से मिलता है। वर्तमान 7 करोड़ 20 लाख हेक्टेयर क्षेत्र की सिंचाई के स्थान पर यदि 1 करोड़ 56 लाख हेक्टेयर क्षेत्र की सिंचाई की जाती है तो माना जाता है कि आधुनिक तकनीक का उपयोग करने शुष्क प्रदेश के प्रति प्रति हेक्टेयर 0.7-0.8 टन उत्पादन को दुगुना 1.5-1.75 टन हेक्टेयर किया जा सकता है। यदि वैज्ञानिक रूप से प्रबंधन किया जाए तो वर्षा जल आधारित कृषि उत्पाद में वृद्धि करके खाद्यान्न सुरक्षा प्राप्त किया जा सकता है और हरित क्रांति को सदाबहार हरित क्रांति में परिवर्तित किया जा सकता है। इस दिशा में मरूभूमि को हरित क्षेत्र में बदलने का प्रयास लोकप्रिय अभियान का रूप लेते जा रहा है।

सिंचित क्षेत्र की उत्पादकता में भी लगातार कमी आती जा रही है और यह द्वितीय पीढ़ी की समस्या के कारण खतरनाक स्थिति में है। वर्तमान तकनीकी से सिंचित भूमि के प्रति हेक्टेयर उत्पादन को 2.2 टन से बढ़ाकर 3.5-4 टन प्रति हेक्टेयर किया जा सकता है। संभावित प्रायोगिक उत्पाद और वास्तविक उत्पाद के बीच काफी अंतर है। इससे आशावादी संभावना कायम होती है। इस अंतर को प्रचारित करना चाहिए तथा इसे पाटने का प्रयास करना चाहिए। इसे सरकारी सहायता तथा आधारभूत संरचना की तकनीकी के सही प्रसार द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। अधिकाधिक क्षेत्र को कृषि के लिए अनुकूल बनाकर खाद्यान्न की समस्या को वृहत् पैमाने पर हल किया जा सकता है। योजना निर्माताओं के अनुसार आने वाले वर्षों में कृषि क्षेत्र में 1 करोड़ 70 लाख हेक्टेयर क्षेत्र के वृद्धि होने की संभावना है। यह एक शुभ संकेत है।

शुद्ध कृषि उत्पाद तथ कुल उत्पाद में भारी अंतर है। गलत कटाई के कारण फसल उत्पाद के 10-20 प्रतिशत तक नष्ट हो जाते हैं। अंशतः क्षतिग्रस्त होने वाले फसलों के 10 प्रतिशत की क्षति होती है। किंतु फल, सब्जी और पशु उत्पाद जैसे क्षतिग्रस्त होने वाले पदार्थों का 20 प्रतिशत नष्ट होता है। वर्ष 1996-97 के दौरान कुल 6 करोड़ 85 लाख 5 हजार टन कृषि उत्पाद का नुकसान हुआ जिनकी कीमत 82,325 करोड़ रुपये थी। अतएव ऐसी आशा की जाती है कि इस नुकसान को कम करने के लिए रणनीति बने ताकि खाद्यान्न में वृद्धि हो सके।

## खाद्य सुरक्षा हेतु संचालित योजनायें एवं खाद्य सब्सिडी पर व्यय

तलिका में दिये गये विवरण से स्पष्ट है कि देश में सभी स्तरों पर खाद्य सुरक्षा की व्यवस्था और कुपोषण से मुक्ति दिलाने जैसे अहम उद्देश्य को लेकर पिछले कई वर्षों में सरकार द्वारा विभिन्न कार्यक्रम और योजनाओं को संचालित किया गया है। इस दिशा में सरकार द्वारा विशेष रूप से 0 से 6 वर्ष आयुवर्ग के बच्चों तथा गर्भवती और धात्री माताओं को कुपोषण से मुक्ति दिलाने हेतु समन्वित बाल विकास योजना को देश के विभिन्न भागों में काफी पहले से वर्ष 1975 से संचालित किया जा रहा है।

इस योजना के अंतर्गत सरकार पोषण कार्यक्रम के तहत बच्चों के उचित पोषण तथा उनसे संबंधित गरीब परिवारों को सस्ती दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गयी है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत ऐसे परिवारों को बी.पी.एल. दरों पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से खाद्यान्न दिया जाता है। सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों को पर्याप्त पोषण दिये जाने हेतु मध्याह्न भोजन योजना (1995-96) में उन्हें प्रतिमाह निःशुल्क रूप से 3 किलो खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाता है। वर्तमान में इस व्यवस्था के अंतर्गत देश भर में 8 करोड़ से अधिक बच्चे लाभान्वित हो रहे हैं।

सोशल सेफ्टीनेट योजना (1995-96) के माध्यम से देश भर में संचालित आंगनवाड़ी केंद्रों द्वारा बच्चों हेतु पोषक आहार प्रदान किये जाने की व्यवस्था की गयी है। देश भर में विभिन्न प्रदेश सरकारों द्वारा चयनित गरीबों को आधी दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराने की लक्षित खाद्यान्न प्रणाली वितरण प्रणाली (1997-98) की महत्वाकांक्षी योजना के अंतर्गत देश भर में फैली 4.62 लाख सार्वजनिक वितरण की दुकानों से 30 हजार करोड़ रुपये मूल्य का अनाज सरकार द्वारा आधी दरों पर उपलब्ध कराया जा रहा है। इसके अंतर्गत पूर्व में प्रति परिवार 10 किलो खाद्यान्न प्रतिमाह दिया जाता था, लेकिन जुलाई 2001 में केंद्र सरकार द्वारा लिये गये एक महत्वपूर्ण निर्णय के अनुसार यह अब 25 किलोग्राम प्रति परिवार प्रतिमाह उपलब्ध कराया जाता है।

निराश्रित वृद्धों के लिये प्रतिमाह 10 किलो खाद्यान्न प्रतिव्यक्ति के हिसाब से निःशुल्क दिये जाने की केंद्र सरकार द्वारा संचालित अन्नपूर्णा योजना (1999-2000) वृद्धों को खाद्यान्न सुरक्षा प्रदान करने का एक अनुकरणीय प्रयास कहा जा सकता है। इस योजना के अंतर्गत राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन से अनाच्छादित व्यक्तियों को लाभान्वित किया जाता है। देश भर में अत्यंत गरीब परिवारों की पहचान कर उन्हें अत्यंत सस्ती दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराने के पुनीत उद्देश्य से अन्त्योदय अन्न योजना (2000-2001) सरकार द्वारा संचालित की जा रही है।

इस योजना के अंतर्गत 1 करोड़ चयनित गरीब परिवारों को प्रति परिवार 25 किलोग्राम गेहूं 2 रुपये प्रति किलोग्राम या चावल 3 रुपये प्रति किलोग्राम की अति न्यून दरों पर उपलब्ध कराया जाता है। सूखा तथा बाढ़ से प्रभावित क्षेत्रों के लोगों हेतु खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से केंद्र सरकार द्वारा राज्यों को 24.42 लाख टन निःशुल्क खाद्यान्न भी इस आशय से दिया गया है कि वे काम के बदले अनाज योजना (2001-02) के अंतर्गत इसका उपयोग करें।

## खाद्य सुरक्षा के संबंध में योजना आयोग की रिपोर्ट

भारत सरकार द्वारा पिछले कई वर्षों से खाद्य सुरक्षा व्यवस्था को अधिक मजबूत बनाने के लिये इस मद में अनुदान की मात्रा को अबाध गति से बढ़ाया जा रहा है, लेकिन बढ़ते हुये अनुदानों के

बावजूद यह न केवल पूरी तरह अप्रभावी और निष्फल रही है बल्कि किसानों के लिये घातक भी सिद्ध हो रही है। पिछले कई वर्षों से देश में खाद्यान्नों के उत्पादन में कोई विशेष वृद्धि न होने के बावजूद भी अनाजों के बाजारों में मन्दी का वातावरण बना हुआ है। इसी कारण वर्तमान में सरकारी गोदामों में खाद्यान्न भंडार की मात्रा बढ़ते-बढ़ते 6.09 करोड़ टन (3.76 करोड़ टन गेहूँ तथा 2.3 करोड़ टन चावल) तक पहुँच गयी है।

यह मात्रा बफर स्टॉक की निर्धारित सीमा से 4.36 करोड़ टन अधिक है लेकिन राजस्थान, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश जैसे कई राज्यों में भुखमरी और कुपोषण से लाखों व्यक्ति प्रतिवर्ष अकाल मौत का शिकार हो रहे हैं। उल्लेखनीय है कि इसमें से काफी मात्रा में खाद्यान्न तो सात वर्ष तक पुराना है जो अब खाने योग्य भी नहीं रह गया है। दूसरे अधिक दिनों तक भंडारण किये जाने के कारण इसका मूल्य भी काफी बढ़ जाता है क्योंकि वर्तमान में इसके भंडारण और सुरक्षा पर लगभग 2 रूपए प्रति किलो प्रतिवर्ष तक का सरकार को खर्च करना पड़ रहा है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिये दिये जाने वाले सरकारी अनुदानों और उसकी उपयोगिता के संबंध में योजना आयोग द्वारा हाल ही में प्रकाशित रिपोर्ट के अध्ययन से स्थिति की वास्तविकता का आकलन किया जा सकता है। योजना आयोग की रिपोर्ट के प्रमुख बिन्दु निम्नवत् हैं:

1. सार्वजनिक वितरण के लिये दिया जाने वाला अनुदान जो वर्ष 1990-91 में 2,450 करोड़ रूपये था, वह वर्ष 1999-2000 तक बढ़कर 9,200 करोड़ हो गया लेकिन इसकी उपयोगिता बढ़ने के बजाय घटी है।
2. सार्वजनिक वितरण प्रणाली माध्यम से वितरित कुल गेहूँ, चावल और चीनी में से क्रमशः 36, 31 और 23 प्रतिशत भाग लक्ष्य तक पहुँचने के पहले ही गायब हो जाता है।
3. सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा वितरित किये जाने वाले खाद्यान्नों से गरीब राज्यों विशेषकर उत्तर प्रदेश, बिहार और असम के गरीबों के पोषण स्तर में कोई सुधार नहीं हुआ है।
4. 90 के दशक में खाद्यान्नों का उत्पादन 17.6 करोड़ टन से बढ़कर 20.6 करोड़ टन तक हो जाने के बावजूद प्रतिव्यक्ति खाद्यान्नों की खपत में 0.28 प्रतिशत की गिरावट आयी है जबकि 80 के दशक में इसमें 1.20 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी।
5. गरीबी निवारण कार्यक्रम पर केंद्र सरकार प्रतिवर्ष लगभग 35 हजार करोड़ रूपया खर्च करती है। यदि यह राशि सीधे गरीब परिवारों में बांटी जाये तो वे अपने परिवारों के लिये 3 किलोग्राम अनाज प्रतिदिन 7.50 रूपये प्रति किलोग्राम की दर से खरीद कर दरिद्रता से मुक्ति पा सकते हैं।

योजना आयोग की रिपोर्ट में उल्लिखित उपरोक्त बिन्दुओं के परिप्रेक्ष्य में यह उल्लेख करना भी समीचीन होगा कि अप्रैल, 2001 में योजना आयोग द्वारा यू.एन. विश्व खाद्य कार्यक्रम तथा एम.एस. स्वामीनाथन शोध संस्थान के सहयोग से एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें हमारे प्रधानमंत्री द्वारा हंगर फ्री इंडिया यानि कि भारत को भुखमरी से मुक्त करना के लिये वर्ष 2007 तक की सीमा रेखा तय की गयी और इस अवसर पर प्रधानमंत्री द्वारा ग्रामीण भारत की खाद्य असुरक्षा एटलस तथा समुचित विकास हेतु दक्षिणी एशिया में खाद्य सहायता नामक दो पुस्तकों का विमोचन भी किया गया जिनमें इस बात के स्पष्ट आंकड़े हैं कि भारत में लगभग 26 करोड़ लोग अभी भी खाद्य असुरक्षा से प्रभावित हैं जिनमें से 15 वर्ष से 50 वर्ष की आयु की आयु की लगभग आधी महिलायें तथा लगभग तीन चौथाई बच्चे कुपोषण का शिकार हैं। इन स्थितियों से निपटने के लिये क्या रणनीति होगी?

## खाद्य सुरक्षा के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय का मत एवं निर्देश

पिछले कुछ दिनों से देश में पर्याप्त खाद्यान्न भंडारण के बावजूद कई राज्यों में भुखमरी की स्थिति से चिन्तित कुछ लोगों द्वारा सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा भी खटखटाया गया, जिससे देश में उपलब्ध खाद्यान्न को बर्बाद होने से भी बचाने का रास्ता निकाला जा सके तथा भुखमरी से पीड़ित लोगों के लिये समुचित मात्रा में खाद्यान्न की उपलब्धता कराना संभव हो सके। पीपुल्स यूनिन फॉर सिविल लिबर्टीज द्वारा दायर एक याचिका पर 20 अगस्त, 2001 को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस स्थिति में सुधार लाने हेतु सरकार को कुछ निर्देश भी जारी किये गये। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा देश के विभिन्न राज्यों में भुखमरी की स्थिति पर कुछ टिप्पणियां भी की गयी हैं।

इन प्रमुख टिप्पणियों और निर्देशों का विवरण संक्षेप में निम्न प्रकार है-

1. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कहा गया है कि यह सरकार की जिम्मेदारी है कि वजह यह सुनिश्चित करे कि सभी भूखों को भोजन मिले तथा अकारण खाद्यान्नों की बर्बादी नही हो।
2. सर्वोच्च न्यायालय का मत रहा है कि सरकार को सरकार को भुखमरी से पीड़ित लोगों को यदि खाद्यान्न मुफ्त में भी देना पड़े तो दिया जाना चाहिये क्योंकि क्रय साधन न होने के कारण किसी को भूखों मरने के लिये नही छोड़ा जाना चाहिये।
3. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह टिप्पणी की गयी कि भारतीय खाद्य निगम के भंडारों में खाद्यान्न की बहुतायत के बावजूद देश के कई राज्यों में भुखमरी से हो रही मौतें अत्यंत चिंता का विषय है।
4. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सरकार को निर्देश जारी किये गये कि भुखमरी की स्थिति का सामना कर रहे क्षेत्रों में बंद पड़ी राशन की दुकानों को एक सप्ताह के अंदर खोलना सुनिश्चित किया जाय।
5. न्यायालय द्वारा यह भी निर्देश दिया गया कि अकाल संबंधी कानूनों के निर्देशों के अनुरूप सरकार की प्राथमिकता, वृद्धों विकलांगों, अनाथ तथा अभावग्रस्त व्यक्तियों, गर्भवती तथा दूध पिलाने की व्यवस्था होनी चाहिये।
6. खाद्यान्नों के अभाव की बनावटी स्थिति पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कहा गया कि देश में पर्याप्त खाद्यान्न होने के बावजूद नौकरशाही द्वारा अभाव की स्थिति उत्पन्न किया जाना सरकार के लिये शर्मनाक है।
7. न्यायालय ने खाद्यान्नों के वितरण के लिये राज्यों तथा केंद्र सरकार के मध्य आवश्यक तंत्र विकसित करने के लिये निर्देश जारी किये गये। इस कार्य हेतु दो सप्ताह की समय सीमा का भी निर्धारण किया गया।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गयी टिप्पणिया के संदर्भ में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वर्तमान खाद्य असुरक्षा के संबंध में वास्तविकता यह है कि देश में व्यवस्थापिका की अक्षमता तथा वितरण प्रणाली में दोष के कारण एक तरफ खाद्यान्नों का भंडारण समुचित ढंग से नही हो पाने के कारण लाखों टन गेहूँ और चावल खुले आसमान के नीचे सड़ रहे है वहीं देश के अनेक भागों में लोग भुखमरी और कुपोषण के शिकार हो रहे हैं। इस स्थिति से निपटने के लिये तुरंत उपाय किये जाने के साथ-साथ एक दीर्घकालीन रणनीति भी तय किये जाने की आवश्यकता है ताकि भविष्य में ऐसी स्थितियाँ पैदा नही हों।

## सुधारात्मक उपाय

### पर्यावरण अनुकूल कृषि तकनीकी

जनसंख्या वृद्धि की दर से खाद्यान्न उत्पादन की दर अधिक करके आदर्श खाद्यान्न उपलब्धता प्राप्त की जा सकती है। खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की चिंता को देखते हुए पर्यावरण अनुकूल तकनीकी का प्रसार आवश्यक हो गया है। इसके लिए पारंपरिक तकनीकी के साथ आणविक, जैव, अंतरिक्ष, दूर संवेदी, भू-स्थैतिकी, पद्धति विश्लेषण तथा सूचना प्रौद्योगिकी का सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय रूप से उचित उपयोग होनी चाहिए। सीमित भूमि, जल तथा ऊर्जा स्रोतों के उपयोग से तथा नई पर्यावरण अनुकूल तकनीकी की मदद से अधिक अन्न और कृषि उत्पाद प्राप्त किया जा सकता है। ऐसा हमारे प्राकृतिक संसाधनों को क्षति पहुंचाए बिना धारणीय पद्धति से किया जा सकता है। आने वाले वर्षों में कृषि विकास में उत्पादन बढ़ाने तथा प्राकृतिक संसाधन के दोहरे उद्देश्य की पूर्ति की दृष्टि से प्राकृतिक संसाधन प्रबंधक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

### भारत एवं विविधतापूर्ण कृषि

भारत में 70 प्रतिशत से अधिक आबादी कृषि एवं पशुपालन, दुग्ध उद्योग, मुर्गीपालन, वानिकी, मत्स्य पालन जैसे संबद्ध गतिविधियों तथा कृषि आधारित उद्योगों पर जीविकोपार्जन के लिए निर्भर है। अतएव खाद्यान्न एवं पोषण सुरक्षा के लिए इस क्षेत्र का उत्थान करना आवश्यक है। उत्पादकता, ग्रामीण आमदनी तथा रोजगार के अवसर में वृद्धि करने के लिए गहन एवं विविधतापूर्ण कृषि पद्धति अपनाने की आवश्यकता है। यह समय की मांग है कि प्रति इकाई उपयुक्त संसाधन से अत्यधिक विविधतापूर्ण उत्पाद प्राप्त किया जाए। हमारे पास अन्य विकल्प मौजूद नहीं हैं। हम बढ़ रही जनसंख्या के लिए खाद्यान्न का आयात करने में भी सक्षम नहीं हैं क्योंकि विकसित देश पर्यावरणीय संकट से बचने के लिए अपने कृषि उत्पाद को बढ़ाने के लिए नए तरीके ढूँढने से बचना चाहते हैं। आयात का प्रतिकूल सामाजिक-आर्थिक असर पड़ता है। अतएव एक मात्र विकल्प है कि प्रति इकाई भूमि, जल, ऊर्जा, श्रम तथा पूंजी में उत्पादकता में वृद्धि की जाए।

### कटाई बाद प्रबंधन

कटाई के बाद दो बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। संरक्षण एवं प्रसंस्करण तकनीकी की मदद से कृषि उत्पाद को क्षतिग्रस्त होने से बचाया जाए तथा उसके मूल्य में संवर्द्धन का प्रयास किया जाए। उत्पादन तकनीकी और कटाई बाद तकनीकी के बीच समन्वय के अभाव में सुखाने, प्रसंस्कृत करने तथा भंडारण के दौरान उत्पाद क्षतिग्रस्त होता है। क्षतिग्रस्त होने योग्य पदार्थ फल, सब्जी इत्यादि पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है। वर्तमान और भविष्य के परिदृश्यों के विश्लेषण को कम करने के लिए तकनीकी में दोष तथा तकनीकी के विकास, सुरक्षित भंडारण तथा परिवहन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इससे सस्ते दर पर, खाद्यान्न की आपूर्ति हो सकती है। कटाई बाद फसल को क्षतिग्रस्त होने से बचाने के लिए तथ मूल्य संवर्द्धन के लिए कटाई बाद प्रबंधन पद्धति को सुदृढ़ तथा सरल बनाने हेतु हर संभव प्रयास करना चाहिए।

### सरकार की नीति

भविष्य के खाद्य एवं पोषण असुरक्षा से निबटने के लिए सरकार की इच्छाशक्ति, नीतिगत सहयोग, उचित मूल्य प्रोत्साहन, बेहतर संस्थागत आधारभूत संरचना, तकनीकी हस्तांतरण के लिए

समन्वय, निरीक्षण एवं मूल्यांकन के बीच तालमेल की अत्यधिक आवश्यकता है। इसके साथ ही इन क्षेत्रों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

प्रोटीन, कैलोरी कुपोषण को दूर करने के लिए लक्ष्य आधारित जन वितरण प्रणाली को शीघ्रता से उचित रीतिपूर्वक कार्यान्वित करने की आवश्यकता है। लक्ष्य आधारित जन वितरण प्रणाली में गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रहे लोगों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए तथा संपन्न लोगों को इसमें सब्सिडी नहीं दी जानी चाहिए। वास्तविक रूप में जन वितरण प्रणाली के माध्यम से न सिर्फ कम खाद्यान्न वितरित किया जाता है अपितु अन्न खाद्यान्न की गुणवत्ता भी बहुत कम रहती है।

## निष्कर्ष

चूंकि खाद्यान्न सुरक्षा चुनौती आर्थिक, सामाजिक तथा पारिस्थितिकी प्रकृति भी है। अतएव खाद्यान्न उपलब्धता सिर्फ आर्थिक दृष्टि से ही न हो अपितु आर्थिक, सामाजिक एवं पारिस्थितिकी रूप से उचित एवं धारणीय कृषि पद्धति पर आधारित होना चाहिए। खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के लिए शोध पर बल दिया जाना चाहिए। गरीबी उन्मूलन, पोषण आधारित कृषि उत्पादन तथा बाजार और व्यापार में संवर्द्धन के लिए रणनीति पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

## संदर्भ-सूची

1. ग्रामीण विकास मंत्रालय रिपोर्ट ।
2. योजना।
3. भारत का भूगोल।
4. सर्वे ऑफ इन्डिया।
5. दैनिक जागरण।
6. राष्ट्रीय सहारा।
7. भूगोल, आर. एल. सिंह।
8. कुरुक्षेत्र।

# धर्म की अवधारणा का विकास

डॉ० वीरेन्द्र कुमार सिंह

एम०ए० ( विश्वविद्यालय टॉपर ), पीएच०डी०, नेट ( यूजीसी ), देवघर

सभ्यता के आदिम काल से ही सभी सभ्य देशों के साथ-साथ असभ्य समाज में भी धर्म और उसके कृत्यों का किसी न किसी रूप में प्रचलन रहा है। कई स्थलों पर धर्म के साथ दर्शन जुड़ा हुआ है। पश्चिमी और भारतीय चिन्तन ने इसके सैद्धांतिक और व्यावहारिक रूप पर पर्याप्त चिन्तन मनन किया है। धर्म वस्तुतः मूलरूप से एक रचनात्मक उदात्तवृत्ति है। धर्म किसी शाश्वत सत्य आदर्श के प्रकाश में जीवन को बदलने का प्रयास है, यह आदर्श कहीं बाहर से नहीं आता वरन् इसे अन्दर से ही पाना पड़ता है। सामान्य भाषा में धर्म शब्द का प्रयोग कई अर्थों में किया गया है, यथा-स्वभाव, कर्तव्य, गुण, सत्कर्म, सत्य, ईमान, सम्प्रदाय, कानून, पुण्य इत्यादि। 'धर्म' शब्द के अनेक अर्थ प्रचलित होने के कारण आज आम आदमी धर्म के सम्बन्ध में न तो कोई विचारशील मनोवृत्ति बना पाता है और न ही इसकी आवश्यकता प्रतीत होती है। धर्म शब्द का अर्थ वस्तुतः कर्तव्य सत्कार्य या गुण होता है। धर्म 'धृ' धातु से बना है जिसका अर्थ होता है धारण करना। अर्थात् वह जो धारण करता है या किसी वस्तु का अस्तित्व बनाये रखता है वही धर्म है। धर्म किसी व्यक्ति का नहीं वरन् संपूर्ण विश्व का अधिष्ठान है।

भारतीय संस्कृति में धर्म को इतना अधिक महत्व इसलिए दिया गया है कि यह धर्म समाज में शान्ति, सुव्यवस्था तथा स्थायित्व बनाये रखता है। धर्म एक प्रकार की सामाजिक पूर्णता का प्रयास है, यह मानव समाज का अत्यन्त आवश्यक तत्त्व है। धर्म से अलगाव का अर्थ है सामाजिक व्यवस्था को अस्त-व्यस्त करना। जहाँ तक धर्म की अवधारणा के विकास का सवाल है उसे कुछ इस प्रकार उजागर किया जा सकता है।

## वैदिक साहित्य में धर्म

वैदिक साहित्य में धर्म की उत्पत्ति भय से मानी गई है। ऋग्वेद में धर्म और धर्मन् का उल्लेख मिलता है जो कहीं-कहीं व्रत और यज्ञ के लिए प्रयुक्त हुआ है। यज्ञ संबंधी कृत्य पूर्व काल में धर्म के रूप में या धर्म यज्ञ के रूप में था। ऋतु की तरह धर्मन् भी सृष्टि के सभी पक्षों के लिए प्रयुक्त होता है। धर्मन् का अर्थ धारक और ध्यान दोनों होता है। पुरुषसूक्त में बताया गया है कि देवताओं में यव के द्वारा यज्ञ किया। इसी को प्रथम आदेश धर्म कहा जाता है। धर्मन् के अनुसार यज्ञाग्नि को प्रज्वलित किया जाता है और धार्मिक नर-नारी अपत्यों के अनुसार अपनी वृद्धि करते हैं। यजुर्वेद में भी धर्म, धर्मन्, धर्मणा और धर्माय रूप देखने को मिलता है। अथर्ववेद में भी धर्म का प्रयोग धारण के अर्थ में किया गया है। इसमें भी परंपरागत आचरण हो धर्म बतलाया गया है।

## ब्राह्मण ग्रन्थों में धर्म

ब्राह्मण साहित्य में धर्म शब्द का प्रयोग धार्मिक अनुष्ठान तथा व्यवहार के लिए किया गया है। ब्राह्मणकालीन धर्म भी ऋग्वैदिक यज्ञ-यज्ञादि कार्यों से संबंधित था, किन्तु इन ग्रंथों में यज्ञ को ही

सभी वस्तुओं का उत्पत्ति केन्द्र कहा गया है। इसमें यज्ञीय कृत्यों को ऋत से संबंधित किया गया है तथा देवताओं को संसार सम्बन्धी भौतिक कार्यों का संरक्षक एवं निरीक्षक बतलाया गया है। ऐतरेय ब्राह्मण में राजा को धर्मरक्षक और धर्माध्यक्ष कहा गया है। शतपथ ब्राह्मण में राजा को धर्मज्ञाता, धारणकर्ता तथा धर्म का पालन करने वाला बतलाया गया है। यानि इन साहित्यों में धर्म का तात्पर्य विधि से है। धर्म यज्ञादि रूप से प्रचलित था एवं इसका संबंध राज्य से भी था।

## आरण्यक साहित्य के धर्म

तैत्तिरीय आरण्यक में सत्य, तपस, यज्ञ और संपूर्ण न्याय के द्वारा अमृतत्व, प्राप्त करने का वर्णन है। इसमें बतलाया गया है कि धर्म जगत् की प्रतिष्ठा एवं स्थायित्व का कारण है। सभी कुछ धर्म स्थित रहने के कारण धर्म सभी से श्रेष्ठ है।

## उपनिषदों में धर्म

वृहदारण्यक उपनिषद् में बतलाया गया है कि धर्म का वैदिक अर्थ प्रायः शीलपरक था। धर्म को राजा का राजा कहा गया है। उपनिषदों में बताया गया है कि धर्म से ऊपर कोई अन्य नहीं है। धर्म शाश्वत नियामक है जिस पर प्रकृति के व्यापार तथा सामाजिक कल्याण एवं न्याय आश्रित है। यानि उपनिषदों में धर्म के नैतिक स्वरूप पर विशेष बल दिया गया है। ईश उपनिषद् में सत्य धर्म को बताते हुए उसके माध्यम से ब्रह्म की प्राप्ति होना बतलाया गया है। तैत्तिरीय उपनिषद् के अनुसार सत्य भाषण ही धर्म है। श्वेताश्वर उपनिषद् में धर्म में ब्रह्म की प्राप्ति को संभव बताया गया है।

## धर्मसूत्रों में धर्म

धर्मसूत्रों में वर्णाश्रम का क्रमबद्ध विवेचन है। इसमें धर्म की भावना व्यापक रूप में देखने को मिलती है जिसका सम्बन्ध मानव के विस्तृत कर्तव्यों से है। धर्मसूत्रों (गौतम धर्मसूत्र, आपस्तम्ब धर्मसूत्र, बौधायन धर्मसूत्र और विष्णुधर्मसूत्र) का वर्ण्य विषय ही वर्णाश्रम धर्म, राजधर्म, स्त्रीधर्म, जाति धर्म एवं कुल धर्म है। इन सूत्रों में दस्तकार, व्यापारी और अन्य वर्गों के कर्तव्यों का वर्णन है। साथ ही सत्य, अहिंसा तथा श्रद्धा आदि नैतिक सद्गुणों के पालन का भी आदेश देखने को मिलता है।

## कौटिल्य के अर्थशास्त्र में धर्म

अर्थशास्त्र का विषय ही नीति का व्यावहारिक संबंध है। इसमें वर्णाश्रम धर्म, आर्य मर्यादा अर्थात् साधारण धर्म तथा श्रुति विहित नियमों के द्वारा संसार के सुखी होने का आदर्श मिलता है। इसमें बताया गया है राजा हो धर्म परायण होना चाहिए क्योंकि वह धर्म का रक्षक है, धर्म की रक्षा करना राजा का परम धर्म माना गया है।

## स्मृतियों में धर्म

धर्मसूत्रों में जो धर्म का निरूपण किया गया है। उसकी विशद् व्याख्या स्मृतियों में की गई है। मनुस्मृति में चारों वर्णों के धर्म और उनके आचार आश्रम धर्म, विवाह तथा अन्य संस्कार, पंचमहायज्ञ, श्राद्ध, भक्ष्य विचार, स्त्री धर्म, राजधर्म, आपद् धर्म, प्रायश्चित्त विधि एवं कर्मों के गुण-दोष इत्यादि का विवेचन हुआ है। साथ ही इसमें जाति, श्रेणी कुल, गण एवं पाखंडियों के भी धर्म का उल्लेख किया गया है। धर्मशास्त्रों में धर्म का तात्पर्य किसी संप्रदाय या मत से नहीं है बल्कि जीवन की एक विशिष्ट आचार पद्धति से है, जिसके द्वारा मनुष्य वैयक्तिक एवं समाज के सदस्य के रूप में अपने

कर्तव्यों का पालन करता हुआ अभीप्सित लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। अगर स्मृति शास्त्र को देखा जाए तो इसमें भी कहीं-कहीं निःश्रेयस धर्म की प्रधानता परिलक्षित होती है।

## महाकाव्यों में धर्म

महाकाव्यों में रामायण में धर्म का फलवादी रूप देखने को मिलता है। इसमें वर्णाश्रम और राजधर्म का निरूपण किया गया है। मनुष्य का स्वधर्म के पालन द्वारा मानव कल्याण को आदर्श स्वीकार किया गया है तथा नैतिक गुणों के पालन पर विशेष बल दिया गया है। इसमें नियतिवाद के स्थान पर कर्मवाद की स्थापना की गई है। स्त्री, भातृ, पुत्र और मित्र के धर्म को निरूपित करते हुए इसमें धर्म को साक्षात् देवता के रूप में वर्णित किया गया है। यहाँ तक कि राम को शरीरधारी धर्म कहा गया है। महाभारत को अगर देखा जाए तो महर्षि व्यास, युधिष्ठिर, कृष्ण, भीष्म एवं अनेक ऋषिगण द्वारा धर्म के स्वरूप पर व्याख्या की गई है। इन मनीषियों द्वारा अभिव्यंजित धर्म का एक समन्वित स्वरूप न केवल भारत वरन् मानवजगत् का आदर्श होने के लिए स्वपर्याप्त है। महाभारत में धर्म के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन मिलता है जैसे राजधर्म, प्रजाधर्म, जाति धर्म, कुल धर्म, वर्णाश्रम धर्म, दान धर्म, आपद् धर्म, मोक्ष धर्म, स्त्री धर्म इत्यादि। इसमें धर्म को मानव के पूर्ण सर्वांगीण उत्कर्ष का साधन बताया गया है। महाभारत में धर्म का स्वरूप गत्यात्मक होने के कारण सम्यक् धर्म को युग सत्य के अनुकूल एवं उत्कर्षकारी बताया गया है।

भगवद् गीता में वर्ण, धर्म, आचार एवं नैतिक गुणों का वर्णन है और साथ ही कर्म को व्यक्ति का धर्म बताया गया है। कर्म के अन्तर्गत वाचिक तथा मानसिक सभी कार्य समाविष्ट हैं। इसमें निष्काम कर्म की वकालत की गई है, जो अनाशक्त भाव से धर्माचरण पर बल देता है। गीता में कहा भी गया है कि धर्म के उत्थान के लिए भगवान का जन्म होता है। इसमें धर्म के महत्व को प्रगट करते हुए ईश्वर के अवतार के द्वारा उसकी रक्षा का आशावादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है जिसका प्रभाव परवर्ती ग्रंथों में स्पष्ट परिलक्षित होता है।

## पुराणों में धर्म का स्वरूप

पुराणों में बतलाया गया है कि धर्म का विनिश्चय एवं उसकी परिभाषा करना कठिन है। इसमें धर्म को सार्वजनिक नैतिक उपदेशों तथा अनुपालनीय आचार के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया गया है एवं साथ ही साथ धर्म के विविध रूपों और उनकी सूक्ष्मता को भी स्पष्ट किया गया है। इसमें नैतिक गुणों पर विशेष बल देते हुए उन्हें सनातन धर्म की संज्ञा दी गई है, जिसमें अद्रोह, अलोभ, जीवों पर दया, दम, शान्ति, ब्रह्मचर्य, तपस्या, शुद्धता, अक्रोध, क्षमा तथा धैर्य का उल्लेख किया गया है। बाद में इस नैतिक गुणों का विस्तार से वर्णन भागवत पुराण में किया गया है।

## बौद्ध और जैन धर्म

प्राचीन हिन्दू (ब्राह्मण) धर्म में फैली कुरीतियों के विरोध में भारत में गौतम बुद्ध और महावीर ने एक नए धर्म का सूत्रपात किया। इन दोनों ही ने वही कार्य किया जो अरब में मोहम्मद साहब ने, एवं जर्मनी में मार्टिन लूथर ने किया था। बौद्ध साहित्य में धम्म शब्द का प्रयोग बहुत अधिक बार हुआ है जो बौद्ध धर्म के सत्य (सद्धर्म) को व्यक्त करता है। यह शब्द सम्यक् स्वरूप और प्रतिष्ठित परम्पराओं के अनुकूल होने का भाव व्यक्त करता है। जब धर्म में चमत्कार की प्रधानता थी, नीति धर्म पर आधारित थी और धर्म ईश्वर पर, उस समय गौतम बुद्ध ने आत्मा, जगत्, परलोक, पाप, पुण्य, मोक्ष इत्यादि विचारों से ऊपर उठकर एक बौद्धिक धर्म, व्यावहारिक नीतिशास्त्र तथा सादा जीवन के

सिद्धांत को प्रस्तुत किया। जैन धर्म जो ब्राह्मण धर्म के कुछ समतुल्य था, ने बताया जीव, अजीव दो प्रकार के जड़ और चेतन द्रव्य है। जैन धर्म कर्म सिद्धांत पर विश्वास करता है। परन्तु ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं करता है। इन दोनों ही धर्मों ने अपने तत्कालीनसमाज को काफी प्रभावित किया। यद्यपि कालान्तर में इसका भी हास होता गया। किन्तु अगर देखा जाए तो दोनों ही धर्मों ने आडम्बर और कर्मकाण्ड को दरकिनार करते हुए प्रेम, दया और करुणा का संदेश दिया।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज में धर्म का विशेष महत्व है। भारतीय संस्कृति में चिन्तन के आदिकाल से आज तक चार महान क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। पहली बार जब भारत में आर्यों का आगमन हुआ। दूसरी बार गौतम बुद्ध और महावीर के समय में, तीसरी बार इस्लामिक वर्चस्व के समय और चौथी बार 19वीं शताब्दी में बंगाल में। इन सभी समयों में समाज के विकास के साथ-साथ धर्म के स्वरूप का भी विकास हुआ है। पूर्व वैदिक काल में कबीलाई दौर में समाज के विकास के साथ-साथ धर्म के स्वरूप का भी विकास हुआ है। पूर्व वैदिक काल में कबीलाई दौर में समाज के तीन वर्ग प्रमुख थे- ब्रह्म, क्षत्र और विश। उस समय यज्ञ की पद्धति भी अपेक्षाकृत सरल थी। ब्राह्मण ग्रंथों में श्रम विभाजन तथा अन्य कारणों से समाज चार वर्गों- ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में बँट गया। वर्गों का अधिकतर कर्तव्य स्थिर हो गया तथा यज्ञों का विधान भी जटिल हो गया। इसके बाद धर्म के दृष्टिकोण में परिवर्तन के चिह्न देखने को मिलता है। धर्म का यज्ञ से विशिष्ट सम्बन्ध क्रमशः समाप्त होने लगा और धर्म के अन्तर्गत यज्ञ की अपेक्षा नैतिक गुणों पर अधिक बल दिया जाने लगा, जो सामाजिक स्थिरता एवं शान्ति की भावना को प्रदर्शित करता है। इस समय नैतिकता के विकास एवं धर्म के अन्य सभी अन्तर्भूत तत्वों और पहलुओं पर कर्म, पुनर्जन्म एवं मोक्ष संबंधी विचारों का प्रभाव देखने को मिलता है। धर्मशास्त्रों के अनुसार धर्म शब्द का अर्थ केवल पूजा या उपासना से संबंधित नियमों से नहीं है वरन् उसके अन्तर्गत संपूर्ण जीवन को धर्मानुसार व्यतीत करने के लिए नियमों के निरूपण से है।

समकालीन दार्शनिक चिन्तन की पृष्ठभूमि में राजनैतिक सामाजिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्रांति के बीज देखने को मिलता है। यद्यपि यह चिन्तन प्राचीन वेदान्त एवं परंपरा की आधारशिला पर खड़ा है फिर भी चिन्तन से विशिष्ट इसकी अपनी कुछ युगानुकूल प्रवृत्तियाँ भी हैं, जैसे-समन्वयवाद, मानवतावाद, वैज्ञानिकतावाद आदि। समकालीन भारतीय दार्शनिक कुल मिलाकर अपने धार्मिक संज्ञान के अद्वैतवादी तत्वमीमांसा को स्वीकार करते हैं जो शंकर मत से भिन्न है। उन्होंने ईश्वर को ब्रह्म के समकक्ष रखकर अपनी धर्मनिष्ठा को परिलक्षित किया है। धार्मिक अनुभूति के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति का विश्वास एक ऐसे ईश्वर में हो जो पूर्ण व्यक्तित्व का धनी हो और जिसके पास वह दुःख-सुख में तथा समय-असमय प्रार्थना और निवेदन के लिए आ सकें। समकालीन दार्शनिक ईश्वर को सर्वोच्च सत्ता स्वीकार करते हैं और यथार्थता पर बल देते हैं। इनके द्वारा व्यावहारिक जगत् को सत्य माना गया है अतः उनका उपागम जीवन और जगत् के प्रति स्वीकृति का है और इस प्रकार उनके लिए वैयक्तिक दुःख सामाजिक अन्याय, आर्थिक शोषण, राजनैतिक अत्याचार इत्यादि बातें यथार्थ बन गई हैं जिसके विरुद्ध संघर्ष करना मनुष्य का कर्तव्य बनता है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर और महर्षि अरविन्द सिर्फ माया कहकर टालना नहीं चाहते हैं और यही कारण है कि गांधी और विवेकानन्द जहाँ एक ओर दरिन्द्रनारायण की उपासना के लिए सामान्य जन को प्रेरित करते हैं, वहीं रवीन्द्रनाथ और अरविन्द राजनैतिक स्वाधीनता के लिए संघर्षरत दीखते हैं। समस्त समकालीन दार्शनिक मनीषा धर्म के उस स्वरूप का विरोध करती है जो व्यक्ति को सन्यास और वैराग्य की ओर ले जाती है। समकालीन विचारकों का धर्म के प्रति एक रहस्यमय अतिबौद्धिक वृत्ति देखने को मिलती है, साथ ही इनका नैतिक पक्ष पर विशेष बल था और वे ऐसा मानते थे कि सर्वोच्च धार्मिक अनुभूति

के लिए नैतिक आचरण आवश्यक है। इसे गांधी, राधाकृष्णन, दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परम हंस, विवेकानंद रवीन्द्रनाथ ठाकुर और अरविन्द के विचारों में देखा जा सकता है। इन्होंने साथ ही साथ मानवतावाद पर भी जोर दिया है, जिसके अनुसार मनुष्य की सत्ता न केवल विकास का सर्वोत्तम परिणाम है वरन् आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का पात्र है। आधुनिक भारतीय दर्शन ने न केवल धर्म के तत्वमीमांसात्मक और नैतिक पक्ष को ही नये आयाम दिये, वरन् साधना और अनुभूति पक्ष को भी एक नई अभिव्यंजना प्रदान की है। समकालीन चिन्तकों के लिए मोक्षानुभूति वैयक्तिक उपलब्धि न होकर सामूहिक उपलब्धि है। इस संदर्भ में गाँधी और महर्षि अरविन्द का नाम उल्लेखनीय है। इन दोनों को ही यह उम्मीद है कि जब आत्माओं की एकता का सिद्धांत केवल कुछ लोगों के ही आध्यात्मिक अनुभव का विषय न होकर सामूहिक जीवन में प्रवृत्त हो सकेगा और मोक्ष व्यक्तिगत मामला न होकर समस्त अस्तित्व का रूपान्तरण होगा।

इस प्रकार कुल मिलाकर धर्म की अवधारणा का विकास आदिकाल से वर्तमान समय तक होता रहा है जो धर्म संबंधी भारतीय विचारधारा एक विस्तृत आयाम की ओर संकेत करती है। समय के साथ हर वस्तु में परिवर्तन होना स्वाभाविक है। भले ही आज के मानव का दृष्टिकोण धर्म के प्रति काफी भिन्न प्रकार का हो गया हो तथापि आज भी धर्म की आवश्यकता और महत्व है।

# न्यायसूत्र के षोडश पदार्थों का विश्लेषण

सुमन्त कुमार

यू०जी०सी० (नेट), कमलनगर, मिरजानहाट, भागलपुर

भारतीय दर्शन से उन सभी सिद्धान्तों, धारणाओं और विचारों का उद्बोधन होता है, जो भारतवर्ष की प्राचीनता की विशिष्टताओं को रेखांकित करती है तथा दार्शनिक चिन्तन की अवधारणाओं को नव्यता प्रदान करती है। महर्षि गौतम प्रणीत 'न्याय दर्शन' में भी निःश्रेयस अथवा मोक्ष की प्राप्ति के लिए अनेकानेक सिद्धान्तों, पदार्थों तथा तत्त्वों का प्रणयन हुआ है। आचार्य गौतम ने न्याशास्त्रीय 'षोडश' पदार्थों का उल्लेख किया है- 'प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टान्तावयवतर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डाहेत्वाभास-च्छलजातिनिग्रहस्थानां तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसाधिगमः।' अर्थात् 1. प्रमाण, 2. प्रमेय, 3. संशय, 4. प्रयोजन, 5. दृष्टान्त, 6. सिद्धान्त, 7. अवयव, 8. तर्क, 9. निर्माण, 10. बाद, 11. जल्प, 12. वितण्डा, 13. हेत्वाभास, 14. छल, 15. जाति, 16. निग्रहस्थान इन पदार्थों के तत्त्वज्ञान से मोक्ष होता है।

प्रथम पदार्थ 'प्रमाण' है। 'प्र' उपसर्गपूर्वक 'मा' धातु से करण अर्थ में ल्युट् (अन्) प्रत्यय होकर प्रमाण शब्द निष्पन्न होता है। प्रमा के करण को भी प्रमाण कहते हैं - 'प्रमाकरणं प्रमाणम्।' इसके चार भेद बताए गए हैं- 'प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणानि'<sup>1</sup> अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द। 'प्रत्यक्ष की व्युत्पत्ति है- 'प्रतिगतमक्षम्' अथवा 'अक्षस्य प्रतिविषयं वृत्ति' अर्थात् प्रत्येक विषय के साथ इन्द्रिय का स्थित होना। प्रत्यक्ष में किसी पूर्वज्ञान की आवश्यकता नहीं होती। यह ज्ञान दो प्रकार का है - नित्य और अनित्य। अनित्य ज्ञान दो प्रकार का है- सविकल्पक और निर्विकल्पक। सविकल्पक ज्ञान भी दो प्रकार का है- लौकिक और अलौकिक। लौकिक ज्ञान छह प्रकार के होते हैं- पाँच इन्द्रियों से प्राप्त होने वाला तथा छठा मानस। अलौकिक ज्ञान तीन प्रकार के हैं- सामान्य लक्षण, ज्ञान लक्षण और योगज।

'प्रत्यक्ष' प्रमाण का लक्षण है- 'इन्द्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानमव्यपदेश्यमव्यभिचारिव्यवसायात्मकं प्रत्यक्षम्।' अर्थात् इन्द्रिय और अर्थ के सन्निकर्ष से उत्पन्न ऐसा ज्ञान प्रत्यक्ष कहलाता है, जो व्यपदेश्य न हो, व्याभिचारि न हो और निश्चयात्मक हो। यहाँ 'सन्निकर्ष का अर्थ है- 'सम्बन्ध'। आत्मा में प्रत्यक्ष ज्ञान होने के लिए तीन सम्बन्धों की आवश्यकता होती है- आत्मा का मन से, मन का इन्द्रिय से तथा इन्द्रिय का विषय के साथ संयोग आवश्यक है। 'इन्द्रियार्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानम्'<sup>2</sup> में ज्ञान को ही प्रत्यक्ष का साधन कहा गया है। इन्द्रियाँ पाँच हैं- घ्राण, रसन, चक्षु, श्रोत्र और त्वक्। इन इन्द्रियों का अपने-अपने विषयों में सम्बन्ध होता है। विषय और इन्द्रिय का सम्बन्ध अथवा सन्निकर्ष व्यापार कहलाता है, जो छह प्रकार के हैं- संयोग, संयुक्तसमवाय, संयुक्तसमवेतसमवाय, समवाय, समवेतसमवाय तथा विशेषणता अथवा विशेष्यविशेषणभाव सम्बन्ध। किन्तु सभी इन्द्रियार्थसन्निकर्षजन्य ज्ञान प्रत्यक्ष में नहीं आते। अतः इसके तीन विशेषण बताए गए हैं- 'अव्यपदेश्यम्'- व्यपदेश का अर्थ है- शब्द द्वारा किसी अर्थ का बोध कराना। जैसे- जब हम इन्द्रिय के द्वारा वस्तु के साथ सम्बन्ध होने पर ज्ञान प्राप्त करते हैं तो यह प्रत्यक्ष होता है, किन्तु इसे शब्द के द्वारा प्रकट कर दें तो यह शब्द 'ज्ञान' हो

जाएगा। 'अव्यभिचारी'- अन्य पदार्थ में अन्य का बोध हो जाना व्यभिचारी ज्ञान है। यह ज्ञान भ्रामक हो जाता है, क्योंकि इसका बोध हो जाता है। जैसे- अन्धकार में रस्सी को सर्प समझ लेना 'व्यभिचारि' ज्ञान है किन्तु प्रकाश पड़ने पर यह ज्ञान बाधित हो जाता है। 'व्यवसायात्मकम्'- का अर्थ है- क्रिया का पूर्णतः सम्पन्न हो जाना। कुहासे से धुएँ के सन्देह में पड़कर मनुष्य भ्रमित हो जाता है। अतः यह प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं है।

'अनुमान' प्रमाण में परोक्ष वस्तु का ज्ञान होता है। इसका लक्षण है- 'अथ तत्पूर्वकं त्रिविधानुमानं पूर्ववच्छेषवत्सामान्यतो दृष्टं च।'<sup>6</sup> इसमें अनुमान का स्वरूप तथा भेद को निरूपित किया गया है। अनुसार का स्वरूप है- 'तत्पूर्वकम्'। तत् शब्द यहाँ लिंग और लिंगि अर्थात् साधन और साध्य के बीच स्थित स्वाभाविक सम्बन्ध के ज्ञान का बोधक है। साथ ही अनुमान के तीन भेद हैं- (क) पूर्ववत्, (ख) शेषवत् तथा (ग) सामान्यतोदृष्ट। (क) पूर्ववत् - मेघमण्डल को देखकर भविष्य में वृष्टि का अनुमान। (ख) शेषवत्- प्रातःकाल पूर्व में तथा सायंकाल पश्चिम में देखकर सूरज की गति का अनुमान लगाना।

'उपमान' प्रमाण को न्याय, मीमांसा तथा वेदान्त स्वतंत्र रूप से प्रवृत्त प्रमाण के रूप में मान्यता देता है किन्तु सांख्य अनुमान में ही इसे मानता है, अलग से नहीं। न्यायसूत्र में इसका लक्षण है- 'प्रसिद्धसाधर्म्यात्साध्यसाधनमुपमानम्'<sup>7</sup> किन्हीं दो पदार्थों का साधर्म्य अथवा सादृश्य पहले से ज्ञात हो तो उस सादृश्य ज्ञान के आधार पर प्रथम अदृष्ट वस्तु के सामने आ जाने पर उसके नाम का ज्ञान होना उपमान है।

'शब्द' प्रमाण है- 'आप्तोपदेशः शब्दः।' अर्थात् आप्त के उपदेश को शब्द प्रमाण कहते हैं। अर्थ के साक्षात्कार का नाम आप्त है, उससे जो प्रवृत्त होता है, उसे आप्त कहते हैं। 'स द्विविधो दृष्टादृष्टार्थत्वात्। शब्द प्रमाण दो प्रकार का है- (1) जिसका अर्थ इस लोक में दीख पड़े। (2) जिसका अर्थ परलोक में हो। इसी प्रकार प्रत्येक वैदिक और लौकिक का विभाग होगा।

दूसरा पदार्थ 'प्रमेय' है। 'आत्मशरीरेन्द्रियार्थबुद्धिमनः प्रवृत्तिदोषप्रत्येभावफलदुःखापवर्गास्तु प्रमेयम्'<sup>8</sup> इस प्रकार आत्मा, शरीर, इन्द्रिय, अर्थ, बुद्धि, मन, प्रवृत्ति, दोष, प्रेत्यभाव, फल, दुःख, अपवर्ग ये बारह प्रमेय हैं। ये सभी प्रमेय अपवर्ग की प्राप्ति के निमित्त हैं।

- (i) आत्मा- 'इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिंगमिति।' अर्थात् इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख, ज्ञान का होना आत्मा के चिह्न अथवा लिंग हैं। इन्द्रियों के विषय को ग्रहण करने वाला तथा इन्द्रियों से अतिरिक्त जो तत्त्व है, वह आत्मा है।
- (ii) शरीर- 'चेष्टेन्द्रियार्थश्रयः शरीरम्'<sup>9</sup> क्रिया, इन्द्रिय और अर्थ के आश्रय को शरीर कहते हैं।
- (iii) इन्द्रिय- 'घ्राणरसन-चक्षुस्त्वक्श्रोत्राणीन्द्रियाणि भूतेभ्यः।'<sup>10</sup> अर्थात् घ्राण, रसन, चक्षु, त्वचा और कर्ण- ये पंच ज्ञानेन्द्रिय पंच महाभूत से उत्पन्न हुई हैं।
- (iv) अर्थ- 'गन्धरसरूपस्पर्शशब्दा पृथिव्यादिगुणस्तदर्थाः।'<sup>11</sup> गन्ध, रूप, स्पर्श तथा शब्द- ये पाँच पृथिवी आदि पाँच भूतों के गुण हैं और घ्राण आदि इन्द्रियों के विषय हैं। पृथिवी का गुण गन्ध है, जल का रस, अग्नि का रूप, वायु का स्पर्श तथा आकाश का शब्द है। इसी तरह घ्राण इन्द्रिय का विषय गन्ध, रसन इन्द्रिय का रस, चक्षु इन्द्रिय का रूप त्वचा इन्द्रिय का स्पर्श तथा कर्ण इन्द्रिय का विषय शब्द है।
- (v) बुद्धि- 'बुद्ध्युपलब्धिर्ज्ञानमित्सन्तर्न्तरम्'<sup>12</sup> अर्थात् बुद्धि, उपलब्धि और ज्ञान- इनका एक ही अर्थ है, केवल नाम का भेद है। स्मृति, अनुमान, आगम, सांशय, प्रतिभा, स्वप्न, ज्ञान, ऊह आदि प्रत्यक्ष और इच्छा मन के लिंग हैं।

- (vi) मन- 'युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिंगम्'<sup>13</sup> अर्थात् ज्ञान की उत्पत्ति न होना मन का लिंग चिह्न लक्षण है।
- (vii) प्रवृत्ति- 'प्रवृत्तिर्बागबुद्धिशरीराम्भ'<sup>14</sup> अर्थात् वाणी मन और शरीर के द्वारा की जाने वाली क्रियाओं का नाम प्रवृत्ति है।
- (viii) दोष 'प्रवर्तनालक्षणा दोषा'<sup>15</sup> अर्थात् प्रवृत्ति का हेतु प्रवृत्ति का कारण होना दोष स्वरूप है। इसी से पुण्य और पाप होता है।
- (ix) प्रेत्यभाव - 'पुनरुत्पत्तिः प्रेत्यभाव'<sup>16</sup> मृत्यु के पश्चात् दूसरे शरीर में जन्म लेने को प्रेत्यभाव कहते हैं।
- (x) फल 'प्रवृत्तिदोषजनितोऽर्थः फलम्'<sup>17</sup> प्रवृत्ति और दोष से उत्पन्न अर्थ को फल कहते हैं।
- (xi) दुःख- 'बाधनालक्षणं दुःखम्'<sup>18</sup> अर्थात् बाधना, पीड़ा और ताप का एक ही अर्थ है। ये सब भौतिक पदार्थों के संपर्क में आने से होती है।
- (xii) अपवर्ग- 'तदत्यन्तविमोक्षोऽपवर्गः'<sup>19</sup> उस दुःख से अत्यन्त निवृत्ति या छूट जाना अपवर्ग है। इस प्रकार इन बारह प्रमेयों में आत्मा सबसे प्रमुख है।

आचार्य गौतम ने तीसरे पदार्थ के रूप में 'संशय' को रखा है। संशय के बिना कोई तर्क आरम्भ नहीं होता है और न कोई निर्णय ही किया जा सकता है- 'समानानेकधर्मोपपत्तेर्विप्रतिपत्तेरूपलब्ध्यनुपलब्ध्य-व्यवस्थातश्च विशेषापेक्षविमर्शः। संशयः'<sup>20</sup> समान धर्म के ज्ञान से विशेष की अपेक्षा सहित अवमर्श को संशय कहते हैं। जैसे- अन्धकार के कारण एक लम्बायमान वस्तु में स्थाणु तथा पुरुष के होने का सन्देह होता है। इसके सम्बन्ध में आचार्य गौतम ने पाँच सूत्र बताए हैं-

- (i) समान धर्मोपपत्तिमूलक संशय- जैसे, शंका में दूरवर्ती पदार्थ के मनुष्य और स्थाणु होने में आकार या आयतनविशेष का जो समान धर्म है, वह संशय समानधर्मोपपत्तिमूलक है।
- (ii) अनेक धर्मोपपत्तिमूलक संशय- पृथ्वी गन्धवती होने से समानजातीय जल आदि द्रव्यों से भिन्न है और असमानजातीय गुण और कर्म से भी भिन्न है। अतः संशय होता है कि पृथ्वी द्रव्य है या गुण या कर्म।
- (iii) विप्रतिपत्तिमूलक- एक दर्शन मानता है कि आत्मा है और दूसरा नहीं। अतः यह संशय विप्रतिपत्तिमूलक है।
- (iv) उपलब्ध्य व्यवस्थामूलक- प्रत्यक्ष की अव्यवस्था से भी संशय होता है।
- (v) अनुपलब्ध्य व्यवस्थामूलक संशय- जैसे, वृक्ष का मूल, पृथ्वी के अन्दर का जल तथा असत् की उपलब्धि संभव नहीं।

चतुर्थ पदार्थ 'प्रयोजन' है- 'यमर्थमधिकृत्य प्रवर्तते तत्प्रयोजनम्'<sup>21</sup> अर्थात् जिस अर्थ को पाने योग्य या छोड़ने योग्य निश्चित करके उसे पाने या छोड़ने का उपाय करता है, उसे प्रयोजन कहते हैं।

पंचम पदार्थ 'दृष्टान्त' है- 'लौकिक परीक्षकाणां यस्मिन्नर्थेबुद्धिसाम्यं स दृष्टान्तः'<sup>22</sup> अर्थात् लौकिक और परीक्षक- इन दोनों के ज्ञान की समता जिसमें हो, उसे दृष्टान्त कहते हैं।

छठा पदार्थ 'सिद्धान्त' है- 'तन्त्राधिकरणाभ्युपगमसंस्थितिः सिद्धान्तः'<sup>23</sup> परस्पर सम्बन्ध सहित अर्थों के समूह के उपदेश को तन्त्र या शास्त्र कहते हैं। उसके अर्थ की स्थिति या निर्णय को सिद्धान्त कहते हैं। इसका प्रयोग प्रायः सभी दर्शनों में होता है। यह तीन प्रकार का है- (i) तन्त्रसंस्थितिः (ii) अधिकरणसंस्थितिः तथा (iii) अभ्युपगमसंस्थितिः। तन्त्रसंस्थिति के दो भेद मानकर चार भेद हो गए- (i) सर्वतन्त्रसिद्धान्त, (ii) प्रतितन्त्र सिद्धान्त, (iii) अधिकरण सिद्धान्त तथा (iv) अभ्युपगम सिद्धान्त।

सातवाँ पदार्थ 'अवयव' है- 'प्रतिज्ञाहेतूदाहरणोपनयनिगमनान्यवयवाः'<sup>124</sup> अर्थात् प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनयन, निगमन - ये पाँच वाक्य के अवयव अथवा भाग हैं। (i) प्रतिज्ञा- साध्यनिर्देशः प्रतिज्ञा।<sup>125</sup> साध्य के कथन को प्रतिज्ञा कहते हैं। जैसे- शब्द अनित्य है। (ii) हेतु- 'उदाहरणसाधर्म्यात्साधनं हेतु'<sup>126</sup> उदाहरण की समानता से साध्य के धर्म के साधन को हेतु कहते हैं। साथ ही 'तथा वैधर्म्यात्'<sup>127</sup> उदाहरण के विपरीत धर्म से जो साध्य का साधक है, वह भी है। (iii) उदाहरण- 'साध्यसाधर्म्यात्तद्धर्मभावी दृष्टान्त उदाहरणम्'<sup>128</sup> उदाहरण दो प्रकार का है- जो साध्य के साथ तुल्यधर्मता का उदाहरण है, वह 'अन्वयी है। जो साध्य के साथ वैधर्म्यता रखता हो, वह 'व्यतिरेकी है।' 'तद्विपर्ययाद्वाविपरीतम्'<sup>129</sup> साध्य के विरुद्ध धर्म से विपरीत उदाहरण होता है। (iv) उपनय- 'उदाहरणपेक्षस्तथेह्युपसंहारो न तथेति वा साध्यस्योपनयः'<sup>130</sup> उदाहरण के अधीन 'तथा' इति या 'न तथा' इति अर्थात् उस प्रकार नहीं, इस प्रकार साध्य के उपसंहार को उपनय कहते हैं। उदाहरण के दो प्रकार होने से उपनय के भी दो प्रकार हुए। (v) निगमन- 'हेत्वपदेशात्प्रतिज्ञायाः पुनर्वचनं निगमनम्'<sup>131</sup> उत्पत्ति धर्मवाला होने से शब्द अनित्य है, इस तरह के वाक्य को निगमन कहते हैं।

'तर्क' आठवाँ पदार्थ है- 'अविज्ञाततत्त्वऽर्थकारणोपपत्तितत्त्वज्ञानार्थमूहस्तर्कः'<sup>132</sup> अर्थात् किसी विषय का ज्ञान प्राप्त करने के लिए कारण की उत्पत्ति करते हुए के पक्ष की संभावना का नाम तर्क है। नैयायिक तर्क के पाँच भेद मानते हैं- आत्माश्रय, अन्योन्याश्रय, चक्रकाश्रय, अनवस्था तथा प्रमाणबाधितार्थप्रसंग। वस्तुतः किसी सिद्धान्त पर पहुँचने के लिए आप्तवाक्य, तर्क तथा साक्षात् अनुभव इन तीनों की अपेक्षा होती है।

'निर्णय के विषय में कहा गया है- 'विमृश्य पक्षप्रतिपक्षाभ्यामर्थावधारणं निर्णयः।'<sup>133</sup> स्थापना और निषेध से विचार करके पदार्थ के निश्चय का नाम निर्णय है। इन्द्रिय और अर्थ के संयोग से उत्पन्न प्रत्यक्ष से भी वस्तु का निश्चय होता है, वही भी निर्णय है।

निर्णय के बाद 'वाद' का स्थान है- 'प्रमाणतर्कसाधनोपालम्भः सिद्धान्ताविरुद्धः पञ्चावयवोपपन्नः पक्षप्रतिपक्षपरिग्रहो वादः'<sup>134</sup> अर्थात् अनेक प्रवक्ताओं के विचार का जा विषय या पदार्थ है, उनके वाक्य सन्दर्भ का नाम कथा है, जो तीन प्रकार का है- वाद, जल्प वितण्डा।

'जल्प' के विषय में कहा गया है- 'यथोक्तोपपन्नश्छलजातिनिग्रहस्थानसाधनोपालम्भो जल्पः'<sup>135</sup> अर्थात् जल्प में वाद के सभी लक्षण रहते हैं तथापि छल, जाति, निग्रहस्थानों से अर्थात् निषिद्ध रूप से भी स्थापना और प्रतिषेध किया जाता है।

'वितण्डा' प्रतिपक्षस्थापनाहीना वितण्डा।<sup>136</sup> प्रतिपक्ष में साधन को रहित जल्प का नाम वितण्डा है। इसमें जल्प करने वाला वादी प्रतिपक्ष का खण्डा करता है।

'हेत्वाभास' तेरहवाँ पदार्थ है- 'सव्यभिचारविरुद्धप्रकरणसमसाध्यसमकालातीताहेत्वाभासाः'<sup>137</sup> हेतु के जैसा प्रतीत हो, परन्तु जो लक्षण हेतु का कहा गया है, उससे सहित हो, वह हेत्वाभास है। इसके पाँच प्रकार हैं- सव्यभिचार, विरुद्ध, प्रकरणसम, साध्यसम तथा कालातीता। (i) सव्यभिचार - 'अनैकान्तिकः सव्यभिचार',<sup>138</sup> अर्थात् जो हेतु एकत्र व्यवस्थित न हो, वह सव्यभिचार हेत्वाभास है। (ii) 'विरुद्धसिद्धान्तमभ्युपेत्यतद्विरोधी विरुद्धः',<sup>139</sup> अर्थात् जो हेतु साध्य के विपरीत वस्तु को सिद्ध करे, वह विरुद्ध हेत्वाभास है। (iii) प्रकरणसम- 'स्मात्प्रकरणचिन्ता स निर्णयार्थमपदिष्टः प्रकरणसमः'<sup>140</sup> अर्थात् विचार के आश्रय अनिश्चित पक्ष और प्रतिपक्ष को प्रकरणसम हेत्वाभास कहते हैं। (ix) साध्यसम- 'साध्याविशिष्टः साध्यत्वात् साध्यसमः',<sup>141</sup> अर्थात् साध्य होने से साध्य से अभिन्न होने के कारण इसका नाम साध्यसम हेत्वाभास है। (x) कालातीत- 'कालात्ययापदिष्टः कालातीतः',<sup>142</sup> अर्थात् साधन काल का अत्यय हो जाने पर जो हेतु उपदिष्ट हो, वह कालातीत है।

‘छल’ चौदहवाँ पदार्थ है। ‘वचनविधातोऽर्थविकल्पोपत्याच्छलम्’<sup>43</sup> वादी के अभिमत को विकल्प के द्वारा खण्डित किया जाए, उसे छल कहते हैं। इसका उद्देश्य केवल जीतने की इच्छा है। यह तीन प्रकार का है- वाक्छल, सामान्य छल और उपचार छल। (i) वाक्छलम्- ‘अवशेषाभिहितेऽर्थेवक्तुर-भिप्रायादर्थान्तरकल्पना वाक्छलम्’<sup>44</sup> साधारण रूप से उक्त अर्थ में वक्ता के आशय के विरुद्ध अन्य अर्थ की कल्पना करना वाक्छल है। (ii) सामान्य छल- ‘सम्भवातोऽर्थस्यातिसामान्ययोगादसंभूतार्थ-कल्पनासामान्यच्छलम्’<sup>45</sup> अर्थात् अतिसामान्य योग से संभावित अर्थ को छोड़कर असम्भव अर्थ की कल्पना करते हुए दोष दिखाना सामान्य छल है। (iii) उपचारच्छल- ‘धर्मविकल्पनिर्देशोऽर्थ-सद्भावप्रतिषेध उपचारच्छलम्’<sup>46</sup> अर्थात् यथार्थ प्रयोग करना अभिधान का धर्म है। जिस शब्द का जो मुख्य अर्थ है, उसका सम्बन्ध धर्म है। यह छल अमिधा और लक्षणा शब्दशक्तियों के मिश्रण से होता है। ‘जाति’- ‘साधर्म्यवैधर्म्याभ्याप्रत्यवस्थान जातिः’<sup>47</sup> अर्थात् ‘साधर्म्यवैधर्म्याभ्यां प्रत्यवस्थान जातिः’<sup>48</sup> अर्थात् साधर्म्य और वैधर्म्य से जो खण्ड किया जाता है, उसको जाति कहते हैं।

‘निग्रहस्थान’ सोलहवाँ पदार्थ है। ‘विप्रतिपत्तिश्प्रतिपत्तिश्च निग्रहस्थानम्’<sup>49</sup> प्रतिपत्ति का अर्थ प्रवृत्ति है। कथा कहने के अधिकार से च्युत कर देने को निग्रह कहते हैं।

इस प्रकार न्याय दर्शन के षोडश पदार्थों की विवेचना संपन्न होती है।

## संदर्भ-सूची

1. गौतम न्याय सूत्र 1/1/1
2. गौतम न्याय सूत्र 1/1/4
3. गौतम न्याय सूत्र 1/1/6
4. गौतम न्याय सूत्र 1/1/5
5. गौतम न्याय सूत्र 1/1/6
6. गौतम न्याय सूत्र 1/1/7
7. गौतम न्याय सूत्र 1/1/8
8. गौतम न्याय सूत्र 1/1/9
9. गौतम न्याय सूत्र 1/1/10
10. गौतम न्याय सूत्र 1/1/11
11. गौतम न्याय सूत्र 1/1/12
12. गौतम न्याय सूत्र 1/1/14
13. गौतम न्याय सूत्र 1/1/15
14. गौतम न्याय सूत्र 1/1/16
15. गौतम न्याय सूत्र 1/1/17
16. गौतम न्याय सूत्र 1/1/18
17. गौतम न्याय सूत्र 1/1/19
18. गौतम न्याय सूत्र 1/1/20
19. गौतम न्याय सूत्र 1/1/21
20. गौतम न्याय सूत्र 1/1/22
21. गौतम न्याय सूत्र 1/1/23
22. गौतम न्याय सूत्र 1/1/24
23. गौतम न्याय सूत्र 1/1/25
24. गौतम न्याय सूत्र 1/1/26
25. गौतम न्याय सूत्र 1/1/32

26. गौतम न्याय सूत्र 1/1/33
27. गौतम न्याय सूत्र 1/1/34
28. गौतम न्याय सूत्र 1/1/35
29. गौतम न्याय सूत्र 1/1/36
30. गौतम न्याय सूत्र 1/1/37
31. गौतम न्याय सूत्र 1/1/38
32. गौतम न्याय सूत्र 1/1/39
33. गौतम न्याय सूत्र 1/1/40
34. गौतम न्याय सूत्र 1/1/41
35. गौतम न्याय सूत्र 1/2/1
36. गौतम न्याय सूत्र 1/2/2
37. गौतम न्याय सूत्र 1/2/3
38. गौतम न्याय सूत्र 1/2/4
39. गौतम न्याय सूत्र 1/2/5
40. गौतम न्याय सूत्र 1/2/6
41. गौतम न्याय सूत्र 1/2/7
42. गौतम न्याय सूत्र 1/2/8
43. गौतम न्याय सूत्र 1/2/9
44. गौतम न्याय सूत्र 1/2/10
45. गौतम न्याय सूत्र 1/2/11
46. गौतम न्याय सूत्र 1/2/12
47. गौतम न्याय सूत्र 1/2/13
48. गौतम न्याय सूत्र 1/2/14
49. गौतम न्याय सूत्र 1/2/18

# वेदकालीन समाज की राजनैतिक दशा

डॉ० नरेन्द्र झा

एम०ए० (संस्कृत), पीएच०डी०, पटना विश्वविद्यालय, पटना

वैदिक वाङ्मय में वर्णित आख्यानों, उपाख्यानों एवं अन्यान्य प्रसंगों के वर्णन के क्रम में तत्कालीन राजनैतिक अवस्था की पर्याप्त सामग्री उपलब्ध होती है। वस्तुतः मनुष्य का राजनैतिक जीवन एक ऐसी विशिष्टता है, जिसने मानव सभ्यता एवं संस्कृति को एक नवीन गतिविधि देकर उसे जीवन की स्थिरता एवं उन्नति की ओर अग्रसर किया। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, किन्तु उसका सामाजिक जीवन अन्य प्राणियों से भिन्न है, क्योंकि सामाजिक जीवन तो अन्य प्राणियों - चींटियों, मधुमक्खियों आदि के जीवन में भी दृष्टिगोचर होते हैं। वस्तुतः मनुष्य का राजनैतिक जीवन ही उसे एक विशिष्ट स्थान प्रदान करता है।

सभ्यता के विकास के क्रम में सामाजिक जीवन के साथ-साथ राजनैतिक जीवन का विकास होता गया। समाज में शान्ति-व्यवस्था, सुरक्षा एवं स्थायित्व आदि के लिये शासन तन्त्र की आवश्यकता प्रारंभ से ही महसूस की गई। वैदिक काल से ही विभिन्न स्तरों पर शासनतन्त्र से सम्बंधित व्यक्तियों के नामों का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद में राजा के लिए विश्वपति<sup>1</sup> एवं राजा<sup>2</sup> शब्द प्रयुक्त हुए हैं। भारतीय परम्परा के अनुसार धर्म ही शासन-तन्त्र एवं नियम का आधार है। महाभारत के अनुसार पहले न राजा था, न राज्य, न दण्ड था और न दाण्डिक। धर्म से ही प्रजा परस्पर एक दूसरे की रक्षा करती थी<sup>3</sup>, जो उसके राजनैतिक जीवन का प्रारंभिक रूप था।

प्राचीन भारतीय परम्परा के अनुसार राज्य की उत्पत्ति के दो मत प्रमुख हैं- दैवी उत्पत्ति का सिद्धान्त और सामाजिक समझौते का सिद्धान्त। दैवी सिद्धान्त के अनुसार प्राचीन काल में एक ऐसा आदर्श समाज था, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति सद्गुण एवं सदाचार से सम्पन्न था। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं अपने कर्तव्यों का पालन करता था। उस समय कोई बाह्य शक्ति नहीं थी, जो किसी व्यक्ति को कर्तव्यच्युत होने पर उसे कर्तव्यपालन के लिये बाध्य करती। महाभारत<sup>4</sup> में भी इसी प्रकार के आदर्श समाज का उल्लेख प्राप्त होता है। किन्तु धीरे-धीरे मनुष्य के नैतिक गुणों का हास होने लगा, उसमें स्वार्थवाद एवं अन्य दुराचारी प्रवृत्ति में वृद्धि होने लगी और इस प्रकार वह आदर्श समाज छिन्न-भिन्न हो गया। उस अव्यवस्था की स्थिति में मनुष्यों द्वारा प्रार्थना किये जाने पर ब्रह्मदेव ने राजा द्वारा संचालित एक आचार संहिता का निर्माण किया और विराज नामक अयोनिज पुत्र को उत्पन्न किया, जिसे राजा बनाया गया<sup>5</sup>। इस तरह से दैवी उत्पत्ति के सिद्धान्त के अनुसार राजा को शासन करने का विशिष्ट अधिकार प्राप्त हुआ।

राज्य के दैवी उत्पत्ति का सिद्धान्त धार्मिक विश्वास पर ही आधारित है और वैज्ञानिक दृष्टि से यह सिद्धान्त मान्य नहीं है। इससे अधिक उपयुक्त समझौतावादी सिद्धान्त प्रतीत होता है। समाज में आचार से च्युत नियंत्रण-विहीन अराजकता की स्थिति आई। पुराण में भी वर्णन आया है कि समाज में सभी सद्गुणसम्पन्न व्यक्ति नहीं होते थे<sup>6</sup>। पुराण में तत्कालीन समाज के अराजक स्थिति का स्पष्ट विवरण आया है<sup>7</sup>, जब झूठ, छल-कपट, हत्या चोरी, लालच, बलात्कार आदि दुराचारों का परिचय

मिलता है। ऐसे उपद्रवों से समस्त जनपद सत्त्वहीन हो गया था<sup>8</sup>। ऐसी अराजक स्थिति से दुःखी जनता आपस में विचार-विमर्श तथा समझौता करके राज्य का गठन किया तथा राजा को अपने आय का छठा भाग देने का निश्चय किया<sup>9</sup>। बौधायन धर्मसूत्र<sup>10</sup> में भी इसी प्रकार का वर्णन है। भागवत पुराण<sup>11</sup> के अनुसार राजा का प्रजा की रक्षा करने में ही कल्याण है।

किन्तु राज्य की उत्पत्ति में समझौतावादी सिद्धान्त को भी वैज्ञानिक और तर्कसंगत नहीं माना जा सकता, क्योंकि यह सिद्धान्त कल्पनामात्र पर आधारित है। किसी प्रकार का समझौता तभी हो सकता है, जब सभी लोग एक जगह सम्मिलित रूप से विचार-विमर्श के द्वारा सहमत हो जायें, ऐसा न तो किसी ऐतिहासिक तथ्य से पुष्ट होता है और न ही तर्क की कसौटी पर खरा उतरता है। डा. अल्तेकर<sup>12</sup> के अनुसार भी सामाजिक समझौते का सिद्धान्त नितान्त युक्तिहीन और अनैतिहासिक है। राज्य उत्पत्ति के सम्बन्ध में विकासवाद का सिद्धान्त उपयुक्त, तर्कसंगत एवं सर्वमान्य है, क्योंकि सभ्यता के क्रमिक विकास के अनुसार ही ऐसा संभव है। मानव जीवन में राजनैतिक जीवन का भी धीरे-धीरे विकास हुआ। परिवार के उपरान्त समुदाय और समुदाय के उपरान्त अन्तःसामुदायिक सम्बन्धों के विकास के फलस्वरूप राज्य का उदय हुआ। प्रथम दो सिद्धान्तों का ही उल्लेख भारतीय साहित्य में प्राप्त होता है। विकासवाद का सिद्धान्त यद्यपि प्राचीन साहित्य में उपलब्ध नहीं होता है तथापि पुराणों में मानव सभ्यता के विकास की कथा विशद् रूप से मिलती है।

प्राचीन भारतीय साहित्य में राज्य के सात अंग माने गये हैं, जिसे 'सप्तांग सिद्धान्त' भी कहा जाता है। पुराणों में हमें सप्तांग सिद्धान्त का सविस्तर वर्णन प्राप्त नहीं होता है, प्रत्युत इसका संकेत मात्र प्राप्त होता है<sup>13</sup>। भागवत पुराण<sup>14</sup> में राज्य सप्तांगों को ही 'सप्त-प्रकृति' अभिहित किया गया है। मनु, बृहस्पति, कौटिल्य आदि सभी प्राचीन आचार्यों ने राज्य के इन सात अंगों का वर्णन किया है। राज्य के सप्तांगों में राजा का प्रथम स्थान है। शुक्राचार्य के अनुसार राजा ही राज्य का शीर्ष है<sup>15</sup>। वैदिक काल से ही विभिन्न स्तरों पर शासन-तन्त्र से सम्बन्धित व्यक्तियों के नामों का उल्लेख प्राप्त होता है। अराजक स्थिति एवं अव्यवस्था को दूर करने का कार्य राजा का होता है। राजा ही लोक पर नियंत्रण स्थापित करके धर्म की स्थापना करता है और वही अधर्म पर चलने वाले व्यक्तियों को शासित करता है<sup>16</sup>।

डा. अल्तेकर<sup>17</sup> के मतानुसार प्राचीन भारतीयों का विश्वास था कि राजा का आविर्भाव सैनिक आवश्यकता के फलस्वरूप हुआ। राजा को एक कुशल सेना-नायक होना चाहिए, जिसका नेतृत्व सभी लोगों को स्वीकार्य हो। ऐतरेय ब्राह्मण<sup>18</sup> में भी, इसी प्रकार, सैनिक आवश्यकता के फलस्वरूप राजा की आवश्यकता का उल्लेख प्राप्त होता है। तात्कालिक व्यवस्थानुसार सर्वत्र राजा के दैवी स्वरूप के दर्शन होते हैं<sup>19</sup>। पृथ्वी का प्रथम शासक मनु को बताया गया है, जो ब्रह्मा के ही पुत्र थे। भागवत पुराण<sup>20</sup> में राजा को सर्ववेदमय कहा गया है। राजा ही अपने शरीर में समस्त लोकपालों को धारण करता है<sup>21</sup>। राजा को साक्षात् नरदेववपुहरि<sup>22</sup> अर्थात् राजा के शरीर में साक्षात् भगवान् माना गया है। इस प्रकार राजा को साक्षात् भगवान् के सदृश माना गया। राजा अपने तेज में समस्त लोकपालों का तेज धारण करता है<sup>23</sup>। राजा अपने शरीर में सूर्य, चन्द्र, अग्नि, इन्द्र, वायु, यम, धर्म और वरुण आदि का रूप धारण करता है<sup>24</sup>। डा. देवी दत्त शुक्ल<sup>25</sup> के मतानुसार राजा की उपमा अनेक देवताओं से दी गई है परन्तु इन उपमाओं का भाव राजा के कर्तव्यों को निर्धारित करना है। उनके अनुसार विभिन्न देव राजा में उन-उन गुणों की उपस्थिति की ओर इंगित करते हैं। राजा के गुणों की चर्चा याज्ञवल्क्य स्मृति<sup>26</sup> एवं अर्थशास्त्र<sup>27</sup> में भी की गई है कि राजा को धार्मिक-बुद्धि, न्याय-बुद्धि,

प्रजापालक, सत्यवादी, सत्पथगामी, तपस्वी पूजक, दस्युहन्ता, जितेन्द्रिय, चारचक्षु, दान-यज्ञादि कर्ता होना चाहिए। इसके साथ ही द्यूत, मद्य, गेय, वारवधू, मृगया आदि में अनासक्त होना चाहिए।

तत्कालीन समाज में राजा को दैवी स्वरूप वाला मानने के उपरान्त भी यह कभी नहीं माना गया कि राजा कभी कोई अनुचित कार्य नहीं कर सकता है। भारतीय परम्परा केवल धर्मपरायण राजा को ही दैवी स्वरूप वाला मानता है। शुक्रनीति में स्पष्ट कहा गया है कि धर्मपरायण राजा में ही दैवी अंश होता है और अन्य राजा को राक्षस का अंश माना जाता है<sup>28</sup>। महाभारत<sup>29</sup> में तो ऐसे राजा का वध कर देने का अनुमोदन किया गया है, जो राजा अपने धर्म का पालन नहीं करता हो।

अपनी प्रजा की वृत्ति या आजीविका का प्रबन्ध करना राजा का एक प्रमुख कर्तव्य है। पृथ्वी के अन्नरहित हो जाने पर प्रजा निवेदन करती है - 'हे राजन्! हम क्षुधा-पीड़ितों की रक्षा के लिये आप अन्न देने का प्रबन्ध कीजिए। हम अन्न न मिलने से कहीं शक्तिहीन होकर नष्ट न हो जायें।' अमरकोश में भी 'वार्ता' का प्रयोग जीवन निर्वाह के साधन के अर्थ में किया गया है<sup>30</sup>। विष्णु पुराण<sup>31</sup> में भी इसी प्रकार वार्ता को आजीविका के अर्थ में बतलाते हुए राजा का दायित्व बतलाया गया है। इस तरह, समाज की अर्थ व्यवस्था पर राजा का पूर्ण नियंत्रण होता था और प्रजा की वृत्ति का प्रबन्ध करना उसका दायित्व माना जाता था।

न्याय करना अथवा दण्ड प्रदान करना राजा के अन्य कर्तव्यों में से एक था। इस कारण से राजा को 'दण्डधर' अभिहित किया जाता था<sup>32</sup>। दण्ड के द्वारा राजा समाज में अव्यवस्था को दूर करते हुए सुव्यवस्था कायम कर सकता है। अननुशासित एवं असाधुओं का दमन दण्ड के द्वारा ही किया जा सकता है। दण्ड कार्य में राजा को किसी भी तरह के पक्षपात से रहित होना चाहिए। अदण्डनीय होने पर धर्म पथ पर स्थित राजा शत्रु के पुत्र को भी दण्ड नहीं देता है और दण्डनीय होने पर अपने पुत्र को भी दण्ड देने में संकोच नहीं करता। वस्तुतः दण्ड द्वारा ही राजा समाज में अपराध पर नियंत्रण करता है। जो किसी निरपराध व्यक्ति को कष्ट देता है, दण्ड के कारण उसे सर्वत्र राजा का भय बना रहता है। असाधुओं का दमन करने से ही साधुओं का कल्याण होता है। अतः राजा का यह परम कर्तव्य है कि बिना किसी पक्षपात के मर्यादा का उल्लंघन करने वाले को दण्ड दे।

प्रजा राजा का निर्वाचन करती थी अथवा राजा उत्तराधिकार से बनता था, इस विषय में दोनों ही प्रकार के उदाहरण उपलब्ध होते हैं। अधिकतर ज्येष्ठ पुत्र ही राजा का उत्तराधिकारी होता था<sup>33</sup>। देवीभागवत पुराण<sup>34</sup> में सामान्यतः ज्येष्ठ पुत्र को राज्य का उत्तराधिकार मिलने का उल्लेख आया है। रामायण<sup>35</sup> एवं महाभारत<sup>36</sup> में भी ज्येष्ठ पुत्र के उत्तराधिकारी होने का प्रमाण उपलब्ध होता है। अर्थशास्त्र<sup>37</sup> के मतानुसार भी आपत्ति काल के अतिरिक्त ज्येष्ठ पुत्र का राजा होना श्रेयष्कर है। किन्तु ज्येष्ठ पुत्र के स्वयं राज्य को अस्वीकार कर देने पर अथवा उसके अयोग्य होने पर छोटे भाई को राजा के पद पर अभिषिक्त किया जा सकता था<sup>38</sup>। शारीरिक असमर्थता होने पर छोटे पुत्र के राजा बनाने का वर्णन देवी भागवत पुराण<sup>39</sup> में भी आया है, जब पाण्डु के विषय में, धृतराष्ट्र का अन्धत्व ही, उसके राजा होने में सहायक सिद्ध हुआ था।

राज कार्य के संचालन के लिए तथा प्रशासन सम्बन्धी कार्यों में मंत्रणा के लिये मंत्रियों या अमात्यों की नियुक्ति की जाती थी<sup>40</sup>। राज्य के सुदृढ़ स्थिति के लिए योग्य एवं कुशल मंत्रियों का होना आवश्यक है। राज्य की स्थिति में मंत्रणा को मूल कारण माना गया है, जिसके गुप्त न रहने पर राज्य तथा राजा दोनों का ही विनाश हो सकता है। मंत्रियों से आशा की गई है कि वे देश और काल के अनुसार हेतु-युक्त हितकारक नीति-निर्णय प्रकट करें<sup>41</sup>।

राजा अपने राज्य के विस्तार एवं उस पर भली-भाँति नियन्त्रण स्थापित करने के लिये विभिन्न उपायों का आश्रय लेता था<sup>42</sup>, जो इस प्रकार हैं - साम, दाम, भेद और दण्ड। रामायण<sup>43</sup> और मनुस्मृति<sup>44</sup> आदि ग्रन्थों में भी इन चार उपायों का उल्लेख किया गया है, किन्तु मत्स्य पुराण<sup>45</sup>, अग्नि पुराण<sup>46</sup> आदि ग्रन्थों में इन उपायों की संख्या सात बतलायी गई है। इन सात उपायों के अतिरिक्त माया, उपेक्षा और इन्द्रजाल की भी गणना की गई है।

तात्कालिक समाज में सैन्य व्यवस्था का परिज्ञान हमें उन युद्धों से मिलता है जो राजाओं के द्वारा अपने सीमावर्ती राज्यों को अपने राज्य में मिलाने से होता था, या फिर महिषासुर प्रभृति असुरों द्वारा देवी या देवताओं से किये गये युद्धों में मिलता है। लोभ पाश में फँस कर राजा दुर्जय ने ही अद्भुत दैवी मणि को प्राप्त करने के लिए गौर मुख ऋषि से भयंकर युद्ध किये<sup>47</sup> और विनाश को प्राप्त हुए। इसी तरह दुर्दम्य असुर महिषासुर का वध करने के लिए बीस भुजाओं वाली महादेवी दुर्गा ने घनघोर युद्ध कर सकल असुर सेना को भस्म किया<sup>48</sup>। इस प्रकार के युद्धों का वर्णन देवीभागवत पुराण में भी मिलता है<sup>49</sup>। देवी के साथ युद्ध होने पर ऐसी मान्यता थी कि युद्ध में मरण होने पर यश तथा जीवित रहने पर सुख की प्राप्ति होती है। युद्ध विषयक स्थलों पर गज, रथ, अश्व और पदाति सैनिकों की उपस्थिति से चतुरंगिणी सेना के प्रचलन का बोध होता है। वराह पुराण में भी इस चतुरंगिणी सेना का तथा उसके अंगों की बहुशः चर्चा आयी है<sup>50</sup>। राजा दुर्जय ने अपने राज्य-विस्तार के लिये हाथी, घोड़े, रथ और पदाति के सैनिकों के द्वारा एक विशाल सेना की रचना की<sup>51</sup>। हस्ति सेना, अश्व सेना, रथ सेना, पदाति सेना का वर्णन एवं उसकी विशालता का आभास उस सन्दर्भ में भी मिलता है, जब गौर मुख ऋषि ने राजा दुर्जय की सेना के रखरखाव एवं सत्कार के लिए गजों की विशाल गजशालायें तथा अश्वों की अश्वशालायें बना दी थी<sup>52</sup>।

सैन्य व्यवस्था के अन्तर्गत रथ सेना के महत्त्व की पुष्टि होती है<sup>53</sup>। राजा दुर्जय का महारथी नील रथ सेना लेकर जब गौर मुख से युद्ध करने के लिए गया तो मणि से उद्भूत योद्धा रथ पर सवार थे। खड्ग और ढाल लिये हुए धनुर्धारी और तुणीरों से युक्त महारथियों का भयंकर युद्ध हुआ<sup>54</sup>। इस रथ सेना के योद्धा को महारथी कहा गया है। महारथी रथियों में श्रेष्ठ होता है। वस्तुतः युद्ध में रथ का प्रचलन वैदिक काल से ही प्रारंभ हो चुका था। ऋग्वेद में अनेक स्थल इसके प्रमाण हैं<sup>55</sup>। महाकाव्य काल में इसकी स्थिति सेना के मुख्य अंग कही गयी है<sup>56</sup>, परन्तु आठवीं शताब्दी के पश्चात् डा. दीक्षितार<sup>57</sup> एवं डा. चक्रवर्ती<sup>58</sup> आदि के मतानुसार युद्धार्थ रथ-प्रयोग का अभाव रहता है।

वैदिक वाङ्मय में वर्णित आख्यानों में जिस प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग मिलता है, वह प्राचीन ढंग के थे। प्रायः समस्त पौराणिक काल में उसी प्रकार के शस्त्रों का प्रचलन मिलता है। पुराण के प्रमुख एवं सर्वोच्च देवता पीताम्बरधारी वराहावतार जनार्दन हाथों में शंख, चक्र, गदा प्रभृति धारण किये रहते हैं<sup>59</sup>, जो इनका प्रमुख अस्त्र-शस्त्र है और वे इसी से असुरों, दुष्टात्माओं आदि का नाश करते हैं। इनके चक्र को सुदर्शन चक्र बतलाया गया है, जो अग्नि के समान है, जिसके निमेष मात्र में सेना सहित दुर्जय को मार देते हैं<sup>60</sup>। अस्त्र-शस्त्र के रूप में खड्ग, ढाल, धनुष, बाण आदि का उल्लेख राजा दुर्जय एवं गौर मुख ऋषि के संघर्ष में प्राप्त होता है। शक्ति की अधिष्ठात्री महादेवी दुर्गा महिषासुर का वध करने के लिए अपने वास्तविक स्वरूप में प्रकट हुईं, तो सिंह पर सवार उनकी बीस भुजायें हो गई थीं<sup>61</sup> और उनमें धनुष, खड्ग, शक्ति, शर, शूल, गदा, मूसल, चक्र, भिन्दिपाल, दण्ड, पाश, ध्वज आदि अस्त्र-शस्त्र धारण किये हुए थे<sup>62</sup>, जिससे समस्त असुर सेना का संहार हुआ। अन्त में, खड्ग के द्वारा महिषासुर के सिर का छेदन कर दिया<sup>63</sup>। उसके शरीर का पुमान् शस्त्र लगते ही स्वर्ग को चला गया।

इस प्रकार उपर्युक्त उद्धरणों की समीक्षा से स्पष्ट होता है कि वेदकालीन समाज की राजनैतिक दशा उन्नत एवं सुदृढ़ थी। इसके नियन्ता एवं शासक के रूप में राजा धर्म का पालन करता था तथा प्रजा को धर्म पालन करने के लिए उत्साहित एवं प्रेरित करता था।

## सन्दर्भ-सूची

1. ऋग्वेद, 10. 137. 1.  
अत्र वो विश्वपतिः पिता पुराणां अनुवेनति।
2. वही, 1. 24. 8.  
उरु हि राजा वरुणश्चकार.....।
3. महाभारत, शान्तिपर्व, 59. 14.  
नैव राज्यं न राजासीन्न च दण्डो न दाण्डिकः।  
धर्मैर्गैव प्रजाः सर्वा रक्षन्ति स्म परस्परम्॥
4. वही, 59. 14-16.  
नैव राज्यं न राजा.....रक्षन्तिस्म परस्परम्॥  
पाल्यमानास्तथान्योन्यं नरा धर्मेण भारत।  
दैन्यं परमुपाधामुस्ततस्तान्मोह आविशत्॥  
ते मोहवशमापन्नाः मनुजा मनुजर्षभ।  
प्रतिपत्ति विमोहाच्च धर्मस्तेषामनीनशत्॥
5. वही, 59. 88.  
ततः संचित्य भगवान् देवो नारायणः प्रभुः।  
तेजसा वै विरजसं सोऽसृजन्मानसं सुतम्॥
6. वराह पुराण, 121. 102-3.
7. वही, 193. 2-17.
8. भागवत पुराण, 4. 14. 38-40.
9. वराह पुराण, 178. 49-52.
10. बौधायन धर्म-सूत्र, 1. 10. 6.
11. भागवत पुराण, 4. 10. 24.
12. स्टेट एण्ड गवर्नमेन्ट इन एन्सियेन्ट इन्डिया, डा. अल्लेकर, पृ. 15.
13. वराह पुराण, 125. 171-5.
14. भागवत पुराण, 6. 14. 47.
15. वही, 1. 62.  
दृग्मात्य सुहृद्व्योत्रं मुखं कोशो बलं मनः।  
हस्तपादौ दुर्गराष्ट्रौ राज्यांगानि स्मृतानि हि॥
16. वराह पुराण, 125. 125-30.
17. स्टेट एण्ड गवर्नमेन्ट इन एन्सियेन्ट इन्डिया, पृ. 4-6.
18. ऐतरेय ब्राह्मण  
अराजन्यतया वै वो जयेति राजानं करवरमर्ह इति।
19. वही, 11. 2-35.
20. भागवत पुराण, 7. 11. 20.
21. वही, 4. 16. 5.
22. वही, 4. 16. 8.
23. वही, 4. 16. 19.

24. वही, 3. 21. 51.
25. प्राचीन भारत में जनतंत्र, डा. देवी दत्त शुक्ल, पृ. 61.
26. याज्ञवल्क्य स्मृति, राजधर्म प्रकरण, 306-310.
27. अर्थशास्त्र, 6. 1.
28. शुक्रनीति, 1. 86-87.  
यो हि धर्मपरो राजा देवांशोऽन्यश्च राक्षसाम्।  
अंशभूतो धर्मलोपो प्रजापीडाकरो भवेत्॥
29. महाभारत, अनुशासनपर्व, 61. 32-33.  
अरक्षितारं हर्तारं विलोप्यारमनायकम्।  
तं वै राजकलिं हन्युः प्रजाः संनह्य निर्हणम्॥  
अहं वो रक्षितेत्युक्ता यो न रक्षति भूमिपः।  
स संहृत्या निहन्तव्य श्वेव सोन्माद आतुरः॥”
30. अमरकोश, 2. 9. 1.  
आजीवो जीविका वार्ता।
31. विष्णु पुराण, 1. 6. 20.  
प्रतिकारमिमं कृत्वा शीतादेस्ताः प्रजाः पुनः।  
वार्तोपायं ततश्चक्रुर्हस्तसिद्धिं च कर्मजाम्॥
32. भागवत पुराण, 4. 21. 22.
33. वराह पुराण, 125. 172.  
ततः स राजशार्दूलो ज्येष्ठं पुत्रं प्रभाषत।  
पुत्र किं चैव कर्तव्यं शून्यं राज्यमिदं मया॥
34. देवीभागवत पुराण, 3. 14. 40.
35. रामायण, 2. 110. 36.
36. महाभारत, सभापर्व, 23. 24.
37. अर्थशास्त्र, कौटिल्य, 1. 17. 54.
38. वराह पुराण, 125. 179.  
राजपुत्रभ्यनुज्ञातो ह्यभिषिक्तो जनाधिपः।  
सम्मुखेन महाराज्ये भूमि भूमिपसत्तमः॥”
39. देवीभागवत पुराण, 2. 6. 5.
40. देवीभागवत पुराण, 5. 12. 19.
41. देवीभागवत पुराण, 5. 12. 22-24.
42. हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, पी. वी. काणे, जि. 3, पृ. 171.
43. रामायण, 5. 41. 2-3.
44. मनुस्मृति, 7. 109
45. मत्स्य पुराण, 222. 2.
46. अग्नि पुराण, 226. 5-6.
47. वही, 11. 76-107.
48. वही, 94. 33-51.
49. देवीभागवत पुराण, 3. 15. 3( 5. 5. 3 आदि।
50. वराह पुराण, 94. 35.
51. वही, 10. 33.

52. वही, 11. 34.  
हस्तिनां हस्तिशालाश्च तुरगाणां च मन्दुराः।  
चकार सञ्चयान् विप्रो नाना भक्ष्यस्य सर्वशः॥
53. वही, 11. 76. 83.
54. वही, 11. 76-86.
55. ऋग्वेद, 4. 4. 10, 10. 103. 4.
56. The Art of War in Ancient India, Dr. Chakra Varti, Page. 22.  
The car warrior is the main strength of the epic army.
57. वार इन एन्सियेन्ट इन्डिया, डा. दीक्षितार, पृ. 116.
58. दी आर्ट आफ वार इन एन्सियेन्ट इन्डिया, पृ. 26.
59. वराह पुराण, 11. 104-107 आदि।
60. वही, 11. 106.
61. वही, 94. 41.
62. वही, 94. 42-44.  
धनुः खड्गं तथा शक्तिं शरान् शूलं गदां तथा।
63. वही, 94. 51.  
मूसलं च तथा चक्रं भिन्दिपालं तथैव च॥  
दण्डं पाशं ध्वजं चैव पद्मं चेति च विंशतिः।  
भूत्वा विशभुजादेवी सिंहमास्थाय दशिता॥

# मृच्छकटिक में वर्णित आभूषण और श्रृंगार प्रसाधन की विवेचना

डॉ० राजकुमार

प्राचार्य, राजकीय महिला महाविद्यालय हमीरपुर

## सारांशः

मृच्छकटिक युग की जनता स्वयं को सुसज्जित करने के प्रति कितनी जागरूक थी? किन-किन आभूषणों को धारण करती थी? कौन से श्रृंगार प्रसाधनों का प्रयोग करती थी? इन समस्त प्रश्नों के उत्तर इस शोधपत्र में खोजे गये हैं, जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि वे आज से लगभग 1700 वर्ष पूर्व कितने आधुनिक (मार्डन) थे? इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। शोध पत्र में दिये गये विवरणों से इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। संस्कृत साहित्य में कहा गया है 'न कान्तमपि निर्भूषं विभाति वनिताननम्' अर्थात् जिस प्रकार किसी स्त्री का मुख आभूषणों के बिना अधिक अच्छा नहीं लगता, उसी प्रकार अलंकारों के प्रयोग के बिना काव्य भी अच्छा नहीं लगता।

## आभूषण और श्रृंगार प्रसाधनः

प्राचीनकाल से ही व्यक्ति सौन्दर्य प्रेमी रहा है। स्त्री पुरुष अपने शरीर को सुन्दर एवं आकर्षक बनाने के लिये विभिन्न प्रकार के वस्त्रों के अतिरिक्त अनेक प्रकार के आभूषणों को धारण करते थे। मनुष्यों का यह आभूषण प्रेम प्राग्वैदिक काल से रहा है। ऋग्वेद से ज्ञात होता है कि नर-नारी दोनों स्वर्ण और रजत से बने आभूषणों को पहनने में रुचि रखते थे। वायु और ब्रम्हाण्ड पुराणों के अनुसार नारी की सौन्दर्य वृद्धि नाना प्रकार के आभूषण से होती है।<sup>1</sup> यह सौन्दर्यप्रियता मृच्छकटिक काल में तद्वत बनी रही। पुरुषगण अङ्गुलीयक, कटक (वल्लय) केंयूर (बाजूबन्द) आदि आभूषण धारण करते थे। आभूषणों को धारण करने का विशेष प्रचलन मुख्यतः स्त्रीजनों में ही था। आभूषणों को बिना धारण किये हुये स्त्रियों का पति के सामने आना दोषपूर्ण माना जाता था।<sup>2</sup> मृच्छकटिक में जिन आभूषणों की चर्चा प्रसंगानुसार आई है, उनका विवरण निम्नलिखित है:-

अङ्गुलीयक (अंगूठी): इसको स्त्री और पुरुष दोनों उगलियों में धारण करते थे। चारुदत्त चेटी से कहता है-भद्रे ! मैंने प्रिय निवेदन कभी निष्फल नहीं किया। इसलिए पुरस्कार स्वरूप इस अंगूठी को ग्रहण करो। इसको 'मुद्रिका' भी कहा जाता था।

कटक (वल्लय): इसको कंगन कहते थे। वसन्तसेना संवाहक को माथुर के ऋण से मुक्त कराने के लिये चेटी द्वारा सोने का कटक दिया था।<sup>4</sup> वसन्तसेना जिस समय होश में आई थी, संवाहक ने वसन्तसेना को उसके कंगन को देखकर ही पहचान लिया था। 'द्वितीय अंक' में हाथी के डर से भागती हुई स्त्रियों के छोटे-छोटे रत्नों से जुड़े हुए कंगन टूट रहे थे। शकार ने वसन्तसेना की हत्या करने के लिये चेट को सोने के कड़े देने का प्रलोभन दिया था।<sup>6</sup>

मेखला: इसको रशना, करधनी, काँची, हेममेखला, कनककक्रिणी आदि नामों से भी जाना जाता था। कुषाण और गुप्तयुगीन अनेक लड़ियों वाली करधनियाँ प्रदर्शित की गई हैं। अनेक लड़ियों एवं झालरों से युक्त होने के कारण मेखलाएं सुमधुर ध्वनियाँ करती थी। इस प्रकरण में वसन्तसेना कटिप्रान्त में मोतियों से अद्भुत मेखला धारण किये हुए थी।<sup>7</sup> गज के भय से डरकर भागती हुई स्त्रियों के नूपुर एवं मणियों से युक्त करधनियाँ टूटती हुई बताई गई हैं।<sup>8</sup>

नूपुर (पायल/पायजेब): 'मत्स्य पुराण' से ज्ञात होता है कि पार्वती ने वीरक को नूपुर से अलंकृत किया था। हर्ष के क्षणों में स्त्रियाँ पैरों में नूपुर (पायजेब) पहनती थी। 'प्रथम अंक' में विट वसन्तसेना को सावधान करते हुये कहता है, 'हे भीरु! माला से निकलने वाली सुगन्ध तथा शब्द करने वाले नूपुर तुम्हें सूचित कर देंगे।'<sup>9</sup> द्वितीय अंक में भागती हुई स्त्रियों के नूपुर टूट रहे थे।

कुण्डल: इसको भी नर-नारी दोनों पहनते थे। ब्रह्माण्ड पुराण में कृष्ण को मकराकृति कुण्डलों को धारण किए हुए वर्णित किया गया है।<sup>10</sup> स्त्रियाँ कानों में कर्णाभूषण, कर्णपूर तथा बालिकाएं 'नासक' नामक आभूषण धारण करती थीं। शकार के भय से भागती हुई वसन्तसेना के कुण्डल चंचल हो उठे थे।<sup>11</sup>

रत्नावली: धूता को उसके नैहर से रत्नों की माला (रत्नावली) मिली थी।<sup>12</sup> वसन्तसेना के आभूषणों की चोरी हो जाने पर इस रत्नावली को धूता ने सहर्ष विदूषक को उनके बदले में देने के लिये प्रदान किया था। वसन्तसेना के सुवर्णभाण्ड में रखे समस्त आभूषणों से यह कीमती थी। विदूषक ने इसे चारों समुद्रों की सारभूत रत्नावली कहा है।<sup>13</sup>

हार: शकार ने वसन्तसेना को वशीभूत करने के लिये गाड़ी (रथ) के साथ दस हजार सोने की मोहरों का अलंकार (हार) भेजा था।<sup>14</sup>

सुवर्णभाण्ड: यह आभूषणों को रखने की 'पेटिका' होती थी, जिसमें स्त्रियाँ अपने आभूषण रखती थी। वसन्तसेना ने चारुदत्त के घर धरोहर के रूप में सुवर्णभाण्ड को ही रखा था। जिसकी रक्षा की जिम्मेदारी चेट एवं विदूषक दोनों की थी।<sup>15</sup>

आभूषण निर्माण: विदूषक ने वसन्तसेना के महल के 'छठे' खण्ड में विविध प्रकार के आभूषणों एवं श्रृंगार की सामग्री का निर्माण करते हुये कारीगरों को इस प्रकार देखा था, 'अरे! आश्चर्य है। इस 'छठे खण्ड' में भी मरकत मणि जटित सोने एवं रत्नों के बने हुए नक्काशीदार तोरण इन्द्रधनुष की सी शोभा दिखा रहे हैं। कारीगर लोग वैदूर्य, मोती, मूंगा, पुष्पराग, इन्द्रनील, कर्कतरक, पद्मराग, मरकत आदि विशिष्ट रत्नों का आपस में विचार कर रहे हैं। सोने के जेवरों में मणियाँ जड़ी जा रही हैं। सोने के जेवर गढ़े जा रहे हैं। लाल डोरियों से मोतियों के आभूषण गूँथे जा रहे हैं। धीरे-धीरे वैदूर्य मणियाँ घिसी जा रही हैं। शंख काटे जा रहे हैं। मूँगे सान से खरादे जा रहे हैं। गीली केशर की तहें सुखाई जा रही हैं। कस्तूरी चलाई जा रही है। चन्दनरस विशेष रूप से घिसा जा रहा है। गन्ध मिलाये जा रहे हैं।<sup>16</sup>

उपर्युक्त वर्णन से ज्ञात होता है कि उस काल में सोने, रत्नों एवं जवाहरात आदि से आभूषणों को निर्मित किया जाता था। सम्भवतः गरीब लोग चांदी के आभूषण पहनते रहे होंगे। 'पंचम अंक' में कवि ने मूसलाधार वर्षा की बूदों को चांदी की रस्सियों से समानता की है। एक स्थान पर 'ताम्र' का भी उल्लेख आया है।

श्रृंगार प्रसाधन: वसन्तसेना ने चेट्टी से सजाने सँवारने की वस्तुएँ मंगाई थी, जिससे अपने को सजाया था।<sup>17</sup>

पुष्पमाला: 'अभिरूपपति व्रत' के अवसर पर सूत्रधार के घर में एक स्त्री सुगन्धित द्रव्य पीस रही थी और दूसरी स्त्री फूलों की माला गूँथ रही थी।<sup>18</sup> शकार के द्वारा रात्रि में पीछा किये जाते समय वसन्तसेना फूलों की माला धारण किये हुए थी।<sup>19</sup> स्त्रियाँ अपने केशों में फूलों की माला गूँथती थी। विट वसन्तसेना से कहता है, "युवावस्था के अहंकार से कुलीन पुत्र का अनुगमन करने वाली यह तुम फूलों से सजे हुए सेवा करने के योग्य बालों को पकड़कर खींची जा रही हो।"<sup>20</sup>

जूड़ा: नारियों में जूड़ा बनाने का प्रचलन था। शकार ने वसन्तसेना के केशवृन्द (जूड़ा) को उसकी प्रकार से पकड़ लिया था, जिस प्रकार चाणक्य ने द्रौपदी का केशवृन्द पकड़ा था।<sup>21</sup> स्त्रियाँ आजकल की ही तरह बालों के मध्य से माँग निकालती थी। सूत्रधार क्रोधपूर्वक कहता है, "अरे दासी के बच्चे जूर्णवृद्ध! क्रुद्ध राजा पालक के द्वारा नई वधू के सुगन्धित केशपाश की भाँति, तुझे चीरा जाता हुआ कब देखूँगी।"<sup>22</sup> लम्बे केशों वाले पुरुष भी चोटी बाँधते थे। शकार ने अपने कच्चों की विचित्रता का उल्लेख इस प्रकार किया है, "मेरे शिर के केशों में एक क्षण में गाँठ लगती है, तो दूसरे क्षण में जूड़ा बना लेता हूँ, क्षणभर में मामूली बाल बन जाते हैं, तो दूसरे क्षण में घुँघराले बाल बन जाते हैं। पुनः क्षणभर में ऊपर की ओर जूड़ा बन जाता है। सचमुच में बड़ा ही चित्र विचित्र राजा का साला हूँ।"<sup>23</sup>

इत्र: उस समय लोग इत्र का भी प्रयोग करते थे। जूर्णवृद्ध ने चमेली के पुष्पों से सुवासित उत्तरीय चारुदत्त को भेंट किया था। वसन्तसेना गुलाबी रंग की पाउडर (चूर्ण) भी लगाये हुये थी। विट का कथन है, "चूर्णीकृत मनःशिल को अपने गुलाबी वर्ण वाले मुख से तिरस्कृत करने वाली तुम भयभीत हुईं नगर देवता की भाँति क्यों जा रही हो?"<sup>24</sup>

### सन्दर्भ:

1. नानाभरणसंयोगाद्यथा नार्या विभूषणम्। (वा0पु0 8-7-24), ब्रह्माण्ड पु0 3/62 /24)
2. नायकस्य च न विभुक्ताभूषणां विजने सन्दर्शनेन तिष्ठेत्। (कामसूत्र, पृ0 226 सूत्र-13)
3. भद्रे! न कदाचित्प्रियनिवेदनं निष्फलीकृतं मया।  
तद्गृह्यतां पारितोषिकमिदमङ्गुलीयकम्। (मृ0क0, पं0अं0, पृ0 373)
4. इति हस्तात्कटकमाकृष्य चेट्याः प्रयच्छति। (मृ0क0, द्वि0अं0, पृ0 163)
5. वलयाश्च सुन्दरतरा रत्नाङ्कुरजालप्रतिबद्धा। (मृ0क0 2-19)
6. पुत्रक स्थावरक चेट! सुवर्णकटकानि दास्यामि। (मृ0क0 अ0अं0 पृ0 508)
7. किं त्वं कटीतटनिवेशितमुद्गहन्ती ताराविचित्ररुचिरं रशनाकलापम्।  
(मृ0क0 1-27)
8. विचलति नूपुरयुगलं छिद्यन्ते च मेखला मणिखचिताः। (मृ0क0 2-19)
9. त्वां सूचयिष्यति तु माल्यसमुद्भवोऽयं गन्धश्चभीरु! मुखराणि च नूपुराणि।  
(मृ0क0 1-35)
10. मकरसुदशे कुण्डले सन्दधानाः। (ब्रह्माण्ड पु0 3-42-20)
11. प्रसरसि भयविकलवा किमर्थं प्रचलितकुण्डलघृष्टगण्डपार्शवा। (मृ0क0 1-24)
12. इयं च मे एका मातृगृहलब्धा रत्नावली तिष्ठति। (मृ0क0, तृ0अं0, पृ0 227)
13. भोः! कथं न विनष्टम् ? यदभुक्तपीतस्य चौरैरपहतस्याल्पमूल्यस्य सुवर्णभाण्डस्य कारणाच्चतुःसमुद्रसारभूत रत्नमाला हारिता। (मृ0क0, पं0अं0, पृ0 323)
14. आर्ये! येन प्रवहणेन सह सुवर्णदशसाहस्त्रिकोऽलंकारोऽनुप्रेषितः।  
(मृ0क0, च0अं0, पृ0 239)
15. आर्यमैत्रेय! एतत्सुवर्णभाण्डं मम दिवा, तव रात्रौ च, तद्गृहाण।  
(मृ0क0, द्वि0अं0, पृ0 190)

16. आश्चर्यं भोः, इहापि षष्ठे प्रकोष्ठेऽमूनि तावत्सुवर्णरत्नानां कर्मतोरणानि नीलरत्नविनिक्षिप्तानीन्द्रायुधस्थानमिव दर्शयन्ति। वैदूर्यमौक्तिकं प्रवालकं- पुष्परागेन्द्रनीलकर्णैरकपद्मरागमरकतप्रभृतीत्रलविशेषानन्योन्यं विचारयन्ति शिल्पिनः। बध्यन्ते जातरूपैर्माणिक्यानि। घट्यन्ते सुवर्णालंकाराः। रक्तसूत्रेण ग्रथयन्ते मौक्तिकाभरणानि। घृष्यन्ते धीरं वैदूर्याणि। छिद्यन्ते शङ्खाः। शाणैर्घृष्यन्ते प्रवालकाः। शोष्यन्त आर्द्रकृङ्कुमप्रस्तराः। सार्यते कस्तूरिका। विशेषेण घृष्यते चन्दनरसः। संयोज्यन्ते गन्धयुक्तयः। (मृ0क0, च0अं0, पृ0 297)
17. चेति! उपनय मे प्रसाधनम्। आत्मानं प्रसाधयिष्यामि। (मृ0क0, ष0अं0, पृ0 397)
18. एका वर्णकं पिनष्टि, अपरा सुमनसो ग्रथ्नाति। (मृ0क0, प्र0अं0, पृ0 17 )
19. त्वां सूचयिष्यति तु माल्यसमुद्भवोऽयं (मृ0क0, 1-35)
20. केशेषु कृसुमाढ्येषु सेवितव्येषु कर्षिता। (मृ0क0, 1-40)
21. केशवृन्दे परामृष्टा चाणक्येनेव द्रौपदी। (मृ0क0 1-39)
22. आः दास्याःपुत्रं जूर्णवृद्ध! कदा नु खलु त्वां कुपितेन राज्ञा पालकेन नववधूकेशहस्तमिव ससुगन्धं छेद्यमानं प्रेक्षिष्ये। (मृ0क0, प्र0अं0, पृ0 22)
23. क्षणेन ग्रंथिः क्षणजूलिका मे क्षणेन बालाः क्षणकुन्तला वा।  
क्षणेन मुक्ताः क्षणमूर्ध्वचूडाश्चित्रो विचित्रोऽहं राजश्यालः॥ (मृ0क0 9-2)
24. वक्रेण निमर्थितचूर्णमनःशिलेन त्रस्ताद्भुतं नगरदैवत्वत्प्रयासि। (मृ0क0 1-27)

# भारत में पर्यटन संस्कृति

## बिहार के विशेष संदर्भ में

डॉ० किरण कुमारी

एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, गंगा देवी महिला कॉलेज, कंकड़बाग, पटना

पर्यटन का इतिहास मनुष्य का इतिहास है, संस्कृति का इतिहास है, सभ्यता का इतिहास है। पर्यटन प्राणी की जन्मजात सहज प्रवृत्ति है। इससे वह बहुत कुछ सीखता है। आर्य पर्यटनशील थे। भारतीय ऋषियों की इसी प्रवृत्ति के कारण आज अनेक स्थानों पर एक ऋषि का आश्रम मिलता है। पर्यटन का ही देन है भारतीय धर्म और संस्कृति का विश्व में साम्राज्य विस्तार, जिसके कारण कुछ क्षेत्र वृहत्तर भारत कहलाए। इसी के कारण पं० राहुल साँकृत्यायन ने नालन्दा विश्वविद्यालय के पुस्तकालय का विशाल बौद्ध ग्रंथों का भण्डार जो नेपाल में गुमनामी में पड़ा था उसे पुनः पटना संग्रहालय को लौटा लाने का प्रयास किया। विंटरनिट्स ने लिखा है -

"If we wish to learn the beginning of our own culture' If we wish to understand the oldest Indo- European culture we must go to India, where the oldest literature of an Indo -European people is preserved."

प्राचीन पाषाण युग में यानी पचास हजार ई० पूर्व से दस हजार ई० पूर्व तक मनुष्य जानवर की भाँति भ्रमण करता हुआ, गुफा, कन्दरा, कुटिया एवं कानन में निवास करता रहा। उस समय उसकी आवश्यकता कम थी एवं वह केवल उदर पूर्ति तक ही सीमित थी, परन्तु नवीन पाषाण युग यानी दस हजार ई० पूर्व से तीन हजार ई० पूर्व तक मनुष्य ने छोटा-मोटा आलय बनाया तथा कुछ अन्नों को उपजाना सीख लिया। इस युग में भी उसका भ्रमण कार्य सीमित ही रहा; क्योंकि दिन भर घूमने के पश्चात् संध्या वेला में वापस लौट आना उसका नित्य कार्य था, जिसके क्रम में उसे धातु-युग में सोना, चाँदी, ताँबा, काँसा एवं लोहा जैसी धातुओं का ज्ञान हुआ और इन धातुओं को वह अपने जीवनयापन के लिए व्यवहार में लाने लगा।

सिंधु नदी घाटी की सभ्यता के समय तक आते-आते विकास की रश्मियाँ फैलने लगीं एवं लोग अच्छे घर बनाने लगे, भव्य भवन निर्मित करने लगे एवं आने-जाने के लिए रास्ते का निर्माण करने लगे। फिर वे बाहर आने-जाने लगे, स्थान चयन करने लगे एवं सुखद जीवन के लिए सवारियों का प्रयोग करने लगे। प्राचीन काल से ही मेगास्थनीज, पुलटार्क, एरियन, फाहियान, ह्वेनसांग, इत्सिंग जैसे पर्यटक भारत की अवनी पर आते रहे हैं एवं यहाँ की सम्पदाओं एवं ऐश्वर्यों से विदेशी जनों को अवगत कराते रहे हैं। मोरक्को के नामवर पर्यटक इब्नबतूता द्वारा रचित 'उल-रहला' में हिन्दुस्तान का विस्तृत विवरण मिलता है तो तुर्की पर्यटन अलबरूनी भी 'भारत' नामक पुस्तक में देश का वृत्तान्त लिखता है, जिसे जानकर हम उल्लसित होते हैं। संसार का विख्यात पर्यटक मार्को पोलो भी अपनी यात्रा का सम्यक् उल्लेख करता है, जिसे अवलोकन करने पर प्राचीन काल की जानकारी मिलती है। इटली का पर्यटक निकोली कोण्टी भी प्राचीन काल की रीति-रिवाज एवं जनता की हालत का

सम्यक् उल्लेख करता है तथा ईरानी राजदूत अब्दुल रज्जाक भी भारत का भ्रमण कर यहाँ की स्थिति की चर्चा करता है। एक तरफ पूर्तगाली पर्यटक डोमिगोज पेइक भी दक्षिण भारत का उल्लेख करता है, जिसमें विजयनगर का पूर्ण विवरण मिलता है तो दूसरी तरफ विख्यात पर्यटक एंडोडों बारबोसा भी अपनी यात्रा के दौरान दक्षिण भारत का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता है, जिसे पढ़कर हम हर्षित होते हैं, जिसके क्रम में अनन्तर इस अवनी के पर्यटक भी विदेशों में आने-जाने लगते हैं एवं यहाँ की गुरुता की किरणें भी विदेश की धरित्री पर फैल जाती है।

विज्ञान के बढ़ते चरण के दौरान हर क्षेत्र में प्रगति की विभा फैलती है, औद्योगिक विकास होता जाता है एवं लोग पढ़ने-लिखने में तल्लीन रहने लगते हैं, जहाँ समय के अन्तराल में मोटर गाड़ियाँ दौड़ने लगती हैं, कारें चलने लगती हैं एवं लोग दूर का सफर करने लगते हैं। एक तरफ रेलगाड़ी के आविष्कार से पूरा देश एक हो जाता है, हिमालय से कन्याकुमारी तथा बंगाल की खाड़ी से अरब सागर तक गाड़ियाँ चलने लगती हैं तो दूसरी तरफ वायुयान के उपयोग से लोग आकाश में उड़ने लगते हैं, तथा जलयान के प्रयोग से अथाह नदी एवं सागर में तैरने लगते हैं। जैसे-जैसे परिवहन की सुविधा बढ़ती जाती है, भ्रमण का कार्य भी बढ़ता जाता है। अब उत्तर का पर्यटक दक्षिण भारत का भ्रमण कर शीघ्र लौट आता है तथा दक्षिण भारत का यात्री उत्तर भारत का दर्शन कर शीघ्रतिशीघ्र वापस आ जाता है। इस तरह गगन-पथ, सलिल पथ एवं रेलमार्ग के कारण पूरा देश एक हो जाता है, देशवासी एक हो जाते हैं एवं सर्वत्र अखंडता का वारिधर दिखता रहता है। आज का पर्यटन सुविधाओं से सुसज्जित है, सुरक्षाकर्मियों से सुरक्षित है, जहाँ जाने पर कुशल-मंगल का वातावरण बन जाता है एवं ऐसा लगता है कि हम देवसदन में हैं, परम पद पा गये हैं, साकेत में पहुँच गये हैं एवं अमर लोक में अमर हो गये हैं।

पर्यटन से आँखों देखी वस्तुस्थिति की जानकारी हासिल होती है, दृश्यमान घटित घटना की विवरण मिलता है, अच्छा-खासा आचार-विचार का उल्लेख झलकता है, अद्भूत रीति-नीति की झलक मिलती है एवं तरह-तरह के मूल प्रवृत्ति की आभा निखरती रहती है। यही कारण है कि जैसे ही हमें इन शोहरत का पता विदेशी पर्यटकों के यात्रा-वृतान्त से अवगत होते हैं, एकाएक भारतधरित्री की सहज वृत्ति, मर्यादित प्रकृति एवं सीलन भरे जीवनयापन का शोभान्वित चित्रण प्रस्तुत हो जाता है। प्रायः पर्यटकजन स्वयं भारतीय स्थलों का भ्रमण करते हैं, यहाँ की जीवन-पद्धति, कार्य-विधि एवं रीति-नीति का अवलोकन करते हैं तथा उसे लिपिबद्ध कर स्थायी मिशाल प्रस्तुत करते हैं। जो निम्नलिखित हैं -

1. भारतवर्ष की प्राकृतिक सुषमा
2. भारतवर्ष का आध्यात्मिक चमत्कार
3. भारतीय जन-जीवन का यथार्थ चित्रण
4. भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिवृत्त
5. भारतीय धर्म एवं दर्शन का दिग्दर्शन
6. भारतीय संस्कृति, कला एवं साहित्य भी अनमोल विरासत का निदर्शन
7. आचार-विचार का सम्यक् निरूपण
8. लोकनीति, लोकव्यवहार एवं लोक परम्परा का प्रतिपादन
9. उदंत, वृतांत एवं हाल का विवरण
10. सामाजिक दशा एवं संरचना का चित्रण
11. परम्परा एवं रीति-रिवाज का परिवृत्त

यात्रा वृत्तांत यथार्थ के बोधक हैं, ज्ञान के स्रोत हैं, इतिहास के आधार स्तम्भ हैं, जहाँ भारतीय एकता की साया है, भारतीय विशालता की विभा है, भारतीय गुरुता की प्रभा है, जिसे पढ़कर हम भारतीय अनुपमेयता को ध्यानपूर्वक निहारने लगते हैं। यहाँ की दीप्ति का श्री देखने लगते हैं एवं यहाँ की द्युति की झलक पा एहसानमन्द हो उठते हैं। इस अतलस्पर्शी सूचना की उपेक्षा कर हम इतिहास नहीं जान सकते हैं एवं इतिहास के मूल तत्त्व को नहीं समझ सकते हैं। यहाँ हम उन ख्यातिप्राप्त विदेशी पर्यटकों को देखना चाहेंगे, जिनके साहित्य में देशों की अगाध गरिमा निखरती रहती है, राष्ट्र का प्रकाश दिखता रहता है एवं जनता-जनार्दन की चमक-दमक झंकृत होती रहती है। आइए, पहले हम बीस ख्याति प्राप्त पर्यटकों का अवलोकन कर लें, जिनकी विद्वत्ता से यहाँ की श्रेष्ठता सदा झलकती रही है एवं झंकृत होती रहेगी।

**( क ) यूनानी पर्यटक**

- |                  |                 |
|------------------|-----------------|
| 1. स्काइलैक्स    | 2. हेरोदोतस     |
| 3. केसिअस        | 4. निआर्कस      |
| 5. एरिस्टीब्यूलस | 6. ओनेसिक्रिट्स |
| 7. मेगास्थनीज    | 8. डोमेकेस      |
| 9. डायोनीसिअस    |                 |

**( ख ) चीनी पर्यटक**

- |            |               |            |
|------------|---------------|------------|
| 1. फाहियान | 2. ह्वेन-सांग | 3. ईत्सिंग |
|------------|---------------|------------|

**( ग ) रोमन पर्यटक**

- |           |
|-----------|
| 1. टोलेमी |
|-----------|

**( घ ) अन्य पर्यटक**

- |                   |                     |
|-------------------|---------------------|
| 1. अलवरुनी        | 2. इब्नबतूता        |
| 3. मार्को पोलो    | 4. अब्दुल रज्जाक    |
| 5. डोमिगोज पेड्रज | 6. निकोली डी कोण्टी |
| 7. एडाडो वारवोसा  |                     |

**यूनानी पर्यटक**

**स्काइलैक्स** - यूनानी योद्धा जो (छठी शताब्दी ई. पूर्व) प्रारंभिक नरेश के निर्देश पर सिन्ध नदी की खोज में आया था, जो गहराई से भारत का अता-पता लगाता है, खोज-ढूँढ़ करता है एवं अपने अन्वीक्षण के दौरान भारतजया की खोज-खबर हासिल कर लेता है। इनके ईजाद से, अनुसंधान से पथ का अता-पता मिल जाता है, भारतीय ऐश्वर्य का ज्ञान हो जाता है एवं विदेशी जन भारतीय गुरुता को देखने एवं पाने के निमित्त आतुर हो उठते हैं। अपने परिभ्रमण के दौरान यह यायावर यहाँ की रमणीयता एवं कमनीयता से प्रभावित हो जाता है तथा यहाँ की श्री से संसार को अवगत करा देता है, जिसके कारण भारतवर्ष का सही पता लग जाता है एवं लोग आना-जाना प्रारंभ कर देते हैं।

**हेरोदोतस** - यह यूनान का प्रख्यात इतिहासकार था, जिसने अपने ग्रन्थ हिस्टोरिका में भारत सम्बन्ध की जानकारी दी है, जो 484 से 425 ई. पूर्व में भारतवर्ष की सम्यक् जानकारी प्राप्त करता है। अपने सैर सपाटे के क्रम में वह भारतवर्ष के उत्तरी-पश्चिमी सीमा प्रान्तों से सम्पर्क करता है एवं

उनसे सही जानकारी हासिल करता है। तत्पश्चात् यह सैरवाज यहाँ के निवासियों एवं परंपराओं के संबंध में सम्यक् सामग्री प्रस्तुत करता है।

**केसिस** - फारस सम्राट अटार्जे रेक्सस का राजवैद्य एवं अग्रगण्य इतिहासकार केसिस अपनी धुमक्कड़ी के दौरान फारस में रहे भारतीयजनों एवं भारतवर्ष से वापस आए व्यापारियों से सम्पर्क करता है। तत्पश्चात् वह पर्यटक भारत राष्ट्र की श्रेष्ठता एवं यहाँ के निवासियों की मान्यताओं के संबंध में बहुमूल्य जानकारी प्रस्तुत करता है, जिसका सूचनाबद्ध विवरण 'इण्डिया' नामक पुस्तक में देखने को मिलता है। 416-398 ई० पूर्व का यह प्राचीन इतिहासकार ईरान पर भी "पर्शिका" नाम का ग्रन्थ लिखता है, जिसके अध्ययन से भारतवर्ष एवं ईरान के संबंध में गहरी जानकारी मिल जाती है एवं कुछ भूले-बिसरे तथ्यों से लोग अवगत हो जाते हैं।

**निआर्कस, एरिस्टीब्यूलस तथा ओनेसिक्रिटस** - ये मकदूनिया के महान विजेता सिकन्दर का नौसेना अधिकारी थे। उसी ने सिकन्दर के जलश्रोतों का पहले झेलम नदी से सिन्धु नदी के मुहाने तक और उपरान्त फारान की खाड़ी होते हुए नजला और फरोत नदियों के मार्ग से सूसा पहुँचने का नेतृत्व किया था। 400 ई० में मेसिडोनिया सम्राट फिलिप के पुत्र एवं महान महत्वाकांक्षी सिकन्दर अपने साथ निआर्कस, एरिस्टीब्यूलस एवं ओनेसिक्रिटस नामक तीन यूनानी विद्वानों एवं लेखकों को लाता है। ये यूनानी लेखक एवं विद्वान् विजेता सिकन्दर के साथ भारत की पावन धरित्री पर आते हैं एवं यहाँ के लालित्य एवं अलबेलापन से संसार को अवगत कराते हैं। नियाकस का भारत वृत्तांत, एरिस्टीब्यूलस का सिकन्दर युद्ध एवं ओनेसिक्रिटस की सिकन्दर-जीवनी काफी उत्तेजक एवं उपयोगी हैं, जिन्हें अध्ययन करने से तत्कालीन भारतवर्ष की जानकारी हासिल हो जाती है।

**मेगास्थनीज** - चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में यूनानी शासक सेल्यूकस का यह दूत 315 ई० में आया था। उसने अपने अनुभव, अपनी रचना इंडिका में प्रस्तुत किये हैं। उसकी रचना तो उपलब्ध नहीं मगर उसके उद्धरण परवर्ती इतिहासकारों की रचनाओं में सुरक्षित है। इसने पाटलीपुत्र नगर और उसके प्रशासन की विस्तृत चर्चा है। मेगास्थनीज ने पाटलीपुत्र को "पालिम्ब्रोथ्रा" कहकर पुकारा है। इसके अनुसार यह भारत का सबसे बड़ा शहर था जो 80 स्टेडिया ( $9\frac{1}{2}$  मील) लम्बा और 15 स्टेडिया

( मील) चौड़ा था। यह गंगा और सोन नदियों के संगम पर स्थित था। उसके अनुसार यह सूसा और एकबताना के नगरों से सुंदर था। इसकी सुरक्षा के लिए एक गहरी खाई थी और एक सुरक्षात्मक दीवार जिसमें 64 दरवाजे और 570 मीनार थे। नगर प्रशासन की देख-रेख 30 सदस्यों के एक बोर्ड द्वारा की जाती थी। यह बोर्ड 6 समितियों में विभाजित था। पहली समिति कारीगरों और शिल्पकारों की निगरानी करती थी, दूसरी विदेशियों की देख-रेख, तीसरी जन्म एवं मृत्यु का पंजीकरण, चौथी वाणिज्य-व्यापार और माप-तौल की पद्धति की देख-रेख, पाँचवीं कारीगरों द्वारा उत्पादित माल का विक्रय और छठी व्यापार-संबंधी चुंगी की वसूली करती थी। इसके अतिरिक्त, इस बोर्ड के सदस्य सामूहिक रूप से सार्वजनिक भवनों की देखभाल, नगर की सफाई आदि की भी देख-रेख करते थे। यह सदस्य अष्टनोमई कहे जाते थे। मौर्यकालीन भारत के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए मेगास्थनीज का वृत्तान्त महत्वपूर्ण स्रोत ग्रन्थ है क्योंकि इसमें पहली बार उस काल का तिथिकार विवरण मिलता है।

**डोमेकस** - यूनानी सम्राट के आदेश पर राजदूत डोमेकस मौर्य विन्दुसार के समय यानी 297-272 ई० पूर्व में भारतवर्ष का भ्रमण करता है एवं यहाँ की सामाजिक परम्परा, जीवन-पद्धति एवं रहन-सहन का विस्तृत उल्लेख करता है। इनके द्वारा रचित पुस्तक अभी उपलब्ध नहीं है, पर कुछ इतिहासकारों की पुस्तकों में इनकी विवरणी सदा झलकती रहती है।<sup>5</sup>

**डायोनीसियस** - डोमेकस की भाँति डायोनीसियस भी भारतवनी का भ्रमण करता है एवं अपनी आँखों देखी हालत का सम्यक् विवरण प्रस्तुत करता है। अपनी विद्वत्ता से यह पर्यटक भारत की राष्ट्रीय गरिमा का सम्यक् निरूपण करता है, जिसे जान कर हम हर्षित हो उठते हैं।<sup>5</sup>

**चीनी पर्यटक** - फाहियान चीनी तीर्थ यात्री, जो भारत में 409 से 490 ई० तक रहा। वह विनय-पिटक की प्रामाणिक प्रति प्राप्त करने के उद्देश्य से आया था। यह पश्चिमी चीन से चलकर गोबी मरूस्थल के दक्षिण में लापनोर होते हुए खेतान आया, जहाँ बौद्ध धर्म की महायान शाखा का प्रचलन था। वह पामीर पार करते और भयंकर कष्टों का सामना करते हुए उदय नोर (स्थान पहुँचा), उसके बाद तक्षशीला होते हुए पुरुषपुर (पेशावर) पहुँचा। समस्त उत्तरी भारत के यात्रा करते हुए वह तीन वर्ष पाटलीपुत्र में तथा दो वर्ष ताम्रलिप्ति (आधुनिक पश्चिम बंगाल) में रहा। उस जमाने में ताम्र लिप्ति प्रसिद्ध बन्दरगाह था।<sup>6</sup>

चीन देश का प्रथम प्रतिष्ठित एवं विद्वान् यात्री फाहियान सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय में भारत का परिभ्रमण करता है एवं 399-414 ई० यानी पन्द्रह वर्षों तक रह कर यहाँ की गुरुता, श्रेष्ठता एवं अनुपमेयता का अनुभव करता है। वह मथुरा, काशी, पाटलिपुत्र, वैशाली, कुशीनगर, कपिलवस्तु, श्रावस्ती, कन्नौज, जावा, सिंहल, गांधार, तक्षशीला, पेशावर, पंजाब, बोध गया, राजगृह, नालंदा आदि स्थानों का भ्रमण कर भारतवर्ष की उदात्त सभ्यता का उल्लेख करता है। वह यह भी लिखता है कि भारतवर्ष के लोग खून-खराबी, अपराध एवं अभिघात से दूर रहते हैं एवं सुख-शांति से जीवन व्यतीत करते हैं।

**ह्वेनसांग** - बौद्धधर्म के महायान सम्प्रदाय का अनुयायी था। उसका बौद्ध धर्म का ज्ञान अत्यन्त विशद था। उसने अपनी यात्रा का वृतांत लिखा है जो बारह खंडों में है। यह कई साल तक नालंदा विश्वविद्यालय का विद्यार्थी रहा और उसने विश्व (600-64) विद्यालय के जीवन का अत्यन्त रोचक वर्णन किया है। हर्षवर्धन ने उसे स्वदेश वापस लौटने के लिए विपुल धन दिया और सैनिकों की एक टुकड़ी साथ कर दी। उसने भगवान बुद्ध के शरीर की 15 धातुएँ उसकी सोने, चाँदी और चंदन को बहुत सारे मूर्तियों और 657 हस्त लिखित ग्रंथ लेकर जिनको देने के लिए बीस खच्चों की आवश्यकता पड़ी थी, 645 ई० में चीन वापस लौटा। चीन में उसके शेष जीवन इस बौद्ध ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद करने में बीता। मृत्यु से पूर्व 74 ग्रंथों का अनुवाद पूरा कर चुका था।

**इत्सिंग** - सन् 675 ई० में सुमात्रा होते हुए समुद्री राह से आने वाला चीनी भिक्षु इत्सिंग “भारत तथा मलयद्वीपपुंज में प्रचलित बौद्ध धर्म का विवरण” नामक पुस्तक लिखता है, जो इतिहास का स्रोत समझा जाता है। यह चीन का तीसरा यशस्वी पर्यटक है, जो सन् 673-695 के बीच भारतवर्ष का भ्रमण करता है एवं अपनी खुली आँखों से यहाँ की हर वस्तु एवं वृतांत को देखता है। यही कारण है कि इनके वृतांत में अनुपमेयता है, अलबेलापन है, हृदयग्राहिता है, जिसे पढ़ कर हम देश की संस्कृति, शासन, व्यवस्था, धार्मिक पृष्ठभूमि एवं सामाजिक व्यवस्था से अवगत होते हैं। उसके यात्रा वर्णन में नालन्दा और विक्रम शिला जैसे बौद्ध शिक्षा केन्द्रों का उल्लेख है।

## रोमन पर्यटक

**टालेमी** - रोम का नामवर सैरवाज टालेमी अत्यधिक आपदा के बावजूद भी भारतीय सौष्ठव एवं ललामता से मुग्ध हो जाता है एवं यहाँ की प्राकृतिक छटा, अनुपम सौन्दर्य, भौगोलिक स्थिति एवं ऐतिहासिक तथ्य का सम्यक् उल्लेख करता है। इनके परिवृत्त से भारत राष्ट्र की प्राचीन गरिमा का बोध होता है एवं हम इसकी अनुपमेयता एवं अलबेलापन से अवगत हो जाते हैं।

## अन्य पर्यटक

**अलबरूनी** (973-1048 ई०) - रबीवा का रहने वाला मुलतान महमूद के समय 996-1030 ई० में उसे कैदी अथवा बन्धक के रूप में गजनी लाया गया था। भारत में रहकर उसने संस्कृत पढ़ी और हिन्दू दर्शन और इससे शास्त्रों का अध्ययन किया।

महमूद गजनवी का दरबारी एवं विद्यानुरागी अलबरूनी जैसे ही भारत की पावन धरा पर उपस्थित होता है, वह यहाँ की श्रेष्ठता, कल्याणकारी परम्परा एवं अनुकरणीय जीवन दर्शन से प्रभावित हो यहाँ का हो जाता है। अपनी यायावरी के दौरान अरबी एवं फारसी विद्वान अलवरूनी कई वर्षों तक यहाँ रह जाता है, व्यापक रूप से परिभ्रमण करता है एवं यहाँ के हिन्दू धर्म, गणित एवं, दर्शन का सम्यक् अध्ययन भी करता है। उसकी पुस्तक पढ़ने पर पता चलता है कि गणित, चिकित्सा एवं धर्मशास्त्र में उन्हें काफी रूचि थी। उनकी पुस्तक तहकीक-ए-हिन्द (भारत की खोज) में एक तरफ समाज का स्वरूप दिखता है, तो दूसरी तरफ देश का चित्रण निखरता है।<sup>8</sup>

**इब्नबतूता** - मोरक्को पर्यटक इब्नबतूता एक कीर्तिमान यायावर है, जो भारतवर्ष, लंका, सिंध, उत्तरी अफ्रीका, ईरान, अरब एवं कुस्तुनतुनिया का गहराई से सैर करता है। अपने भ्रमण कार्य क्रम के दौरान वह 'भारतीय निवासियों से सीधे मिलता है, उनकी जीवन-पद्धति से अवगत होता है एवं सामाजिक संरचना के संबंध में सही जानकारी प्रस्तुत करता है। इनकी पुस्तक 'किताब-उल-रहला' में वर्णित यात्रावृत्तान्त अलबेला है, अनुपमेय है एवं प्रशंस्य है।

**मार्को पोलो** - नामी-गिरामी पर्यटक मार्कोपोलो भारतधरा के अनेक स्थलों की सैर करता है एवं अपनी आँखों-देखा हाल का सम्यक् उल्लेख करता है। इनके यात्रा वृत्तान्त में मोहकता है, रंगीलापन है एवं लालित्य है, जिसे पढ़ कर हम उत्फुल्ल हो उठते हैं, सत्कर्म एवं सुकर्म बन जाते हैं।

**डोमीगोज पेड्रज** - यह पुर्तगाल का प्रख्यात पर्यटक है, जो अपनी यायावरी के क्रम में दक्षिण भारत का भ्रमण करता है एवं विजय नगर के संबंध में एक विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता है। इनके भ्रमण-प्रतिवेदन में मानवीय रहन-सहन, धार्मिक मान्यता एवं सामाजिक संरचना का सम्यक् निरूपण मिलता है। इस महाज्ञानी के वृत्तांत में मूल्यवान तथ्य एवं अतलस्पर्शी चित्रण की झॉकियाँ दिखती रहती हैं, जिसे पढ़ने से हमें सही वस्तुस्थिति की जानकारी प्राप्त होती है।

**निकोली कोण्टी** - यह इटली का ख्यातिप्राप्त पर्यटक है, जो 15 वीं शताब्दी के शुरू में भारत की पावन धरा पर आता है एवं यहाँ की दीप्ति एवं लालित्य को देख कर आश्चर्य चकित हो उठता है। सन् 1420 ई० में वह देव राय द्वितीय का छत्रछाया में विजयनगर में रहता है एवं इस नगर के संबंध में मनभावना विवरण प्रस्तुत करता है। इसके अनुसार नगर 60 फीट लम्बा है, जहाँ लोग घने रूप में रहते हैं। वहाँ के राजा की कई रानियाँ रहती हैं, जो अतिशय रूपवान एवं मतिमान होती हैं। इसके अतिरिक्त वह भारतवर्ष की राजनीतिक स्थिति, सांस्कृतिक सज-धज, सामाजिक रीति-रिवाज, लोकाचार एवं आचार-विचार का विस्तृत उल्लेख भी प्रस्तुत करता है, जिसे अवलोकन कर हम आज भी प्रभावान एवं मतिमान हो उठते हैं। इनके सुवेधित वृत्तांत में सौष्ठव है, सौम्यता है, सुहानापन है, अनूठापन है, एवं अलवेलापन है, जिसे पढ़ कर हम सुकृत हो उठते हैं एवं पुण्यवान बन जाते हैं।<sup>9</sup>

**एडोर्डो वारवोसा** - सन् 1516 ई० में एडोर्डो वारवोसा नामक एक संस्कारित पर्यटक दक्षिण भारत का पर्यटन करता है एवं खुली आँखों से देखी वस्तुस्थिति को लिपिबद्ध करता है। इनके पर्यटन-विवरण में विजयनगर के संबंध में विस्तृत जानकारी मिलती है जिस पढ़ कर हम दक्षिण भारत की गरिमा से अवगत हो जाते हैं। इनका वर्णन मनभावन है, मनोहारी है एवं प्रशंस्य है।<sup>9</sup>

**अब्दुल रजाक** - अब्दुर्रजाकर, हेराजत 1448 ई० में फारस के सुलतान शाहरूख का राजदूत होकर भारत आया। पहले वह कालिकट पहुँचा और वहाँ से विजय नगर गया, जहाँ का दिलचस्प वर्णन उसने किया है।<sup>10</sup> यह ईरान का प्रख्यात राजदूत था। यह पर्यटक भी दक्षिण भारत में अवस्थित विजयनगर का सम्यक् उल्लेख करता है जिसे अवलोकन कर हम दक्षिण भारत के संबंध में वांछित जानकारी हासिल करते हैं। इनके वृत्तान्त में माधुर्य है, मोहकता है, सौन्दर्य है, एवं हृदयग्रहिता है। इस प्रकार हम देखें तो पायेंगे कि प्राचीन काल से ही बिहार में विदेशी यात्रियों का आगमन होता रहा है। इनमें अनेक ने अपनी यात्रा के वृत्तान्त भी लिखे जिनमें बिहार की तत्कालीन परिस्थितियों का वर्णन मिलता है। इन यात्रियों में कुछ राजदूत थे, कुछ विद्वान, कुछ भ्रमणकर्ता और कुछ व्यापारी। इनमें कुछ महत्वपूर्ण यात्रियों का संक्षिप्त परिचय और उनके विवरण के कुछ अंश अग्रलिखित पृष्ठों में प्रस्तुत हैं।

**डिमाँक्लिस** - चंद्रगुप्त के उत्तराधिकारी बिन्दुसार के दरबार में डिमाँक्लिस, हिन्दू यूनानी शासकों के दूत के रूप में डिमाँक्लिस कार्यरत रहा था। उसके द्वारा कोई वृत्तान्त नहीं छोड़ा गया है, किन्तु पाटलीपुत्र में उसके निवास से पता चलता है कि हिन्दू यूनानी शासकों से मैत्रीपूर्ण संबंध इस काल में भी बन रहे थे।

**धर्मास्वामिन्** - तेरहवीं शताब्दी में यह विद्वान नालंदा महाविहार में शिक्षा प्राप्त करने आया। उसके अनुसार यहाँ पर यदा-कदा तुर्कों के आक्रमण हो रहे थे मगर महाविहार अभी भी सक्रिय अवस्था में था। यह विवरण महत्वपूर्ण है क्योंकि यह स्पष्ट होता है कि इन्ने बख्तियार खलजी के आक्रमण (1197-98) में नालंदा महाविहार का विनाश नहीं हुआ था।

**मुल्ला तकीया** - अकबर के शासनकाल में मुल्ला तकीया नामक यात्री ने जौनपुर से बंगाल की यात्रा की और इस क्षेत्र का वर्णन अपने यात्रा वृत्तान्त में किया। इसकी उपयोगिता सल्तनतकालीन बिहार के इतिहास के अध्ययन-स्रोत के रूप में हैं, परंतु इसकी पूर्ण प्रति अब सुरक्षित नहीं रही है। केवल इसके कुछ अंश, जो उर्दू में अनुवादित हैं और प्रकाशित हो चुके हैं, अब उपलब्ध हैं। इनमें उत्तर बिहार, खासकर दरभंगा क्षेत्र के संबंध में विस्तृत चर्चा है।

**अब्दुल लतीफ** - सत्रहवीं शताब्दी का यह ईरानी यात्री बिहार के क्षेत्र में 1600 ई० के लगभग आया। उसने गंगा नदी के मार्ग से आगरा से राजमहल तक यात्रा की। उसने चौसा, सहसराम, पटना, मुंगेर और राजमहल का विस्तार से वर्णन किया है। अधिकतर उसने नगरों, प्रमुख इमारतों और महत्वपूर्ण व्यक्तियों के बारे में चर्चा की है। उसका भी वृत्तान्त अब उपलब्ध नहीं है, परंतु उसका कुछ अंश अंग्रेजी में अनुवादित है और प्रकाशित हो चुका है।

**मोहम्मद सादिक** - सत्रहवीं शताब्दी में एक दूसरा ईरानी यात्री, मोहम्मद सादिक भी बिहार आया। 1619-20 ई० में उसका पिता दीवाने खालिसा नियुक्त होकर पटना आया। उसी के साथ मोहम्मद सादिक भी पटना में कई वर्षों तक रहा। उसने पटना शहर की सुंदरता और गौरव गाथा का वर्णन किया है और यहाँ के सुप्रसिद्ध विद्वानों की चर्चा की है। उसका वृत्तान्त "सुबहे सादिक" के नाम से जाना जाता है।

**मुल्ला बहबहानी** - यह ईरानी धर्माचार्य उन्नीसवीं शताब्दी में बिहार में कई बार आया। उसने मुर्शिदाबाद से राजमहल, भागलपुर, मुंगेर, पटना और सहसराम की यात्रा की। इन नगरों की स्थिति के बारे में, यहाँ के शिल्प-उद्योग, व्यापार, सराय की व्यवस्था आदि का उसने उल्लेख किया है। पटना नगर के धार्मिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक जीवन का उसने विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। वह इस नगर को "जन्नतुल हिन्दु" या भारत का स्वर्ग कहता है।

राजकुमार अजीम द्वारा नगर के नवनिर्माण और अजीमाबाद नामकरण की भी वह उल्लेख करता है। पटना में स्थित सैफ़ खाँ के मदर्से और वहाँ के प्रधानाचार्य की वह चर्चा करता है। उसके अनुसार इस आचार्य की ख्याति उसने ईरान में भी सुनी थी। उसने पटना में निवास कर रहे प्रमुख अंग्रेज अधिकारियों का भी उल्लेख किया है। पूर्वी भारत में ब्रिटिश सत्ता की स्थापना से उत्पन्न होने वाले हानिकारक परिणामों का भी उल्लेख बहबहानी करता है। उसका यात्रा वृत्तांत “मीरतु अहवाल” के नाम से विख्यात है।

**रैल्फ़ फ़िच** - 1585-87 के मध्य इस अंग्रेज यात्री ने मुगल साम्राज्य का भ्रमण किया। आगरा से बंगाल जाने के क्रम में वह बिहार के क्षेत्रों से गुजरा। पटना नगर का वर्णन उसने सविस्तार किया है। नगर की अवस्था, यहाँ के गली-कूचे और बाजार आदि की वह चर्चा करता है। उसने एक विचित्र घटना भी लिखी है कि पटना में लोग जमीन खोदकर सोने की खोज करते हैं। संभवतः उससे यहाँ पर भूल हुई है क्योंकि इस क्षेत्र से सोने की प्राप्ति का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। पटना के वस्त्र अफ़ीम और चीनी उद्योगों का भी वह वर्णन करता है। यहाँ के निवासियों, विशेषकर महिलाओं के अंधविश्वासपूर्ण आचरण का भी उसने उल्लेख किया है।

**पीटर मुंडी**- शाहजहाँ के आरंभिक शासनकाल में, भारत में अंग्रेज व्यापारिक अधिकारी के रूप में पीटर मुंडी 1628-34 तक रहा। 1632 ई० में वह पटना भी आया जो उस समय एक महत्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र था। उसने नगरवासियों, खासकर सामंतों के रहन-सहन के बारे में लिखा है। सामंतों के मनोरंजन आदि के साधनों का भी उल्लेख उसने किया है। वह एक विशेष प्रकार की कशितियों का उल्लेख करता है जो “मयूरपंखी” कहलाती थीं। यह पतली और लम्बी कशितियाँ थीं जिनमें दोनों ओर 20-30 पतवारें होती थीं जो अनेक रंगों में रंगी होती थीं। पतवार चलाने के क्रम में यह इन्द्रधनुषी रंग अत्यन्त सुंदर लगते थे। ऐसी कशितियों में सामंत गंगा की सैर करने निकलते थे। नगर की सीमाओं और आस-पास के क्षेत्रों का भी मुंडी ने वर्णन किया है। उसके अनुसार पटना अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का समृद्ध केन्द्र था जहाँ बड़ी संख्या में मंगोल, ईरानी और आरमीनियाई व्यापारी बसे हुए थे। यहाँ पर सैफ़ खाँ द्वारा निर्मित सराय और अन्य जनकल्याण संबंधी अन्य उपायों का भी उसने विस्तार से वर्णन किया है।

**मैनरीक** - यह यात्री पटना में सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में आया। उसने नगर की आबादी 2,00,000 बताई है। नगर में अनेक भव्य इमारतें, मस्जिदें और सरायें थीं और नगर के लोग खुशहाल थे। यह व्यापार का एम महत्वपूर्ण केन्द्र था और यहाँ के सर्राफ़ लाखों रूपयों का करोबार किया करते थे। यहाँ अत्यन्त सुन्दर सूती वस्त्रों का उत्पादन होता था जिनका निर्यात ईरान और मध्य एशिया को किया जाता था।

**जॉन मार्शल** - लगभग इसी समय एक अंग्रेज यात्री, जो व्यवसाय से चिकित्सक था, बिहार में आया। उसने भी पटना नगर की बनावट और लोगों के रहन-सहन, यहाँ के चिकित्सकों, संगीतज्ञों और फ़कीरों व दर्वेशों की चर्चा की है। जॉन मार्शल का आगमन ऐसे समय में हुआ जब 1670-71 ई० का अकाल अपनी भीषण अवस्था में था। उसके अनुसार अनाज बहुत महंगा हो गया था और चावल चार या पाँच रूपये मन बिक रहा था और गेहूँ ढाई रूपये मन। इस अकाल में पटना और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों में 1.5 लाख लोग मरे थे।

**मनुची** - शाहजहाँ के शासन के परवर्ती काल में यह इटालियन यात्री पटना आया। उसने यहाँ के व्यापार-वाणिज्य के संबंध में विस्तार से लिखा है।

**तैवर्नीये** - यह फ्रांसिसी यात्री 1665-66 ई० के लगभग पटना आया। उसने बिहार की प्रशासनिक व्यवस्था और लगान आदि के साथ व्यापार की भी चर्चा की है। उसने पटना में उच्च (हॉलैन्ड निवासी) व्यापारियों द्वारा शोरे के व्यापार का भी उल्लेख किया है। यहाँ उसकी भेंट आरमीनियाई व्यापारियों से भी हुई। उसके अनुसार भूटान, असम और त्रिपुरा जैसे दुर्गम क्षेत्रों से भी पटना का व्यापार होता था।

**बिशप हीबर** - यह अंग्रेज पादरी 1824 ई० में गंगा नदी के मार्ग से पूर्वी भारत की यात्रा करता हुआ बिहार के अनेक नगरों से गुजरा। राजमहल, भागलपुर, पटना, दानापुर आदि में उसने कुछ समय तक निवास भी किया। यहाँ के इसाई निवासियों, अंग्रेजों और अन्य यूरोपियनों के धार्मिक और सामाजिक जीवन के संबंध में उसने विस्तृत चर्चा की है। उसकी सूचनाएँ काफी उपयोगी मानी जाती हैं। कुछ अन्य यात्री भी बिहार आये, या उन्होंने बिहार के संबंध में चर्चा की है। इनमें बर्नीये, टिफेन्थॉलर, बॉवरी आदि शामिल हैं। परन्तु उनके वृत्तांत इतने अधिक महत्वपूर्ण नहीं हैं। स्मरणीय है कि इन यात्रा-वृत्तांतों की विषय-वस्तु की संबंध यात्रियों की समकालीन अभिरूचि से है। मेगास्थनीज ने प्रशासनिक जीवन की चर्चा पर विशेष ध्यान दिया है, चीनी यात्रियों ने बौद्ध धर्म और शिक्षा से संबंधित बातों पर ध्यान केन्द्रित रखा है, ईरानी यात्री भी बौद्धिक जीवन और परिस्थितियों में अधिक अभिरूचि दिखाते हैं, जबकि यूरोपीय यात्रियों का ध्यान व्यापार एवं वाणिज्य संबंधी बातों पर रहा है।

बिहार, अपने ऐतिहासिक गौरव, सांस्कृतिक वैभव, भौगोलिक सम्पन्नता, प्राकृतिक सुंदरता, वन-सम्पदा और जीव-जन्तुओं की विविधता के कारण पर्यटकों के लिए स्वर्ग माना जाता रहा है। यहाँ एक ओर राजगीर, वैशाली, पाटलिपुत्र, सहसराम, रोहतास जैसे ऐतिहासिक स्थल हैं तो दूसरी ओर मैथन, बेतला और नेतरहाट का प्राकृतिक सौन्दर्य बिखरा है। एक ओर बोधगया, देवघर, बिहारशरीफ और पटना साहिब के पावन तीर्थ-स्थल हैं तो दूसरी ओर बोकारो, मैथन और जमशेदपुर में स्थित आधुनिक युग के 'मंदिर' हैं। यह एक ऐसा राज्य है जहाँ सभी धर्मों, रूचियों और परम्पराओं के लोगों के लिए पर्यटन के अनुकूल अवसर और उपयुक्त स्थल उपस्थित हैं। यहाँ की गौरवशाली परम्पराएँ, विलक्षण रीति-रिवाज, समृद्ध संस्कृति एवं सामाजिक जीवन पद्धतियाँ, मेले-त्योहार आदि, सदियों से देशी और विदेशी यात्रियों को आकर्षित करते रहे हैं।

राज्य में आने वाले पर्यटकों में 1980 के दशक से लगातार वृद्धि हो रही है। 1980 में जहाँ इस राज्य में मात्र 2,81,598 भारतीय एवं 19,976 विदेशी यात्रियों का आगमन हुआ था, वहीं वर्ष 1991 में इनकी संख्या बढ़कर क्रमशः 20,73,553 एवं 80,827 हो गई। देश के कुछ अन्य राज्यों की भाँति इस राज्य में भी अभी हाल तक पर्यटन आय का स्रोत नहीं समझा जाता था, लेकिन अब इसे सरकार द्वारा उपयुक्त मान्यता दी जाने लगी है। राज्य की आमदनी एवं यहाँ के निवासियों के रहन-सहन के स्तर में वृद्धि करने वाले एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में इसकी भूमिका को स्वीकार किया जाने लगा है। पर्यटन को सरकार द्वारा वर्ष 1987 से एक उद्योग के रूप में मान्यता भी दी जा चुकी है तथा इस क्षेत्र के समुचित विकास के लिए सातवीं पंचवर्षीय योजना अवधि में 958 लाख रुपये के व्यय का प्रावधान किया गया था। बिहार स्टेट टूरिज़्म डेवेलपमेंट कॉरपोरेशन का गठन करके राज्य सरकार ने पर्यटन उद्योग को बढ़ावा देने के विशेष उपाय किये हैं। राज्य के अनेक महत्वपूर्ण पर्यटक स्थलों के विकास एवं प्रचार के निमित्त विभिन्न कार्य सम्पन्न भी किये गए हैं। सैलानियों को आकर्षित करने एवं राज्य के पर्यटन स्थलों के संबंध में उपयुक्त जानकारियाँ उपलब्ध कराने के उद्देश्य से राज्य एवं राज्य के बाहर 48 पर्यटन सूचना केन्द्र संचालित किए गए हैं तथा आगन्तुक मेहमानों को आवासीय सुविधा उपलब्ध कराने के लिए 500 शय्या क्षमता के 16 पर्यटक होटल, पर्यटक बंगला,

कैफे हाउस आदि राज्य पर्यटन विकास निगम द्वारा संचालित किए जा रहे हैं। पर्यटकों को परिवहन की सुविधा उपलब्ध कराने के लिए निगम द्वारा कई डिलक्स बसें, मिनी बसें एवं कारें भी चलाई जा रही हैं।

जापानी सरकार के सहयोग से राज्य के बौद्ध स्थलों के विकास हेतु 125 करोड़ रुपये की एक वृहद् योजना का कार्यान्वयन भी प्रारंभ किया जा रहा है। राज्य सरकार पर्यटकों को उत्तम आवासीय सुविधा उपलब्ध कराने के लिए विभिन्न स्थलों पर होटलों का विकास तथा जल-विहार द्वारा उनके मनोरंजन के लिए पटना की गंगा नदी तथा हजारीबाग तोपचांची एवं राँची की झीलों का विकास एवं अन्य आवश्यक प्रबन्ध भी कर रही है। समय-समय पर पाटलिपुत्र, राजगीर, वैशाली आदि महत्वपूर्ण स्थानों पर विशेष उत्सवों एवं त्योहारों का आयोजन, छठ पर्व के अवसर पर पटना में एवं सोनपुर मेले के अवसर पर सोनपुर में पर्यटक ग्रामों की स्थापना भी की जा रही है। स्पष्ट है कि राज्य सरकार आठवीं योजना 1992-97 के अंत तक राज्य में आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या 1,50,000 एवं देशी पर्यटकों की संख्या 27,00,000 के लक्ष्य को प्राप्त करने को कृत संकल्प है तथा उसके लिए पूरी योजना अवधि में 3210 लाख रुपये खर्च किए जाने के प्रावधान भी किया गया है। राज्य में प्रमुख पर्यटनस्थल निम्नलिखित हैं।

**पटना** - आधुनिक पटना की स्थापना 16वीं सदी में शेरशाह सूरी ने प्राचीन कालीन पाटलिपुत्र नगरी के स्थल पर की। गंगा, सोन, गंडक और पुनपुन नदियों के बीच यह शहर विश्व के प्राचीनतम शहरों में एक है जिसका 2500 वर्षों का गौरवशाली इतिहास रहा है। इतिहास के लम्बे काल में इसे पाटलिपुत्र, पाटलिग्राम, कुसुमपुर, पुष्पपुर, अजीमाबाद आदि नामों से पुकारा गया। प्राचीन पाटलिपुत्र की स्थापना मगध के राजा अजातशत्रु ने ईसा से 500 वर्ष पूर्व की थी व चौथी तथा तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में लगभग पूरे उत्तर भारत पर मगध का वर्चस्व बना रहा। आज भी इसके प्राचीन अवशेष कुम्हारार स्थित पुरातत्व स्थल में देखे जा सकते हैं। 16वीं शताब्दी में कुछ समय के लिए यहाँ शेरशाह सूरी के नेतृत्व में पठानों का बोल-बाला रहा। इसी शहर में 1669 में सिक्खों के दसवें गुरु श्री गोविन्द सिंह का जन्म हुआ जिनकी याद में तख्त श्री हरमन्दिर की स्थापना हुई जो सिक्खों के चार मुख्य तीर्थ स्थलों में एक है। 18वीं सदी में अजीमुश शान जो मुगल बादशाह औरंगजेब का पोता था बिहार का प्रांतपति बना। उसने पटना का नाम बदलकर अजीमाबाद रखा।

पटना में अनेक दर्शनीय स्थल हैं। इनमें कुछ का विवरण इस प्रकार है - प्राचीन पाटलिपुत्र के अवशेष, कुम्हारार में बिखरे पड़े हैं। यह स्थान दक्षिणी पटना में, पटना जंक्शन रेलवे स्टेशन से लगभग 7 किमी० दूर स्थित हैं। 1813, 1912-15 में और 1951-55 के बीच पुरातात्विक खुदाई में यहाँ अनेक अवशेष मिले हैं। मौर्यकालीन राजप्रसाद के एक विशाल कक्ष के अवशेष मिले हैं। कुषाण और गुप्तकाल के भी अवशेष यहाँ मिले हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि 600 ई.पू. तक यहाँ निरंतर सम्पन्न आबादी रही है। इससे लगभग दो किमी पूरब में स्थित अगमकुआँ है। लोकश्रुति के अनुसार मौर्य सम्राट् अशोक ने एकच्छत्र राज करने की लालच में अपने 99 भाइयों की हत्या कर उनके शव इस कुएँ में मिटा दिये थे। इसका ऐतिहासिक साक्ष्य कुछ नहीं है। यहाँ पर शीतला देवी का मंदिर भी स्थित है। इसका जीर्णोद्धार और सौन्दर्यीकरण हाल के वर्षों में हुआ है। मध्यकालीन पटना के मुख्य अवशेष नगर के पूर्वी भाग में स्थित है। पटना साहिब रेलवे स्टेशन के लगभग 2 किमी. पश्चिमोत्तर में धवलपुरा में शेरशाह द्वारा बनाई हुई मस्जिद है। चौक थाना के निकट, उत्तर की ओर, सैफखान की बनाई हुई मस्जिद और मदरसे के अवशेष हैं। यह फारसी शिक्षा का सुप्रसिद्ध केन्द्र रहा था। इसके दक्षिण में कुछ ही दूर पर तख्त श्री हरमंदिर है जो गुरु गोविन्द सिंह का जन्मस्थल है। गुरुद्वारा की वर्तमान इमारत 1957 के लगभग बनी। इसमें जयपुर, नकराना और जोधपुर के सुन्दर, सफेद संगमरमर

का उपयोग हुआ है। पाँच मंजिल उँची इस इमारत में गुरु गोविन्द ही के हस्ताक्षरयुक्त ग्रंथ साहब की एक प्रति और हुकुमनामा सुरक्षित है। गुरुद्वारा से 3 किमी पश्चिम में शहर का सबसे पुराना ईसाई गिरजाघर है जो 1772 के लगभग बना था। इसके कुछ आगे ईसाइयों का कब्रिस्तान है जहाँ उन अंग्रेज अधिकारियों की कब्रें और उन पर बना स्मारक स्तंभ (obelisk) है जो बक्सर की लड़ाई के पूर्व नवाबमीर कासिम में फ्रांसिसी सेनानायक सोमरू के आदेश पर मार डाले गये थे। मध्यकालीन पटना की अंतिम सीमा पच्छिम दरवाजें में स्थित है।

मध्य पटना में स्थित खुदा बख्श लाईब्रेरी राष्ट्रीय महत्व का केन्द्र है जहाँ इस्लामी शिक्षा, मध्य एशियाई एवं मध्यकालीन भारतीय इतिहास से संबंधित असंख्य दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ और चित्रकला के उत्कृष्ट नमूने सुरक्षित हैं। यह पुस्तकालय विदेशों से आने वाले विद्वानों और पर्यटकों के लिए आकर्षण का विशेष केन्द्र है।

पश्चिमी पटना में गांधी मैदान से पश्चिम में कुछ दूरी पर गोलघर स्थित है। यह एक विशाल गुम्बदाकार गोदाम जिसे 1786 में कैप्टन गार्स्टिन के ब्रिटिश सेना के लिए अनाज भंडारण के वास्ते निर्माण कराया था। इसके शिखर तक जाने वाली दो वर्तुलाकार सीढ़ियाँ बनी हैं। गोलघर के ऊपर से शहर का एक विहंगम दृश्य देखा जा सकता है। इससे कुछ और पश्चिम में गंगा नदी के किनारे दशे के पहले राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद की समाधि स्थित है। समाधि से दक्षिण की ओर लगभग 2.5 किमी की दूरी पर पटना संग्रहालय स्थित है। संग्रहालय की इमारत पर्वती मुगल निर्माण शैली का सुंदर नमूना है। यहाँ विश्व प्रसिद्ध दीदारगंज पक्षी की प्रतिमा के साथ मौर्यकाल से पालकाल तक के प्राचीन अवशेष सुरक्षित हैं। यहाँ का विशेष आकर्षण एक जीवाश्म वृक्ष (विपस जतमम) है जो 20 लाख वर्ष पुराना है। मुगल चित्रकला तथा पटना कलम के अनेक सुंदर नमूने भी यहाँ सुरक्षित हैं। इससे कुछ ही दूरी पर पटना का तारामंडल (चसंदमजंतपनउ) है जहाँ जी.एम. 2 स्वचालित स्टा रोजेक्टर की सहायता से विश्व के किसी भी शहर या आकाश के ग्रह नक्षत्रों के दृश्य आसानी से दर्शकों को दिखाये जा सकते हैं। पटना सचिवालय के पूर्वी द्वार के सामने शहीद स्मारक स्थित है जो 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में शहीद हुए सात छात्रों की स्मृति में बनाया गया है। इसी स्थान से कुछ दूर संजय गांधी जैविक उद्यान स्थित है। यहाँ विभिन्न किस्म के जानवरों और पक्षियों को प्राकृतिक वातावरण में रखा जाता है। दुर्लभ वनस्पतियों के भी कुछ नमूने यहाँ उपलब्ध हैं। हाल के वर्षों में यहाँ एक सुंदर मत्स्यशाला का भी निर्माण हुआ है।

पटना की पश्चिमी सीमा पर सदाकत आश्रम स्थित है जो बिहार प्रदेश कांग्रेस समिति का प्रधान कार्यालय है। इस आश्रम की स्थापना सुप्रसिद्ध राष्ट्रवादी मौलाना मजहूरूल हक ने असहयोग आंदोलन के समय में की थी। यहाँ बिहार विद्यापीठ का भी गठन हुआ। अवकाश प्राप्ति के बाद डा० राजेन्द्र प्रसाद ने यहीं निवास ग्रहण किया था।

**मनेर** - पटना से 29 किमी० की दूरी पर स्थित मनेर सूफी संत शर्फद्दीन यहया मनेरी के नाम से जुड़ा है जिन्होंने 13वीं सदी में यहाँ ज्ञान एवं शान्ति की दीक्षा दी थी। संत यहया मनेरी के मजार पर वार्षिक उर्स पर आज भी हजारों हिन्दू-मुसलमान अपनी श्रद्धा पेश करते हैं। इस मकबरे के पास ही इनके शिष्य एवं वंशज शाह दौलत का भी भव्य मकबरा है जिसे छोटी दरगाह कहा जाता है।

**वैशाली** - भगवान बुद्ध ने वैशाली में अनेकों बार अपना प्रवचन दिया था और उसी की स्मृति में अशोक ने सिंहस्तंभ की स्थापना की थी। यह बिहार की राजधानी से 55 किमी. दूर उत्तर बिहार में स्थित है। 383ई. में यहाँ बौद्ध धर्म प्रचारकों का द्वितीय सम्मेलन हुआ। वैशाली में ही 527 ई.पू. में भगवान महावीर का जन्म हुआ। छठी शताब्दी ई.पू. में यह लिच्छवियों की कर्मभूमि थी जिन्होंने

यहाँ विश्व का प्रथम गणतंत्र स्थापित किया। वैशाली में अशोक की लाट, जैन मन्दिर, बुद्ध स्तूप, राजा विशाल की गढ़ही आदि दर्शनीय स्थल हैं।

**सोनपुर** - वैशाली से कुछ दूर गंगा के तट पर सोनपुर बसा है जहाँ प्रत्येक वर्ष विश्व प्रसिद्ध हरिहर मेला लगता है। यह भारत का सबसे बड़ा पशुमेला है जो कार्तिक माह (अक्तूबर-नवम्बर) में आयोजित किया जाता है। सोनपुर हिन्दुओं का तीर्थ स्थल भी है जहाँ लाखों श्रद्धालु दूर-दूर से आते हैं।

**गया** - पटना से 92 किमी दक्षिण में फल्गू नदी के किनारे बसा गया शहर बिहार का प्राचीन नगर है यहाँ विष्णुपद मन्दिर हिन्दुओं का पूज्य तीर्थस्थल है जिसका नवनिर्माण इन्दौर की रानी अहिल्या बाई ने कराया था। इस मन्दिर के प्रांगण में अक्षयवट वृक्ष है जहाँ तीर्थयात्री पिण्डदान अर्पित करते हैं तथा फल्गू नदी में स्नान कर पूर्वजों के मोक्ष की प्रार्थना करते हैं। गया के निकट ब्रह्मयोनि पहाड़ी स्थित है जहाँ से शहर का नयनाभिराम दृश्य देखा जा सकता है। इसी के निकट रामशिला पहाड़ी है जो प्रमुख पिकनिक स्पॉट है।

गया से 25 किमी दूर बराबर गुफाएँ हैं जहाँ मौर्यकालीन स्थापत्य के कुछ आरंभिक उदाहरण हैं। इस स्थान की चर्चा प्रसिद्ध अंग्रेज उपन्यासकार EM Fosta ने Pasage to India ने किया है। गया से 20 किमी. की दूरी पर प्रसिद्ध सूर्य मन्दिर है जहाँ प्रत्येक वर्ष नवम्बर माह में छठ पूजा सम्पन्न होती है। गया से 40 किमी. की दूरी पर बराबर गुफाएँ हैं। बौद्ध भिक्षुओं द्वारा पत्थर काट कर इस गुफा की निर्माण तीसरी सदी में किया गया था। गया की पत्थर काटने की कला भारत भर में प्रसिद्ध है। आज भी 'पत्थर कट्टी' मोहल्ले में पत्थर से मूर्ति एवं अन्य वस्तुओं का काम होता है।

**बोधगया** - ईसा से 500 वर्ष पूर्व बोध गया में ही भगवान बुद्ध को वटवृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था। यह गया से 15 किमी. की दूरी पर निरंजन नदी के किनारे बसा छोटा-सा कस्बा है। आज यह विश्व के सभी बौद्ध धर्मावलम्बियों का प्रधान तीर्थ स्थल बन गया है। महाबोधि मन्दिर के प्रांगण में आज भी मूल वटवृक्ष से उगा वृक्ष उसी स्थल के समीप खड़ा काल चक्र के उतार-चढ़ाव का साक्षी है। इसके ही समीप रतनाघाट में भगवान बुद्ध ने ध्यान में समय बिताया। आज इसके आस-पास तिब्बती मठ है जहाँ बौद्ध धर्म चक्र निरन्तर चलता रहता है। पास ही में जापान, बर्मा, चीन तथा थाईलैंड एवं श्रीलंका द्वारा निर्मित भव्य मंदिर है। यहाँ बिहार में सबसे अधिक विदेशी पर्यटक आते हैं।

**नालंदा** - नालंदा विश्व का प्राचीन ज्ञान केन्द्र है। यह पटना से 90 किमी. की दूरी पर है। इसकी स्थापना 5वीं सदी में की गई थी तथा चीनी भ्रमक एवं इतिहासज्ञ युआन च्वांग ने यहाँ 12 साल तक छात्र एवं शिक्षक के रूप में व्यतीत किये। यहाँ स्थापित विश्वविद्यालय में तर्कशास्त्र के पंडित निदागा, ब्राह्मण गुरू धर्मपाल, बौद्ध प्रचारक महायाना ने शिक्षण का कार्य किया था। यहाँ 700 वर्षों तक लगातार शिक्षा एवं दीक्षा का कार्य हुआ तथा 10000 छात्र एवं 200 शिक्षक यहाँ वास करते थे। हर्षवर्द्धन तथा कुमारगुप्त ने इस नगरी को विकसित करने में मुख्य भूमिका निभाई। नालन्दा का पतन पाल एवं सेन वंश के पारस्परिक संघर्ष के कारण प्रारंभ हो गया। नालन्दा में 1951 में एक भव्य संग्रहालय का निर्माण भी किया गया है। नालन्दा स्थित नव नालन्दा महाविहार राज्य में पाली स्नातकोत्तर शोध का मुख्य संस्थान है।

**बिहारशरीफ** - नालन्दा के पास ही बिहारशरीफ में मखदूम साहेब की दरगाह पर वार्षिक उर्स का आयोजन राष्ट्रीय एकता का बेहतरीन उदाहरण है जिसमें सभी धर्मावलंबी भाग लेते हैं। इस नगरी में मलिक इब्राहिम बया का मकबरा भी है।

**राजगीर** - प्राचीन काल में राजगीर को राजगृह कहते थे। यह हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों का पूज्य तीर्थस्थल है। यहाँ भगवान बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पश्चात् सप्तपरनी गुफाओं में बुद्ध परिषद् की बैठक हुई थी। यहीं पास में गृध्रकूट पर्वत पर भगवान बुद्ध ने मौर्य राजा बिम्बिसार को बौद्ध धर्म की दीक्षा दी थी। राजगीर में ही राजा जरासंध का अखाड़ा भी है। राजा जरासंध शक्तिशाली शासक था जिसका अन्ततः पांडवों ने नाश किया। राजगीर ने गर्म पानी का सोते भी है जहाँ लोग दूर-दूर से स्नान एवं पूजा अर्चना करने आते हैं। राजगीर में जापानी सरकार के योगदान से रोपवे (Ropeway) का निर्माण हुआ तथा पहाड़ पर बना बौद्ध स्तूप दर्शकों को आकर्षित करता है। राजगीर के अन्य दर्शनीय स्थलों में विश्व शांति स्तूप, जीविकाभ्रमण, सोनभंडार गुफाएँ, मनियार मठ, वेणुवन, मखदुम साहब का हुजरा (प्रार्थना स्थल) और अनेक कुण्ड हैं। राज्य पर्यटन विभाग द्वारा वार्षिक राजगीर महोत्सव का आयोजन भी किया जाता है।

**पावापुरी** - राजगीर जाने के मार्ग पर पटना से 80 किमी. की दूरी पर पावापुरी जिसे अपपुरी भी कहा जाता है स्थित है, यहीं भगवान महावीर ने 5वीं शताब्दी में अन्तिम सांस ली। जिस स्थल पर इनका अन्तिम संस्कार किया गया, वहाँ आज कमलरूपी तालाब के बीच 'जल मंदिर' का निर्माण किया गया है।

**सासाराम** - पटना से 160 किमी. की दूरी पर स्थित सासाराम प्रसिद्ध पठान सुल्तान शेरशाह सूरी का अन्तिम विश्राम स्थल है। सासाराम में शेरशाह तथा उसके पिता हसन खँ सूरी का मकबरा भारत में पठान निर्माण कला का उत्कृष्ट नमूना है। सासाराम में ही शेरशाह ने प्रशासन एवं प्रबन्ध व्यवस्था में अनेक प्रयोग किये जो बाद में चलकर शेरशाह के प्रशासनिक एवं राजस्व सुधार का आधार बनें। यहीं प्रसिद्ध कैमूर पहाड़ियाँ भी हैं जो 1857-58 में अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष में बाबू अमर सिंह का ठिकाना बनी थीं।

**भागलपुर** - "तसर रेशम" के लिए मशहूर भागलपुर बिहार में मानव सभ्यता के विकास का केन्द्रबिन्दु रहा है। यहाँ से 42 किमी. की दूरी पर विक्रमशिला विश्वविद्यालय के खंडहर हैं। पास में ही कहलगांव से प्रसिद्ध चीनी यात्री एवं इतिहासकार युआन च्वांग ने अपनी ताम्रलिप्ती की यात्रा प्रारंभ की थी। भागलपुर के निकट नाथनगर में अंग राज की राजधानी थी। बरारी से गंगा के नीचे भूगर्भ गुफा मार्ग बनाया गया था तथा गंगा के तट पर प्रसिद्ध अजगबीनाथ का मंदिर दर्शनीय स्थल है। भागलपुर से 42 किमी. पूर्व भंडार पहाड़ियों पर बना विष्णु मंदिर हिन्दू धर्मावलंबियों का पूज्य तीर्थस्थल है।

**देवघर** - देवघर स्थित वैद्यनाथधाम मंदिर में शिवलिंग की स्थापना की गई है तथा यह मन्दिर महादेव को समर्पित है। मुख्य मन्दिर का निर्माण 1956 ई. में गिद्धौर राज्य के संस्थापक पूरनमल ने किया। यहाँ वसंत पंचमी, शिवरात्री तथा भाद्र-पूर्णिमा के अवसरों पर श्रद्धालुओं का विशाल संग्रह होता है। बिहार में यह सनातन धर्म का महत्वपूर्ण तीर्थ स्थान माना जाता है।

**वैशाली** - धार्मिक तीर्थ और ऐतिहासिक स्थल, दोनों ही के रूप में वैशाली महत्वपूर्ण है। यहाँ के मुख्य दर्शनीय स्थलों में अशोक स्तंभ, राजा विशाल का गढ़, राज्याभिषेक पुष्करणी, कमल तालाब आदि महत्वपूर्ण हैं। भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डग्राम इसी के नजदीक है। यहाँ के संग्रहालय में प्राचीनकालीन अवशेष सुरक्षित हैं।

**राँची** - समुद्रतल से 2140 फीट की ऊँचाई पर बसा राँची शहर कभी बिहार राज्य की ग्रीष्मकालीन राजधानी था। यहा HEC का कारखाना स्थित है जो राज्य के लोक उद्यमों में विशिष्ट स्थान रखता है। यह शहर अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए भी प्रसिद्ध है। शहर में स्थित राँची पहाड़ी और तालाब के अतिरिक्त लगभग 4 किमी. दूर स्थित मोरहाबादी (अब टैगोर) पहाड़ी अपने प्राकृतिक

सौंदर्य के लिए विख्यात है। राँची से लगभग 9 किमी. दूर कांके मानसिक आरोग्यशाला भी अत्यंत प्रसिद्ध है। राँची-कांके रोड पर स्थित, शहर से लगभग 4 किमी दूर, कांके डैम तथा शहर से 12 किमी दूर स्थित हटिया डैम भी प्रमुख पिकनिक केन्द्र हैं। राँची का जनजातीय शोध संस्थान एवं संग्रहालय छोटानागपुर क्षेत्र में बसी जनजातियों के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन अध्ययन का प्रमुख केन्द्र है। राँची के निकट अनेक जलप्रपात हैं। इनमें हुन्चू, जोन्हा, दशमघाघ और हिरणी जल-प्रपात अपनी सुंदरता और मनोहारी दृश्यों के लिए विशेष आकर्षण रखते हैं।

**नेतरहाट** - 'छोटानागपुर की रानी' के नाम से विख्यात यह शहर, समुद्रतल से 3700 फीट की ऊँचाई पर स्थित है। यहाँ की जलवायु समशीतोष्ण है और यहाँ का विशेष आकर्षण सूर्योदय और सूर्यास्त के दृश्य है। दर्शनीय स्थलों में मैगनोलिया प्वाईट, घाघरी एवं सदनी जल-प्रपात प्रमुख हैं।

**जमशेदपुर** - यह नगर एक ओर आधुनिक उद्योगों और दूसरी ओर प्राचीन प्राकृतिक सौन्दर्य का सुन्दर सम्मिश्रण प्रस्तुत करता है। यहाँ के मुख्य उद्योगों में TISCO, TELCO उल्लेखनीय है। प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए जुबली पार्क और दालमा हिल प्रसिद्ध है। जमशेदपुर के निकट जादुगोड़ में यूरेनियम, घाटशिला में तांबा, किरिबुरू और गुआ में लौह-अयस्क की खानें भी देखी जा सकती हैं।

**हज़ारीबाग** - समुद्रतल से लगभग 2019 फीट की ऊँचाई पर स्थित हज़ारीबाग प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध है। इसके निकट सुंदर और विशाल झील एक पिकनिक केन्द्र है। शहर से लगभग 25 किमी. दूर सुप्रसिद्ध नेशनल पार्क स्थित है। यहाँ सांभर, नीलगाय, चीतल और जंगली सुअर के अतिरिक्त बाघ, चीते और तेंदुए भी देखे जा सकते हैं। शहर की सीमा पर स्थित कैपरी हिल शहर का नयनाभिराम दृश्य दिखलाती है। शहर से लगभग 55 किमी दूर स्थित तिलैया डैम स्थित है। बराकर नदी पर दामोदर घाटी निगम द्वारा निर्मित राज्य का यह पहला जल-विद्युत केन्द्र-सह-बांध है।

**धनबाद** - दक्षिण बिहार की एक और प्रसिद्ध उद्योग नगरी धनबाद है। यहाँ केन्द्रीय खनन शोध संस्थान, केन्द्रीय ईंधन शोध संस्थान, खनन सुरक्षा निदेशालय, खनन महाविद्यालय आदि स्थित है। यहाँ के नज़दीक मैथन एवं पंचैत डैम, तोपचाची तालाब, सिन्दरी का उर्वरक कारखाना और झरिया की कोयला खानें प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं।

## जैविक उद्यान एवं अभयारण्य

**बेतला** - पलामू जिला में स्थित यह अभयारण्य 250 वर्ग किमी. पर फैला है। भारत सरकार द्वारा यहाँ शेर संरक्षण कार्यक्रम चलाया जा रहा है। 1932 में यहाँ विश्व की पहली शेर जनगणना करायी गयी थी। इस अभयारण्य में लंगूर, गौर, सांभर, तेंदुआ, बाघ, चीतल, भालू और अन्य वन प्राणी काफी संख्या में बसे हैं। इनके अलावा भाँति-भाँति के रंग-बिरंगे पक्षी भी यहाँ वास करते हैं। अभयारण्य के क्षेत्र में चेरी राजाओं के दुर्ग के अवशेष भी देखे जा सकते हैं।

**हज़ारीबाग** - इस राष्ट्रीय उद्यान (अभयारण्य) की स्थापना 1970 में हुई थी। यहाँ सांभर, चीता, नीलगाय और जंगली सुअर बड़ी संख्या में पाये जाते हैं। इस अभयारण्य का विशेष आकर्षण यह है कि रात्रि के समय यहाँ मोटर गाड़ियों से सैर करने और वन प्राणियों को निकट से देखने की सुविधा उपलब्ध है।

**दलमा** - जमशेदपुर से लगभग 41 किमी दूर स्थित इस अभयारण्य में अनेक वन-पशु, विशेषकर हाथी बड़ी संख्या में देखे जा सकते हैं।

**भीमबांध** - मुंगेर से लगभग 65 किमी. दूर भीमबांध तीन ओर से पहाड़ियों से घिरी, सुंदर और हरी-भरी घाटी है जहाँ दो जलधाराएँ (एक शीतल और एक उष्ण) आकर मिलती हैं और घने जंगल

में एक जलकुएँ का निर्माण करती है। अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ यह स्थान एक महत्वपूर्ण अभयारण्य भी है जहाँ बड़ी संख्या में हाथी बसे हैं।

**उदयपुर** - चम्पारण ज़िले में स्थित, लगभग 10 वर्ग किमी. पर फैला यह अभयारण्य बाघ एवं अन्य पशुओं के लिए विख्यात है।

बिहार में स्थित कुछ अन्य अभयारण्य इस प्रकार हैं -

- (i) चम्पारण का वाल्मीकिनगर अभयारण्य है -
- (ii) रोहतास का कैमूर अभयारण्य
- (iii) पलामू का महुआडांड अभयारण्य
- (iv) नालन्दा का राजगीर अभयारण्य
- (v) धनबाद का तोपचांची अभयारण्य
- (vi) बोधगया का गौतमबुद्ध अभयारण्य

अतः निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि पर्यटन आज विश्व का एक विभाजित उद्योग है। इससे वर्तमान में समाज को अनेक प्रकार के सामाजिक और आर्थिक लाभ प्राप्त होते हैं। अतः इसके विकास के लिए प्रत्येक देश की सरकारें प्रयत्नशील हैं तथा नवीनतम उपलब्धियों के लिए नये आयामों की खोज की जा रही है।

### संदर्भ-ग्रन्थ

1. प्रा प्रकाशचंद्र व्यास, विश्व प्रसिद्ध पर्यटन स्थल, प्रस्तावना
2. पृथ्वीनाथ सिंह, पर्यटन एवं मेला - पृ० 10
3. सच्चिदानन्द सिंह, भारतीय इतिहास कोश, पृ० 223
4. वही, पृ० 380
5. पृथ्वीनाथ सिंह, पर्यटन एवं मेला , पृ० 12
6. सच्चिदानन्द सिंह, भारतीय इतिहास कोश, पृ० 256
7. वही, पृ० 509
8. वही पृ० 19
9. प्रथ्वीनाथ सिंह, पर्यटन एवं मेला - पृ० 14
10. सच्चिदानन्द सिंह, भारतीय इतिहास कोश, पृ० 12
11. इमत्याज अहमद, बिहार : एक परिचय पृ० 74
12. वही, पृ० 131

# गांधी और नेहरू के वैचारिक मतभेद का सच

शीतांशु शेखर

यू०जी०सी० (नेट), शोध छात्र, इतिहास विभाग,  
तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

राजनीतिक जवाहरलाल नेहरू गांधी जी के विचारों से अत्यधिक प्रभावित थे और गांधी जी को वे अपना राजनीतिक गुरु भी मानते थे। यही कारण था जिसने नेहरू को गांधी के निकट ला दिया। अक्सर कहा जाता है कि गांधी में राजनीतिज्ञ और संत के बीच टकराव था, जिसका अभिप्राय इस बात से लिया जाता है कि वह सार्वजनिक कार्यों में नैतिक सिद्धान्तों का अनुसरण करने का प्रयास करते थे। इसी प्रकार, नेहरू ने भी राजनीति पर नीतिशास्त्र के असर के लिए काम किया। परंतु राजनीतिक सिद्धांतों के वैज्ञानिक, बुद्धिजीवी (न कि धार्मिक जैसा गांधी के मामले में था) निर्धारण का उनके जीवन में ही बड़ा स्थान था।<sup>1</sup>

नेहरू का लगभग सम्पूर्ण जीवन गाँधीवाद से प्रभावित रहा। यह प्रभाव शायद गाँधी के दर्शन से कहीं अधिक उनके व्यक्तित्व की वजह से था, जिसकी प्रशंसा करते वह थकते नहीं थे। “अपने चमत्कारिक और लगभग सम्मोहक आकर्षण तथा लोगों पर आत्मिक प्रभाव के साथ गाँधीजी एक विलक्षण व्यक्ति थे।”<sup>2</sup> नेहरू ने उद्गार प्रकट करते हुए कहा “जो कुछ वह लिखते थे या कहते थे, उससे उस आदमी का बहुत थोड़ा आभास मिलता था, उनका व्यक्तित्व उससे कहीं ज्यादा महान था, जितना कि कोई उनके वक्तव्यों से सोच सकता है।”<sup>3</sup> उन्होंने 1963 में गाँधी के बारे में लिखा: “गाँधी की शक्ति अद्भुत थी, एक दुबला-पतला आदमी, जिसके पास कोई शारीरिक शक्ति नहीं थी, लेकिन जिसके पास ऐसा संकल्प, मन और दिल था, जो आश्चर्यजनक रूप से शक्तिशाली था। जितने लोगों को मैं जानता हूँ, गाँधी उनमें से एक सर्वाधिक शक्तिशाली व्यक्ति थे।”<sup>4</sup>

गाँधी में लगभग सबकुछ उसका विलोम था, जो नेहरू में था। यदि जीवन की बहुविधता और पूर्णता नेहरू का आदर्श थी, तो गाँधी का रूख एक ऐसे सन्यासी का था जो संसार और सांसारिकता से विरक्त था, जिसने जीवन को अस्वीकार किया और उसे बुराई माना। नेहरू ने स्वीकार किया कि उन्हें साधारण कृषक जीवन से नफरत थी और स्वयं इसे झेलने के बदले में उन्होंने किसानों को उस जीवन से बाहर खींच लाने तथा शहरी जीवन के सांस्कृतिक मूल्यों के लिए जगह बनाने का भी प्रयास किया।<sup>5</sup> नेहरू में बुद्धिवाद की प्रधानता थी, गाँधी का झुकाव रहस्यवाद की ओर था।

गौरतलब है कि इन सब अंतर्विरोधों के बावजूद महात्मा गाँधी के गूढ़ और अगाध व्यक्तित्व ने नेहरू को आकर्षित किया। कई बार उन्होंने यह स्वीकार किया कि गाँधी की अंतर्दृष्टी कार्रवाइयों के सामने तार्किक विश्लेषण शक्तिहीन हो जाता था। उत्पीड़ित जायितों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल बनाने पर प्रतिवादस्वरूप भूख हड़ताल के गाँधी के कष्टकारी निर्णय पर चिंता व्यक्त करते हुए नेहरू ने 1932 में अपनी जेल डायरी में लिखा कि गाँधी में मनोवैज्ञानिक रूप से उपयुक्त क्षण में सही चीज

करने का अनोखा कौशल था। उन्होंने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि “उनके सामने बेचारे तर्क और बुद्धि की एक नहीं चलती।”<sup>6</sup> नेहरू ने स्वतंत्रता आंदोलन के एक नेता के रूप में गाँधी की अद्वितीय क्षमताओं में विश्वास किया और इसलिए उन्होंने अक्सर उनका अनुसरण किया, भले ही वे हमेशा ही गाँधी के विचारों से सहमत नहीं होते थे। 1928 में उन्होंने गाँधी को लिखा कि उनके प्रकाशनों, खासतौर से ‘हिन्द स्वराज्य’ में तिरुपति उनके विचारों से उनका कितना भी मतभेद क्यों न हों, वह उनमें एक ऐसे नेता के रूप में सहज विश्वास रखते हैं, जो स्वतंत्रता पाने के लिए भारत का नेतृत्व करने के सभी आवश्यक गुणों से सम्पन्न हैं।<sup>7</sup>

गाँधी और नेहरू के बीच गहन वैचारिक मतभेद निरंतर बने रहे। ये मतभेद उन विधियों में, जब गाँधी के नेतृत्व में आंदोलन गत्यावरोध में पहुँचा और भी तीव्र हो गये। मसलन, 1930 के आरम्भ में नेहरू ने गाँधी की नीति से घोर निराशा का अनुभव किया तथा अनचाहे उनके धार्मिक तथा रहस्यात्मक रूख की वैज्ञानिक समाजवाद के स्पष्ट उद्देश्यों और विधियों से तुलना की। “लेनिन और उनके संगी-साथियों के द्वंद्ववाद से कितना बड़ा वैषम्य है।” नेहरू ने 1933 में जेल डायरी में लिखा। “जितना ही अधिक मैं उनके द्वंद्ववाद की ओर आकर्षित होता हूँ, उतना ही अधिक मैं बापू और अपने बीच खाई महसूस करता हूँ।<sup>8</sup> अपनी जेल डायरी में नेहरू ने गाँधी पर इस बात का भी आरोप लगाया कि उन्होंने अपने इर्द-गिर्द ऐसे लोग जमा कर लिये हैं, जो दरअसल मौजूदा सामाजिक समस्या के आधार हैं और उससे बड़ा लाभ उठाते हैं। नेहरू ने जोर देते हुए कहा कि ये लोग देश की खातिर कोई भी खतरा नहीं उठायेंगे तथा वे राष्ट्रीय आंदोलन और ऐसे किन्हीं भी परिवर्तनों के पक्ष में अपनी सफाई देने में समर्थ हैं, जो घट सकते हैं। नेहरू को संदेह था कि ऐसे सहयात्रियों के साथ कोई सार्थक चीज पायी जा सकती है। वह चाहते थे कि ऐसे तत्वों से एकदम नाता तोड़ लिया जाये और जनता के समक्ष आंदोलन का एक साफ आदर्श पेश किया जाए। इसके विपरीत गाँधी ने आंदोलन के अंतिम ध्येय पर कोई गौर नहीं किया और वह उसके तात्कालिक उद्देश्यों में ही पूरी तरह मग्न थे। नेहरू के शब्दों में, “बापू हमेशा समझौते की बात ही करते हैं और उनकी मधुर तर्क लोगों को भ्रम में डालती तथा उनकी चेतना को धुँधला करती हैं।”<sup>9</sup>

नेहरू ने अहिंसा को निरपेक्ष बनाने के गाँधी के प्रयासों को भी चुनौती दी। वे गाँधी की धार्मिक तथा नैतिक बहसों से भी बचें तथा अहिंसा को राजनीतिक संघर्ष के एक साधन के रूप में देखने और परिणामों के अनुसार उनका मूल्यांकन करने की अपील की। नेहरू ने गाँधी की गहन धार्मिकता का भी समर्थन नहीं किया। राजनीति में धर्म के इस्तेमाल से उन्हें चिढ़ थी और वह मानते थे कि यह राजनीति पर घातक प्रभाव डाल सकता है। उन्होंने राजनीतिक प्रश्न पर धार्मिक व भावनात्मक दृष्टिकोणों के कारण बापू पर गुस्सा महसूस किया। नेहरू देशी रियासतों में अपने मूल अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाली जनता का समर्थन करने की गाँधी की अनिच्छा की भी आलोचना की। नेहरू के अनुसार, गाँधी ने उनका समर्थन इसलिए नहीं किया कि अर्द्ध-सामंती शासकों के साथ सम्बन्ध न बिगड़ जाये। नेहरू ने गाँधी की “पुरानी अधिनायकी आत्मा” पर अनुमोदन नहीं किया क्योंकि उन्होंने कई बार अत्यन्त महत्वपूर्ण निर्णय अपने आप ले लिये और कांग्रेस के अपने नेतृत्वकारी सहयोगियों के समक्ष उन्हें एक निर्विवाद तथ्य के रूप में रख दिया था।<sup>10</sup>

दो नेताओं के बीच विचारों का यह बेमेलपन उनकी व्यक्तिगत निकटता की बदौलत कुछ नरम हुआ। वे अपने को एक-दूसरे का विरोधी नहीं मानते थे और एक-दूसरे को वांछित दिशा में प्रभावित करने की आशा करते थे। नेहरू ने लिखा- “व्यक्तिगत रूप में मेरे प्रति गाँधीजी ने हमेशा बड़ी कृपा और लिहाज प्रकट किया था और मेरे पिता की मृत्यु ने उन्हें विशेषतः मेरे निकट ला दिया था। मैं

जो कुछ भी कहता था, वह उस बड़ी धीरज के साथ सुनते निस्संदेह मुझे इस विचार पर पहुँचा दिया कि शायद कुछ सहयोगी और मैं उन्हें समाजवादी दिशा में निरंतर प्रभावित कर सकते हैं और उन्होंने कहा था कि जैसे-जैसे यह मार्ग उनके सामने स्पष्ट होता जाएगा, वैसे-वैसे वह उस पर आगे बढ़ते जाएँगे।”<sup>11</sup>

गाँधीजी द्वारा अहिंसा एवं प्रत्यक्ष कार्यवाही से राष्ट्रीय स्वतंत्रता प्राप्ति का संकल्प पूरा करने में नेहरू ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। नेहरू की भूमिका अनेक अवसरों पर निर्णायक थी। गाँधीजी के प्रति असाधारण श्रद्धा रखते हुए भी नेहरू ने सविनय आंदोलन के समय नमक सत्याग्रह की आलोचना की। वे नमक के प्रश्न को राष्ट्रीय संघर्ष के साथ जोड़ने के प्रति आश्चर्यचकित थे। डांडी यात्री और नमक-सत्याग्रह की अभूतपूर्व सफलता ने नेहरू को गाँधीजी की अहिंसात्मक तकनीकों के प्रति मोह लिया। नेहरू ने लिखा कि “जब हमने जनता में अदम्य उत्साह को देखा और नमक बनाने के कार्यक्रम को दावानल की तरह फैलते हुए पहचाना तो हमें अपने आप से कुछ लज्जा अनुभव हुई क्योंकि हमने गाँधी के प्रस्ताव का विरोध किया था। हम यह देखकर श्रद्धावान हुए कि एक व्यक्ति ने लाखों-करोड़ों व्यक्तियों का इतने संगठित ढंग से प्रभावशाली कार्य करने के लिए किस तरह निखारा।”<sup>12</sup>

“भारत छोड़ो” आंदोलन के समय भी नेहरू ने गाँधी के इस कार्यक्रम के प्रस्ताव का विरोध किया परन्तु गाँधीजी द्वारा समझाये जाने पर नेहरू ने स्वयं कांग्रेस के बंबई अधिवेशन में इस प्रस्ताव को प्रस्तुत किया। गाँधीजी ने नेहरू की रचनात्मक आलोचना का सदैव स्वागत किया। उनके पारस्परिक सद्भाव एवं आत्मविश्वास के वातावरण में अधीनस्थता जैसी वस्तु वही थी, किंतु गाँधी तथा नेहरू में अन्तर्विरोध भी था। द्वितीय महायुद्ध के समय गाँधीजी द्वारा बिना शर्त अहिंसा पर बल दिये जाने के विचार को नेहरू ने अस्वीकार कर दिया। नेहरू के अनुसार “गाँधीजी ने जब 1940 में युद्ध और भावी स्वतंत्र भारत के संदर्भ में अहिंसा का प्रश्न उठाया तो कांग्रेस कार्यसमिति को इसका प्रतिकार करना पड़ा। कार्यसमिति का यह भी मत था कि वे उतनी दूरी तक नहीं जा सकते जहाँ तक गाँधीजी उन्हें ले जाना चाहते थे। वे इसके लिए तैयार भी नहीं थे कि भारत और कांग्रेस संस्था भावी विदेश नीतियों के संबंध में इस (अहिंसा) सिद्धान्त का प्रयोग करें। इससे गाँधीजी के साथ इस प्रश्न पर निश्चित एवं सार्वजनिक सम्बन्ध भंग हुआ।”<sup>13</sup>

विवाद की यह स्थिति गहरी होती गयी और भारत के विभाजन के समय अधिक मुखरित हुई। गाँधीजी ने विभाजन को भी स्वीकार नहीं किया, जबकि नेहरू के समक्ष इसके अलावा और कोई विकल्प नहीं था। गाँधीजी ने स्वयं इस तथ्य का रहस्योद्घाटन अपने 5 अक्टूबर 1945 को नेहरू को लिखे पत्र द्वारा किया। उन्होंने लिखा- “पहली बात जो मैं लिखना चाहता हूँ वह है हमारे दृष्टिकोण का अंतर। यदि यह अंतर मौलिक है तो मुझे लगता है कि यह अंतर हमें जनता के समक्ष रखना चाहिए। इस तथ्य को जनता से छिपाना स्वराज्य के कार्य के लिए हानिकारक होगा।”<sup>14</sup>

परन्तु चौथे दशक के अंत में नेहरू गाँधीवाद के एक आलोचनात्मक पोषक से एक उत्साही दृश्य में बदल गये। सम्पूर्ण भारतीय जनता के साथ स्वयं नेहरू गाँधी का जो गहन आदर करते थे, उसका कारण था कि गाँधी शुद्ध भारतीय संस्कृति की उपज थे। भारतीय जनता से उनके सहज लगाव ने उन्हें विशाल शक्ति प्रदान की। नेहरू का मानना था कि गाँधी की गरिमा इस बात में थी कि राष्ट्रीय परंपराओं में अपनी सभी सुदृढ़ जड़ों के बावजूद, वह क्रांतिकारी ढंग से काम कर सकते थे। नेहरू ने स्वतंत्रता आंदोलन में एक नेता के रूप में गाँधी की अद्वितीय क्षमताओं में विश्वास किया और इसलिए उन्होंने अक्सर उनका अनुसरण किया, भले ही वह हमेशा ही गाँधी के विचारों से सहमत

नहीं होते थे। परन्तु नेहरू ठेठ गाँधीवादी नहीं थे। गाँधी अमूर्त से मूर्त की ओर उतरते हैं, नेहरू मूर्त से अमूर्त की ओर चाहते हैं। गाँधी अतीतमुखी है, नेहरू भविष्यमुखी।

### संदर्भ-सूची

1. डब्ल्यू आर. क्रोकर, *नेहरू*, जार्ज एलन एण्ड अनविन, लंदन, 1996, पृ.-109-110.
2. जी. कृष्णामूर्ति, *जवाहरलाल नेहरू, द मैन एण्ड हिज आइडियाज*, (पोपुलर बुक डिपो, बम्बई, 1944, पृ.-8)
3. डेरोथी नार्मन, *नेहरू : द फास्ट सिक्सटी ईयर्स*, खंड 1, एशिया पब्लिशिंग, बम्बई, 1965, पृ.-440-452.
4. जवाहर लाल नेहरू, *स्पीचेज*, खंड 2, पृ.-140-143.
5. उपरोक्त
6. उपरोक्त
7. जवाहर लाल नेहरू, *डिस्कावरी ऑफ इंडिया*, सिग्नेट प्रेस, कोलम्बिया, 1945, पृ.-227-230.
8. उपरोक्त, पृ. 547-557.
9. उपरोक्त, पृ. 550-551.
10. आर. के. करंजिया, *दी फिलासफी ऑफ मि. नेहरू*, एलन एण्ड अनविन, लंदन, 1960, पृ. 133-144.
11. माइकेल ब्रेचर, *नेहरू : ए पॉलिटिकल बायोग्राफी* (आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1959), पृ. 596-600.
12. जवाहर लाल नेहरू, *एन. आटोबायोग्राफी* (जान लैन, लंदन, 1936), पृ. 394-396.
13. सर्वपल्ली गोपाल, *जवाहर लाल नेहरू : ए बायोग्राफी*, खंड 1, 1989-1947, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1976, पृ. 100-107.
14. एम. एन. दास, *पोलिटिक फिलासफी ऑफ नेहरू*, जार्ज एलन एण्ड अनविन, लंदन, 1962, पृ. 122-140.

# पल्लव राजवंश में प्रान्तीय एवं स्थानीय प्रशासन: एक अवलोकन

डॉ० ममता पांडेय

एसोसिएट प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग,  
नेताजी सुभाष चन्द्र बोस महिला राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय  
अलीगंज, लखनऊ, ३०८०

पल्लव राजवंश दक्षिण भारत के महान राजवंशों में से एक था। पल्लव राजाओं की योग्यता और कुशल नेतृत्व क्षमता के बल पर पल्लव साम्राज्य दक्षिण भारत के विस्तृत भू-भाग पर स्थापित था। इतने विशाल साम्राज्य का सुचारू ढंग से शासन-प्रबन्ध करना एक कठिन किन्तु आवश्यक कार्य था। पल्लव राजाओं ने शासन के सम्यक् संचालन के लिये अपने पूर्ववर्ती मौर्य, गुप्त आदि राजाओं द्वारा अपनायी गयी शासन-प्रणाली को अपना कर उनमें आवश्यकतानुसार कुछ परिवर्तन भी किया। पल्लवों का विशाल साम्राज्य प्रान्तों में विभक्त था। पल्लव अभिलेखों में पल्लव साम्राज्य के प्रान्तों की निश्चित संख्या का उल्लेख प्राप्त होता है। इन प्रान्तों को 'राष्ट्र' कहा जाता था। 'कर्मराष्ट्र', 'वेङ्गोराष्ट्र', 'आन्ध्रपथ' आदि प्रमुख पल्लव राष्ट्र थे। राष्ट्र अथवा प्रान्त का संचालन राजपरिवार के सदस्य (प्रमुख रूप से राजकुमार) देखते थे। राष्ट्र के शासकों को 'विषयिक' कहा जाता था।<sup>1</sup> इनका पद मध्ययुग के उपराजा या वायसराय के समान होता था। प्रायः राज्य का उत्तराधिकारी भी किसी न किसी प्रान्त या राष्ट्र का शासक होता था। विषयिक राजा के सीधे नियंत्रण में होते थे, और राजा के प्रतिनिधि के रूप में प्रान्तों की शासन व्यवस्था देखते थे। प्रान्तों की शासन व्यवस्था में इन्हें राजा की भांति ही अधिकार प्राप्त थे।

प्रान्तों का विभाजन कोट्टम में किया गया था। वर्तमान समय में इनकी तुलना जिलों से की जा सकती है। अभिलेखों में पल्लव साम्राज्य के चौबीस कोट्टमों का मानोल्लेख प्राप्त होता है, यह नाम निम्नवत् है।<sup>2</sup> (1) पुलाल कोट्टम, (2) इक्कुट्टु कोट्टम (3) मनवीर कोट्टम, (4) शेंगट्टु कोट्टम, (5) पययूर कोट्टम (6) अइल कोट्टम (कांचीपुरम मुख्य नगर) (7) दमल कोट्टम (8) उरूकट्टु, (11) अम्बर कोट्टम, (12) वेकुनरा कोट्टम, (13) पालकुनरा कोट्टम, (14) इलंगट्टु कोट्टम, (15) कालीयूर कोट्टम, (16) शेंगराइ कोट्टम, (17) पाडूर कोट्टम, (18) काडीकूर कोट्टम, (19) शेंडिरूक्काइ कोट्टम, (20) पुनरावट्टन कोट्टम, (21) वेनाड कोट्टम, (22) वेलूर कोट्टम, (23) शेट्टूर कोट्टम, (24) पुंलियूर कोट्टम।

पल्लव अभिलेखों में जिले अथवा कोट्टम के अधिकारियों को 'आयुक्त' और 'अध्यक्ष' कहा गया है। ये जिले के उच्च अधिकारी होते थे, जिनका सम्बन्ध सीधे केन्द्रीय सरकार से होता था। अभिलेखों में वर्णित व्यवस्था के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पल्लव शासकों ने प्रान्तों और जिलों की शासन व्यवस्था दक्षिण भारत में प्रचलित पूर्ववर्ती शासन पद्धतियों की भांति न होकर उत्तर भारत के मौर्य और गुप्त कालीन शासन पद्धति पर आधारित थी। शासन की सुविधा की दृष्टि से जिले या कोट्टम को 'नाडु' में विभक्त किया गया था।

**नाडु-** पल्लव शासन में नाडु, प्रान्तीय शासन की एक महत्वपूर्ण इकाई थी, जो कोट्टम से छोटी किन्तु ग्राम से बड़ी होती थी। नन्दिवर्मन 'पल्लवमल्ल' के एक अभिलेख में नाडु से सम्बन्धित नाट्टार,

उरार और अलवार लोगों को एक आदेश के अनुपालन के लिए सम्बोधित किया गया है।<sup>3</sup> नाट्टार सम्भवतः नाडु की शासन समिति के सदस्य होते थे। प्रान्तीय प्रशासन में नाडु की शासन समिति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। अनुमान है कि इस समिति के सदस्य (नाट्टार) नाडु के योग्य शिक्षित और बुद्धिमान लोग होते थे। नाडु यद्यपि 'राष्ट्र' और कोट्टम से निचली प्रशासनिक इकाई थी, किन्तु इसके प्रतिनिधियों को कभी-कभी राजा स्वयं आदेशित करता था। कशकुडी ताम्रपत्र में ऐसा उल्लेख प्राप्त होता है कि राज ने नाट्टार लोगों को कोडुककोली नामक एक गाँव को किसी ब्राह्मण को ब्रह्मदेय के रूप में देने का आदेश दिया था और नाट्टार लोगों के द्वारा इस आदेश का पालन भी किया गया था।<sup>4</sup> इसी प्रकार के कुछ अन्य उल्लेख भी प्राप्त होते हैं, जिनमें राजाओं द्वारा नाडु के प्रतिनिधियों (नाट्टार) को विभिन्न कार्यों के सम्पादन के लिए सीधे आदेश दिया गया है। इन उल्लेखों से नाट्टार की राजनैतिक महत्ता स्पष्ट होती है। के.पी.जायसवाल के मतानुसार नाट्टार प्रान्तीय प्रशासकों की निरंकुशता को रोकते थे।<sup>5</sup>

नाडु से सम्बन्धित कुछ अन्य अधिकारियों का उल्लेख भी अभिलेखों में प्राप्त होता है। इनमें 'देसतिक', 'भोजक', 'वल्लभ', 'गोवल्लभ' और संचरत प्रमुख हैं, परन्तु इनके कार्यों एवं अधिकारों आदि के विषय में विवरण अनुपलब्ध है।

**ग्राम प्रशासन-** पल्लव राजाओं की राजव्यवस्था में प्रशासन व्यवस्था की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी। गाँव का प्रशासन मुख्यतः उनकी सभा अथवा महासभा द्वारा चलाया जाता था। ग्रामसभाओं को 'ऊर' कहा जाता था। ग्राम सभा में स्थानीय लोग भी पदाधिकारियों के रूप में चुने जाते थे। अभिलेखों में लगभग 20 ग्रामसभाओं के नाम प्राप्त होते हैं। इनमें से उत्तरमेरुर, पेरुगुलि, कूरम्, अन्विल, वेरुकूरम्, मणालि, अवनिनारायण, चतुर्वेदिमंगलम् आदि प्रमुख ग्राम सभाएँ थीं।<sup>6</sup> ग्राम सभाओं के सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि आठवीं शताब्दी से पहले के पल्लव अभिलेखों में ग्रामसभाओं का उल्लेख नहीं मिलता है, किन्तु परवर्ती पल्लव राजाओं के शासनकाल में पल्लव राज्य के कई ग्रामों में ग्राम-प्रशासन के विकसित रूप एवं इनकी सभाओं के कार्यों तथा अधिकारों के विषय में पर्याप्त सूचना मिलती है। ग्रामसभाओं को प्रशासन सम्बन्धी बहुत से अधिकार प्राप्त थे। वे मन्दिरों की आय-व्यय का विवरण रखती थी।<sup>7</sup> कृषि और सिंचाई की व्यवस्था देखती थी तथा ग्राम स्तर पर न्याय-व्यवस्था का कार्य भी देखती थी। ग्राम सभा के मुखिया को 'पेरुमक्कल' (महापुरुष) कहते थे। ग्राम सभाओं के अन्तर्गत 'गण' और 'वारियम्' नामक ग्राम समितियाँ कार्य करती थीं। वारियम् गाँव की विकास व्यवस्था देखने वाली महत्वपूर्ण समिति थी। इसके सदस्यों को 'वारियार' कहा जाता था।<sup>8</sup> गाँव के तालाबों, सड़कों अन्य मार्गों तथा कृषि योग्य भूमि की देखभाल का कार्य वारियम् नामक समिति ही करती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि वारियम् इन सभी कार्यों के लिए अन्य छोटी-छोटी समितियाँ बनाती थी, जो स्वतन्त्र रूप से एक-एक कार्य देखती थी। गाँव के तालाबों एवं सिंचाई की व्यवस्था की देख-रेख के लिए 'एरिवारि पेरुमक्कल' नामक समिति उत्तरदायी थी, तो बगीचों की देखभाल 'तोट्टवार पेरुमक्कल' नामक समिति करती थी।<sup>9</sup> इन समितियों के सदस्यों को प्रतिवर्ष चुना जाता था। सम्पन्न तथा दानी लोग इन समितियों के पास भूमि तथा सोना आदि जमा कर देते थे, जिसके ब्याज से वे तालाबों आदि की देखभाल करती थी।

यद्यपि राजवंश के परवर्ती चोल प्रशासन में वारियम् और उसके सदस्यों के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी उपलब्ध होती है, किन्तु पल्लव काल से सम्बन्धित अभिलेखों में वारियम् के सदस्यों की योग्यता उनकी चयन प्रक्रिया, उनकी कार्यविधि, सदस्य संख्या आदि के विषय में कोई सूचना नहीं प्राप्त होती। पल्लव शासन के उत्तरार्द्ध से सम्बन्धित अभिलेखों में कुछ ऐसी घटनाओं का वर्णन मिलता है, जिससे वारियम् और वारियर के कर्तव्यों का अनुमान किया जाता है। दन्तिवर्मन के शासन

के नवें वर्ष में लिखे गये एक अभिलेख में एरिवारि पेरुमक्कल को वीर मेघ नामक तालाब की देखभाल के लिए किसी सम्पन्न व्यक्ति द्वारा अनुदान दिये जाने का वर्णन प्राप्त होता है।<sup>10</sup>

सम्भवतः वारियम् के अन्तर्गत गठित होने वाली अन्य छोटी समितियों के कार्यों का आंकलन करने के लिए एक वार्षिक समिति भी गठित होती थी, जिसे संवत्सर वारियम् कहा जाता था।<sup>11</sup> यह समिति एरिवारि पेरुमक्कल समिति के नये सदस्यों का चुनाव करती थी और उन्हें सम्बन्धित अधिकार सौंपती थी।<sup>12</sup> अभिलेखों से यह ज्ञात होता है कि पल्लव शासन में स्थानीय प्रशासन के अन्तर्गत सिंचाई व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया जाता था। प्रायः प्रत्येक वारियम् में बड़े-बड़े तालाब होते थे, जिनके अलग-अलग नाम होते थे और इनकी देखरेख के लिए वारियम् को पर्याप्त अनुदान प्राप्त होते रहते थे। इन तालाबों में कोचीपुरम् के निकट परमेश्वर तड़ाग, महेन्द्रवाड़ी में महेन्द्र तड़ाग, उत्तर मेरुर में वीर मेघ तड़ाग, वेल्लरी में चित्रमेघ तड़ाग आदि प्रमुख थे।<sup>13</sup>

**गण-** पल्लव शासन के बाद के वर्षों में लिखे गये अभिलेखों से 'वारियम्' के समान ही एक अन्य समिति का उल्लेख मिलता है। इसे गण या आलुंगणत्तार के नाम से सम्बोधित किया गया है।<sup>14</sup> गण या आलुंगणत्तार ऐसे लोगों की समिति होती थी, जो प्रायः धार्मिक कार्यों से सम्बन्धित होते थे। चिंगलेपुट जिले से प्राप्त अभिलेख के अनुसार आलुंगणत्तार के सदस्य उच्च कोटि के विद्वान ब्राह्मण थे।<sup>15</sup> आलुंगणत्तार समितियाँ प्रायः ब्राह्मण ग्रामों (अग्रहारों) में ही कार्यरत थीं। अभिलेखों में इन समितियों के जितने भी सदस्यों का नाम प्राप्त होता है, वे सभी शास्त्रज्ञ ब्राह्मण बताये गये हैं। इनमें श्री बालेक्कनशर्माक्रमविट्टन, वसन्तयाज्ञियार, श्रीनरसिंहचतुर्वेदी सोमयाज्ञियार, श्री अग्नि शर्मा क्रमविट्टनसोम आदि प्रमुख आलुंगणत्तार सदस्य थे।<sup>16</sup> आलुंगणत्तार समिति मुख्य रूप से धार्मिक स्थानों और धार्मिक विषयों से सम्बन्धित वादों के निस्तारण की व्यवस्था देखती थी। इसे समय-समय पर राजाओं द्वारा अनुदान भी दिया जाता था।

**अमर्त्यगण-** पल्लव साम्राज्य के अभिलेखों से प्राप्त एक वार्षिक रिपोर्ट में अमर्त्यगणत्तार नामक सदस्यों का उल्लेख हुआ है। डा० सी. मीनाक्षी का मत है कि अमर्त्यगणत्तार, आलुंगणत्तार नामक धार्मिक समिति के प्रमुख सदस्य होते थे।<sup>17</sup> उनका विचार है कि आलुंगणत्तार समिति के दो भाग थे - एक सामान्य और दूसरा विशिष्ट। अमर्त्यगण, आलुंगणत्तार के विशिष्ट सदस्य होते थे। पल्लव राजा अपराजित के समय में तिरुवारियूर मन्दिर की सम्पत्ति और प्रभाव बहुत अधिक बढ़ गया था। अतः इस मन्दिर की व्यवस्था एक स्वतन्त्र समिति के द्वारा की जानी स्वाभाविक थी। इस कार्य के लिए अमर्त्यगणत्तार लोगों की एक स्वतन्त्र समिति बनायी गयी, जो मन्दिर से प्राप्त होने वाली सम्पत्ति का लेखा-जोखा रखती थी तथा मन्दिर की सम्पत्ति पर नियन्त्रण रखते थे। अभिलेखों से यह भी स्पष्ट होता है कि अमर्त्यगण ग्राम सभा के प्रति उत्तरदायी होते थे और उन्हें मन्दिरों की सम्पत्ति का हिसाब ग्राम सभा को देना पड़ता था।<sup>18</sup>

**ग्रामसभा के कार्य एवं अधिकार-** पल्लव शासन में ग्रामसभा स्थानीय शासन की सर्वाधिकार सम्पन्न इकाई थी। यह गाँव के लोगों और गाँव की भूमि से जुड़े सभी मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार रखती थी। ग्रामसभा, ग्रामवासियों की सुविधाओं का ध्यान रखती थी और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये सड़के, तालाब, उद्यान आदि का निर्माण और देखरेख करती थी। कृषि की उन्नति के लिए तालाबों की खुदाई और उनकी मरम्मत का कार्य ग्रामसभा के प्रमुख कार्यों में से था। इसके लिये ग्रामसभा स्वतन्त्र समिति का गठन भी करती थी। तालाबों की व्यवस्था के लिए उसे विभिन्न स्रोतों से अनुदान भी प्राप्त होते थे।

ग्रामसभा मन्दिरों की देखरेख में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। मन्दिरों के आय-व्यय का हिसाब रखने के लिए चुने जाने वाले सदस्य (अमर्त्यगण) भी सम्भवतः ग्रामसभा द्वारा ही चुने जाते

थे, क्योंकि इनके ग्राम सभा के प्रति उत्तरदायी होने का उल्लेख प्राप्त होता है। ग्राम सभा इन अमर्त्यगणों से समय-समय पर मन्दिरों के आय-व्यय का विवरण भी मांगती रहती थी।<sup>19</sup>

मन्दिरों से सम्बन्धित भूमि के क्रय-विक्रय का अधिकार भी ग्रामसभाओं को प्राप्त था। नृपतुंगवर्मन के राज्यकाल के छब्बीसवें वर्ष के तेंगागुडि अभिलेख में गाँव की सभा द्वारा एक शिव मन्दिर को दी गयी भूमि के क्रय से सम्बन्धित दस्तावेज को अन्तिम रूप देने का उल्लेख है। दान को कर मुक्त कर दिया था। अपराजित वर्मन के शासन के छठें वर्ष के एक अभिलेख में मणालि की सभा द्वारा किये गये एक समझौते का उल्लेख है, जिसके अनुसार उस सभा के शिवभक्तों ने साठ कलंजु (सोने के सिक्के) जमा किये थे। इन सिक्कों के ब्याज से सम्बन्धित ग्राम में स्थित महादेव के मन्दिर में प्रतिदिन दो दीपक जलाने का उत्तरदायित्व सभा ने लिया था। नृपतुंगवर्मन के राज्यकाल के अन्य कई अभिलेखों में किसी धार्मिक कार्य के लिए सभाओं के पास स्वर्णमुद्राएँ जमा करने के उल्लेख मिलते हैं। अपराजित वर्मन् के राज्यकाल के अठारहवें वर्ष के एक अभिलेख में तिरुतडियल की सभा द्वारा उस भूमि पर कर माफ करने का उल्लेख है, जिसे कृषकों से खरीदकर धर्मदाय के सदस्यों को दिया जाता था। इस दान की देखरेख का उत्तरदायित्व वहाँ की सभा को ही सौंपा गया था।<sup>20</sup>

ग्रामसभाओं को स्थानीय स्तर पर बहुत से न्यायिक अधिकार भी प्राप्त थे।<sup>21</sup> उन्हें अपराधी व्यक्ति को दण्डित करने का भी अधिकार था। भूमि सम्बन्धी विवादों का निस्तारण भी सामान्यतया ग्रामसभायें ही करती थी। भूमि की प्रकृति को देखते हुए वे उन पर नया कर लगा सकती थी तथा उन्हें कर मुक्त भी कर सकती थी। प्रारम्भिक संस्कृत लेखों तथा उरुवापल्ली और बाहुर ताम्रपत्र अभिलेखों के मिले-जुले प्रमाण से यह सिद्ध होता है कि ग्रामसभा केन्द्रीय सरकार को आबाद भूमि, बंजर भूमि, कृष्, तालाब, झील एवं नदियों से सम्बद्ध लेखा-जोखा तैयार करने में मदद करती थी। जो गाँव ब्रह्मदेय और अग्रहार के रूप में दिये जाते थे, वहाँ की ग्रामसभा का कार्यक्षेत्र अपेक्षाकृत और बढ़ जाता था। आलुंगणत्तार और अमत्यगणत्तार जैसी विद्वत् समितियों की उपस्थिति से यह अनुमान सहज ही किया जा सकता है कि शिक्षण व्यवस्था भी ग्रामसभाओं द्वारा संचालित होती थी। यद्यपि शिक्षा के केन्द्र राजाओं द्वारा स्थापित कराये जाते थे, किन्तु इनकी देख-रेख के लिये आवश्यक धन ग्राम-सभाओं से ही प्राप्त होता था।<sup>22</sup> ग्राम सभा को अन्य छोटी समितियों के सदस्यों को नियुक्त करने और उन्हें हटाने का अधिकार भी प्राप्त था।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि पल्लव शासन में स्थानीय शासन में ग्रामसभाओं की भूमिका निर्विवाद रूप से बहुत महत्वपूर्ण थी। उच्च राजनैतिक मामलों को छोड़कर प्रायः अन्य सभी मामलों में ग्रामसभायें पूर्ण स्वतन्त्र थी। उत्तरकालीन पल्लव शासन में ये ग्रामसभाएँ अत्यन्त विकसित रूप धारण कर चुकी थी, जिसके प्रमाण पल्लवों के तुरन्त बाद प्रभावी होने वाली चोल शासन व्यवस्था के विकसित ग्रामीण प्रशासन से प्राप्त होता है। प्रशासन के निचले स्तर पर ये ग्रामसभाएँ इतना विकास कर चुकी थी कि केन्द्रीय प्रशासन इनकी व्यवस्था में कोई हस्तक्षेप न करके मात्र इन पर नियन्त्रण रखता था। निष्कर्षतः ग्रामसभाओं से सम्बन्धित क्षेत्र के लोगों का प्रत्यक्षतः अथवा प्रतिनिधियों के माध्यम से ग्रामीण प्रशासन पर प्रभावी नियन्त्रण होता था। ग्रामसभाएँ आवागमन, परिवहन, कृषि, विपणन आदि से सम्बन्धित सुविधाओं के विकास में सतत् संलग्न रहकर ग्राम की उन्नति और खुशहाली के लिए कार्य करती थी।

पल्लव कालीन शासन व्यवस्था में ग्राम-प्रशासन अपने उन्नत रूप में था। यह सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने के उत्तरदायित्व का निर्वाह करने के साथ-साथ राज्य की समृद्धि का आधार भी था। प्रान्तीय और ग्राम प्रशासन परस्पर विधिक रूप से जुड़े हुये थे। निष्कर्षतः कह सकते हैं कि पल्लव

कालीन उन्नत शासन व्यवस्था की स्थापना में वहाँ के प्रान्तीय और ग्राम शासन की भूमिका अपरिहार्य रूप से महत्वपूर्ण थी।

### संदर्भ सूची:

1. आर. गोपालन- हिस्ट्री ऑफ द पल्लवाज ऑफ कांची, पृ0 148
2. आर. गोपालन-हिस्ट्री ऑफ द पल्लवाज ऑफ कांची, पृ0 147
3. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 122
4. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 122
5. श्याम मनोहर मिश्र, "दक्षिण भारत का इतिहास", पृ0 302
6. श्याम मनोहर मिश्र, "दक्षिण भारत का इतिहास", पृ0 302
7. आर. गोपालन, "हिस्ट्री ऑफ द पल्लवाज ऑफ कांची", पृ0 155
8. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 126
9. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 128
10. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 128
11. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 129
12. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 129
13. "हिस्ट्री ऑफ द पल्लवाज ऑफ कांची", पृ0 155
14. श्याम मनोहर मिश्र, "दक्षिण भारत का इतिहास", पृ0 303
15. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 131
16. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 131
17. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 132
18. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 133
19. सी. मीनाक्षी, "एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल लाइफ अण्डर द पल्लवाज", पृ0 133
20. श्याम मनोहर मिश्र, "दक्षिण भारत का इतिहास", पृ0 303
21. राधाकृष्ण चौधरी, "प्राचीन भारतीय राजनीति और शासन व्यवस्था", पृ0 309
22. राधाकृष्ण चौधरी, "प्राचीन भारतीय राजनीति और शासन व्यवस्था", पृ0 309

# वैशाली गणतंत्र का ऐतिहासिक विश्लेषण

डॉ० शेखर सिंह

तदर्थ व्याख्याता,

इतिहास विभाग, रामानुजन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

भगवान बुद्ध के पूर्व, उनके काल में तथा उनके पश्चात् भी सैकड़ों वर्ष तक बिहार प्रदेश नामक कोई क्षेत्र नहीं था। वर्तमान समय में जिसे हम बिहार राज्य कहते हैं वह दो राज्यों में विभक्त था—

(क) मगध का राजतंत्र और

(ख) वैशाली का गणतंत्र

गंगा के उत्तर में स्थित वैशाली गणतंत्र वज्जिसंघ के नाम से विश्रुत था जो वर्तमान मुजफ्फरपुर, सीतामढ़ी और सारण जिले तक फैला था। मिथिला के अंतिम राजा 'सुमति' को पराजित कर वज्जिसंघ ने मिथिला को अपने गणतंत्र के अधीन कर लिया था। उन दिनों वैशाली अपनी सभ्यता-संस्कृति, अपने धर्म-दर्शन और धन-वैभव में उत्कर्ष के शिखर पर थी।

वैशाली का इतिहास अत्यन्त ही प्राचीन है। 'वाल्मीकीय रामायण' में इस बात का उल्लेख मिलता है कि जब राम-लक्ष्मण अपने गुरु विश्वामित्र के साथ जनकपुर जा रहे थे तो मार्ग में उन्हें 'विशाला' नगरी मिली थी। यही 'विशाला' कालान्तर में 'वैशाली' के नाम से प्रसिद्ध हुई। इस नगरी को इक्ष्वाकु-पुत्र महाराज विशाल ने बसाया था—

इक्ष्वाकोऽस्तु नरव्याघ्रः पुत्रः परमधार्मिकः।

अलम्बुषायामुत्पन्नो विशाल इति विश्रुतः॥

तेन चासीदिह स्थाने विशालेति पुरी कृता।

मगर विष्णुपुराण के अनुसार विशाल इक्ष्वाकु के पुत्र नहीं, बल्कि इक्ष्वाकु-वंश के महाराज तृणविन्दु के पुत्र थे - 'ततश्चालम्बुषा नाम वराप्सरास्तृणविन्दु भेजे तस्यामप्यस्य विशालो जज्ञे यः पुरी विशाला निर्ममे।'

कुछ विद्वानों के विचारानुसार भगवान महावीर वर्द्धमान की माता का नाम 'त्रिशला' था जिसे 'विशाला' भी कहा जाता था और इसी विशाला के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण महावीर वर्द्धमान को 'वैशालिक' कहा गया, जिनके नाम पर ही इस क्षेत्र का नाम 'वैशाली' पड़ा।

उन दिनों वैशाली की शासन-प्रणाली, एकता और समृद्धि देखते ही बनती थी। यहाँ एक-से-एक विद्वान, दार्शनिक, तार्किक, शास्त्रज्ञ और वीर पुरुष थे। ऐसे लोगों में आनन्द, सच्चक, सिंह सेनापति आदि के नाम लिये जा सकते हैं। थेरीगाथा के अध्ययन से विदित होता है कि वत्सा, जयन्ती, विमला,

सिंहा, वासिष्ठी, सच्चा, लोला, अववादका, पाटाचारा आदि जैसी विदुषी नारियाँ भी वैशाली की ही विभूतियाँ थीं। वैशाली की राजनर्तकी आम्रपाली की भी काफी प्रसिद्धि थी।

विनय ग्रन्थ इस बात का प्रमाण है कि उन दिनों वैशाली नगरी तीन भागों में विभक्त थी। प्रथम भाग में उच्च कुल के लोग, द्वितीय भाग में मध्य कुल के लोग और तृतीय भाग में साधारण कुल के लोग निवास करते थे। प्रथम भाग में सुवर्ण-गुम्बद-युक्त 7000 प्रासाद, द्वितीय भाग में रजत-मेण्डित गुम्बदों से युक्त 14000 महल और तृतीय भाग में ताम्रवेष्टित गुम्बदों से युक्त 21000 मकान थे। उन दिनों यहाँ लगभग 42000 परिवार निवास करते थे।

‘भद्रसाल जातक’ में इस बात का उल्लेख मिलता है कि वैशाली में एक अभिषेक पुष्करिणी थी जिसके चारों ओर घाट बने हुए थे और उन घाटों पर पत्थर की सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। पुष्करिणी के चारों ओर लोहे के तार की जाली थी, जिससे उसमें कोई अन्य व्यक्ति या पशु-पक्षी तक प्रवेश नहीं कर सकते थे। इस पुष्करिणी के पवित्र जल से ही वैशाली के राजाओं का राज्याभिषेक होता था। पुष्करिणी के रक्षणार्थ उसके चतुर्दिक सैनिकों का कड़ा पहरा रहता था। आज वह अभिषेक पुष्करिणी ‘खरौना पोखर’ के नाम से जानी जाती है।

वैशाली के सभासद बड़े ही योग्य व्यवहार-कुशल और सुसंस्कृत होते थे। वे सभी ‘राजा’ की संज्ञा से अभिहित किये जाते थे। बुद्ध जब अपने जीवन के अन्तिम वर्ष में वैशाली आये थे तो उनके दर्शनार्थ ये सभासद उनके पास पहुँचे। उन्हें दिखाते हुए बुद्ध ने अपने शिष्यों से कहा था - भिक्षुओं! जिन्होंने तावत् त्रिंशद् देवताओं को नहीं देखा है, वे इन बज्जियों को देख लें’।

जो भी हो, इतना तो मानना ही होगा कि वैशाली का इतिहास बड़ा ही गौरवपूर्ण रहा है। स्व. जयशंकर प्रसाद के नाटक ‘ध्रुवस्वामिनी’ की नायिका ‘ध्रुवस्वामिनी’ लिच्छवी राजकुमारी ही थी। बसाढ़ की खुदाई से प्राप्त एक सिक्का पर अंकित है - ‘महाराजाधिराज श्री चन्द्रगुप्त पत्नी महाराज गोविन्द गुप्त माता महादेवी श्री ध्रुवस्वामिनी’। सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. विमलचरण लाहा के अनुसार, वैशाली नगर गरिमा के सर्वोच्च शिखर पर आरूढ़ थी ठीक, किन्तु लिच्छवीगण इस गरिमा को चिरस्थायी नहीं रख सके। बज्जियों ने अनेक बार मगध के राजा अजातशत्रु के विरुद्ध चढ़ाई की, जिससे राजा ने सुनीध और वस्सकार नामक दो मंत्री-गुप्तचरों को वहाँ के लोगों और सभासदों में फूट डालने के लिए भेजा। अन्ततोगत्वा अजातशत्रु ने लिच्छवियों का विध्वंस करके ही छोड़ा।

आज वैशाली नगर का ध्वंसावशेषमात्र ही रह गया है जिसे लोग ‘वैशाली गढ़’ के नाम से जानते हैं। वैशाली क्षेत्र का बालुका ग्राम, आनन्दग्राम, अम्बारा, भमियार, मँड़पसौना, अशोक-स्तंभ आदि मौन-भाव से अपने अतीत की कथा कह रहे हैं। स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति स्व. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के शब्दों में, ‘हमारे प्राचीन इतिहास में वैशाली का बड़ा ही अधिक महत्त्व है।’ डॉ. एन.के.पी. श्रीवास्तव के शब्दों में ‘वैशाली मात्र ऐतिहासिक दृष्टि से ही नहीं, अपितु धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी उत्कर्ष पर थी।’

प्रो. ओ.सी. गांगुली के अनुसार, ‘जिस नगर ने अपने युग में उत्तमोत्तम कर्मों की महिमा से इतिहास के पन्नों को उज्ज्वल रखा है, जो नगर अपनी अनेक कीर्ति से एवं बुद्धदेव और उनकी शिष्यमण्डली के पद-चिह्नों के कारण बार-बार जगमगा उठा है, जिस नगर में बुद्धदेव की परम भक्त-मण्डली लिच्छवी जाति ने बौद्ध धर्म के भण्डार को पूरा किया है और जिस नगर को भगवान तीर्थंकर महावीर की जन्मभूमि होने का सौभाग्य प्राप्त है।’ महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने भी ठीक

ही कहा है— 'वैशाली की यह भूमि कितनी पुनीत है, इसका इतिहास कितना गौरवपूर्ण है, इसका स्मरण करते ही हृदय इतने भावों से भरा हुआ है जिन्हें प्रकट करने के लिए वाणी असमर्थ है।'

प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग और फाह्यान ने तो अपनी-अपनी डायरी में वैशाली की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

वैशाली में आज भी बौद्ध-स्तूप, आनंद-स्तूप, महावीर की जन्मभूमि पर स्थित मंदिर, जैन-संग्रहालय, अनेक देशों द्वारा निर्मित बौद्ध मंदिर आदि भी दर्शनीय हैं। वैशाली की प्राकृतिक छटा भी कम मनमोहक नहीं है।

भगवान बुद्ध को वैशाली से बहुत अधिक स्नेह था। इसी कारण वे बार-बार वैशाली आते रहे और वैशालीवासियों ने भी उन्हें काफी सम्मान दिया। वैशाली की महिमा की ओर इंगित करते हुए स्वयं उन्होंने कहा है - 'रमणीया आनन्द वैशाली। रमणीय उदेनं चेतियं, रमणीयं गोतमकं चेतियं, रमणीयं सत्तम्बकं चेतियं, रमणीयं बहुपुत्त चेतियं, रमणीयं सारन्ददं चेतियं, रमणीय चापालं चेतियं।'

विभिन्न समयों में जनरल कनिंघम, ब्लाश, स्पूनर, कृष्णदेव, अल्टेकर आदि द्वारा खुदाई से जो अवशेष प्राप्त हुए हैं उनसे वैशाली की तत्कालीन संस्कृति का पता चलता है।

इस प्रकार वैशाली का इतिहास अपने आप में बड़ा ही अधिक महत्त्व रखता है। इसकी समृद्धि, इसके शौर्य तथा इसके गौरव की ओर संकेत करते हुए विपुष श्रीधर ने अपने 'वड्डमाण चरिऊ में लिखा है—

गिणवसई विदेहु णामेण देसु खयराम रेहि सुहयर पएसु।

तहि गिणवसई कुंडपुराहिहाणु पुरूधय-चय-मापिय-तित्व भाणु।

वैशाली कला, धर्म, संस्कृति और ज्ञान की भूमि तो रही ही है, दार्शनिक समन्वय की भी भूमि रही है।

आज वैशाली पर अनुसन्धान-कार्य करने की आवश्यकता है, जिससे विभिन्न नये-नये तथ्यों के उद्घाटन हो सकें और इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ सके।

## संदर्भ ग्रन्थों की सूची

1. दीघ निकाय - भारतीय ज्ञानपीठ, काशी
2. बाल्मीकीय रामायण - गीता प्रेस, गोरखपुर
3. विष्णु पुराण - गीता प्रेस, गोरखपुर
4. धम्मपद अट्ठकथा - काशी प्र. जायसवाल शोध संस्थान, पटना
5. जातककट्ठ कथा - साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
6. बौद्ध धर्म और बिहार - हवलदार त्रिपाठी, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना
7. थैरीगाथा - सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली।

# आचार्य शिवपूजन सहाय की सम्पादन – कला

डॉ० पूजा कुमारी

व्याख्याता, हिन्दी विभाग, पारस कौशल डिग्री महाविद्यालय  
बड़ा तेलपा, छपरा (बिहार)

आचार्य शिवपूजन सहाय कई पत्र-पत्रिकाओं से संबद्ध रहे। उन्होंने इन पत्र-पत्रिकाओं में जो सम्पादकीय लेख लिखा है, वे अत्यन्त ही उच्च कोटि के हैं। उनमें एक साथ ही साहित्यकार और पत्रकार दोनों की विशिष्टताएं समन्वित रूप में दृष्टिगोचर होती हैं।

प्रायः समाचार-पत्रों में दो या तीन संपादकीय लेख दो स्तंभों में लिखे जाते हैं और एक स्तंभ टिप्पणियों का होता है। बड़े समाचार-पत्रों में सम्पादकीय पृष्ठ कई-कई व्यक्ति मिलकर लिखते हैं। वे सब एक साथ बैठकर करके निश्चय करते हैं कि सम्पादकीय टिप्पणियों का लेखन किस विषय पर किया जाय और उनमें कौन-सा रुख अपनाया जाय और फिर अलग-अलग विषय अलग-अलग व्यक्तियों को दिया जाय।

कहना न होगा कि सम्पादकीय लेख सम्पादकीय पृष्ठ का हृदय होता है। इसीलिए इसका बड़ा ही अधिक महत्व होता है। जहाँ तक टिप्पणियों की बात है, इस संबंध में एक पुरानी कहावत है— 'एक अच्छी टिप्पणी दस जानकारियों के बराबर होती है। वही संपादक अच्छा संपादकीय लेख या अच्छी टिप्पणियां लिख सकता है, जिसे अनेक विषयों का ज्ञान होता है और भाषा पर पूर्ण अधिकार होता है। आचार्य शिवपूजन सहाय को युगीन परिस्थितियों की जानकारी के साथ-साथ तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक गतिविधियों का ज्ञान तो था ही, एक सिद्धहस्त साहित्यकार होने के नाते भाषा पर भी पूर्ण अधिकार था। अतः वे जो सम्पादकीय लेख या टिप्पणियां लिखते थे, उनमें विचारों और भावों का एक-सा गुम्फन होता था कि वह सीधे पाठकों के मर्म को स्पर्श करता था।

आचार्य शिवजी इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि 'सम्पादकीय पृष्ठ समाचार-पत्र की चेतना होता है। घटनाओं का अर्थ आज के युग में अधिकाधिक दुर्बोध होता जा रहा है। आंकड़ों की बाढ़ से परस्पर विरोधी विचारों के लोग किंकर्तव्यविमूढ़ से हो गये हैं। संपादकीय लेख का लेखन ऐसी स्थिति में उसकी सहायता कर सकता है। आलोचना, टीका-टिप्पणी, विश्लेषण और विचार-अभिव्यक्ति के बिना समाचार-पत्र और विज्ञापनों का अम्बारमात्र रह जाता है।' इसीलिए आचार्य शिवपूजन सहाय खूब सोच-समझकर सम्पादकीय लेख और टिप्पणियां लिखा करते थे।

चूँकि सम्पादकीय पृष्ठ जनमत का उच्चतम न्यायालय होता है, इसलिए उसके लेखन में सम्पादक को काफी सावधानी बरतनी पड़ती है। आचार्य शिवजी ने अपने सम्पादकीय लेखों और टिप्पणियों के लेखन में बड़ी सतर्कता दिखलाई है।

शिवजी का पत्रकार-जीवन 'मारवाड़ी-सुधार' पत्रिका से आरंभ होता है। इस पत्रिका के विभिन्न अंकों में उनके सम्पादकीय लेख और उनकी टिप्पणियां देखने योग्य हैं।

'मारवाड़ी-सुधार' यद्यपि जातीय पत्र था, जिसका उद्देश्य मारवाड़ी-समाज में सुधार और उत्थान का भाव जाग्रत करना था तथापि सम्पूर्ण समाज और राष्ट्र के कल्याण की भावना से युक्त सम्पादकीय लेख इसमें लिखे जाते थे। 'मारवाड़ी-सुधार' वर्ष-1, अंक-8 का सम्पादकीय लेख यहाँ प्रस्तुत है जिसका शीर्षक है- 'तैयार रहना होगा'। सम्पादकीय लेख इस प्रकार है- 'किसको? प्रत्येक मारवाड़ी को, प्रत्येक राजस्थान के सपूत को और प्रत्येक स्वदेशभिमानी को! किसलिए? सत्याग्रह-संग्राम में साहस के साथ सम्मिलित होने के लिए। अहिंसात्मक असहयोग के कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए और मारवाड़ी जाति की स्वाभाविक वीरता को चरितार्थ करके राजस्थान का गौरव बढ़ाने के लिए। किन्तु, जब ऐसे विकट कार्य को सम्पूर्ण करने के लिए तैयार रहना होगा, तब यह भी याद रखना होगा कि अखण्ड शांति और अहिंसा के सिद्धान्तों का पालन करने में ही वास्तविक विजय है। यदि आप संयमशीलता और नम्रता के साथ कानून-भंग करने के लिए तैयार होना चाहते हैं, तो सबसे पहले अपने मन को अपने वश में करके शारीरिक कष्ट सहन करने का अभ्यास कीजिए और अन्याय का सामना करने के लिए नितान्त निर्भीक बन जाइये। किन्तु, अब भी समझ लीजिए कि केवल सत्य का सहारा ग्रहण किये बिना आप में दृढ़ निर्भयता नहीं आ सकती है। याद रहे, जिसको केवल अशरण-शरण का भय है, वह सर्वत्र ही सर्वथा अभय है।'

इस सम्पादकीय लेख में शिवजी की राष्ट्रीय भावना व्यक्त हुई है और सत्य, अहिंसा, बन्धुत्व आदि का भाव भी व्यंजित हुआ है। इस लेख की भाषा बिल्कुल टकसाली और प्रभावशाली है। इसी प्रकार आचार्य शिवजी की व्यंग्यात्मक टिप्पणियां भी बड़ी ही तीव्र होती थीं। अंग्रेजी सरकार द्वारा नमक पर जब दो गुणा टैक्स लाद दिया गया तो इस पर उन्होंने जो टिप्पणी लिखी थी, वह इस प्रकार है- 'नमक पर अब पहले से दूना टैक्स लगा दिया गया। अब 211) मन नमक कर लगेगा। वायसराय महोदय ने जो कुछ किया और कहा है, वह आशातीत प्रतीत नहीं होता। जो लोग न्याय और दया की आशा रखते होंगे, उन्हें सचमुच बड़ा कष्ट हुआ होगा और अब तो वे पछताते होंगे। किन्तु, नौकरशाही की करतूतों के कड़वे फल चखने वाली भारतीयता-भक्त जनता को तो पहले से ही इसी परिणाम पर विश्वास था। वह दया की भिक्षा के लिए टकटकी लगाये नहीं बैठी थी। उसे तो अब भी सन्तोष है कि 'मुर्दे पर जैसे एक टोकड़ी मिट्टी, वैसे की पचास टोकड़ी'। क्योंकि जिसके न्याय और दया की विभीषिका ने देश को त्रस्त कर डाला है, उससे किसी प्रकार की शुभ आशा करना अत्यन्त कायरता है। जिसने आज तक की हमारी आशाओं को कुचल डाला, उसने यदि अपनी समझ के अनुसार मनमाने ढंग से यह छोटा-सा (?) काम कर ही दिया तो आश्चर्यित या हताश होने की जरूरत नहीं है। जिस राज्य में अन्न की मंहगी है, उस राज्य में नमक की मंहगी रहनी ही चाहिए। जब अन्न का ही टोटा है, तब खाली नमक कौन खायेगा? इसीलिए, नमक कर दूना बढ़ाकर वायसराय महोदय ने भूख की भयंकर ज्वाला से जलने वाले असंख्य गरीब भारतीयों को यह स्पष्ट दिखला दिया है कि 'देखो, जले पर नमक यों छिड़का जाता है।' इस टिप्पणी में एक और खीझ है तो दूसरी ओर व्यंग्य भी है और तीसरी ओर जनता का अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध सतर्क रहने का भाव भी है।

'मतवाला' पत्रिका के सम्पादकीय और उसकी टिप्पणियां भी बड़ी निर्भीक होती थीं। इनके लिखने में आचार्य शिवजी समाज और राष्ट्र को न भूल पाते थे। 'मतवाला' के वर्ष 2,

अंक 6 का सम्पादकीय यहाँ देखने योग्य है जिसमें उन्होंने स्वार्थान्ध नेताओं और व्यवसायियों पर करारी चोट की है। पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

‘सभी खदर का प्रचार चाहते हैं, देश की भलाई के लिए देशी व्यवसाय की उन्नति चाहते हैं, परन्तु अर्थ-लोलुप विदेशी वस्तु-व्यवसायी ‘छाड़ि न सकहि टेक जो टेकी’। देश रसातल की राह ले, जाति की सत्यानाश जो जाये, मनुष्यत्व की नानी मर जाये, किन्तु ये अभागे देश-द्रोही अपने स्वार्थ से तिल भर भी नहीं डिंगेंगे, खुदा जाने विदेशियों से इनका कौन-सा गहरा रिश्ता कायम हो गया है।’ इन पंक्तियों में शिवजी ने स्वार्थी नेताओं और व्यापारियों के प्रति बड़ी ही तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है।

इसी प्रकार अवसरवादी नेताओं के कौंसिल प्रवेश-हेतु तत्पर नेताओं की कठोर निन्दा करते हुए उन्होंने टिप्पणी दी— ‘भारतवर्ष जैसे देश पर अंग्रेज यदि अन्याय करते हैं तो बुरा नहीं करते। ..... ... जब तक यह देश जी भर कर सताया न जायेगा, जब तक इस पर छूटकर अत्याचार न होगा, जब तक यह घोर दमन-नोचकर कुत्ते न खा जायेंगे, तब तक इसकी सद्गति हो ही नहीं सकती, इसका कल्याण हो ही नहीं सकता, इसका उद्धार असंभव है।..... दाँत दिखाने और नाक रगड़ने से कुछ न होगा, दाँत खट्टे करने और नाक में दम कर देने से ही मनोरथ सफल होगा।’ ऐसी निर्भीक टिप्पणी शिवजी जैसे सजग सम्पादक ही लिख सकते थे।

आचार्य शिवपूजन सहाय का सम्पादकीय साहित्यिक दृष्टि से भी उच्च कोटि की है। शिवजी जब तक मतवाला में रहे, सम्पादकीय, अग्रलेख, अधिकांश व्यंग्य टिप्पणियाँ और पुस्तकों की परिचयात्मक समीक्षाएँ वही लिखते रहे और वैसे भी सम्पादन, प्रूफ-संशोधन आदि का सारा भार उन्हीं पर रहा, पर सम्पादक के रूप में महादेव प्रसाद सेठ का नाम जाता रहा, लगभग उसी तरह जब वे लखनऊ की ‘माधुरी’ के सम्पादकीय विभाग में काम करने गये, तब वहाँ भी उनकी हैसियत एक सम्पादकीय सहयोगी की ही रही, सम्पादक के रूप में नाम दुलारेलाल भार्गव और पंडित, रूपनारायण पाण्डेय का ही छपता था। यह सही है कि ‘माधुरी’ में संशोधन-सम्पादन चाहे जिस हद तक शिवजी करते रहे हों, पर लेखकीय सहयोग उनका ‘पुस्तक-परिचय’, ‘साहित्य-सूचना’ और ‘विविध विषय’ शीर्षक स्तम्भों में ही सीमित रहा। ‘विविध विषय’ में जो साहित्यिक टिप्पणियाँ लिखी जाती थीं, उनके नीचे सम्पादकों में से किसी का नाम नहीं जाता था, परन्तु निश्चय ही उनमें से कुछ टिप्पणियाँ शिवजी ने लिखी थी।<sup>6</sup>

शिवपूजन सहाय ने धार्मिक पत्रिका का भी सम्पादन किया। इन्होंने रामकृष्ण मिशन की पत्रिका ‘समन्वय’ का सम्पादन किया जो उस समय की एक प्रतिष्ठित धार्मिक एवं आध्यात्मिक पत्रिका थी। महाकवि निराला भी इस पत्रिका से जुड़े हुए थे। निराला की ही प्रेरणा से आचार्य सहाय कलकत्ता आये और रामकृष्ण मिशन की इस पत्रिका का सम्पादन करने लगे। ये लगभग एक वर्ष तक यहाँ रहे। समन्वय में इन्होंने रामकृष्ण मिशन के वातावरण के अनुसार पत्रिका में विचार व्यक्त किये।

बालकों के लिए उपयोगी पत्रिका से भी आचार्य शिवपूजन सहाय संबद्ध रहे। बिहार के लहेरियासराय से बालकों के लिए बालक पत्रिका निकलती थी। यह पत्रिका पुस्तक भण्डार के रामलोचन शरण की थी। इसके सम्पादक रामवृक्ष बेनीपुरी थे। रामवृक्ष बेनीपुरी और आचार्य शिवपूजन सहाय में निकटता थी। बेनीपुरी जी के आग्रह पर शिवपूजन सहाय बालक पत्रिका में आ गये। ‘बालक’ में इन्होंने राष्ट्रकवि दिनकर, गोपाल सिंह ‘नेपाली’, आर.सी. प्र. सिंह, हंस कुमार तिवारी आदि की रचनाओं को प्रकाशित कर पत्रिका को अत्यन्त लोकप्रिय बना दिया।

आचार्य शिवपूजन सहाय ने पत्रिका के माध्यम से अपने हिन्दी प्रेम को भी स्पष्ट कर दिया। हिन्दी से संबंधित जहाँ कहीं भी अधिवेशन, सम्मेलन, विचार-गोष्ठी का आयोजन होता था, उसे वे प्रमुखता से प्रकाशित करते थे। 1931 ई. में कांग्रेस के करांची अधिवेशन में गांधीजी ने अंग्रेजी की जगह हिन्दी के प्रयोग पर बल दिया। आचार्य सहाय ने इस समाचार को 'गंगा' मासिक पत्रिका में प्रमुखता से प्रकाशित किया— "कांग्रेस का 45 वां महाधिवेशन करांची में बड़े समारोह और सफलता से सम्पन्न हो गया। उसकी विषय-निर्धारिणी समिति में इस बार भी हिन्दी भाषा की पूछ हुई, यह बड़े संतोष की बात है। कांग्रेस में हिन्दी-भाषा को 'हिन्दुस्तानी' नाम दिया गया। कांग्रेस ने कई बार अपने सदन में और प्रतिनिधियों से हिन्दुस्तानी सीखने की सिफारिश की है। इस बार महात्मा गांधी ने पुनः सदस्यों को डांट लगाई, जो हिन्दुस्तानी समझ नहीं पाते थे। विषय-समिति की कुछ कार्रवाई हिन्दुस्तानी भाषा में हुई। महात्मा जी ने कहा कि जो लोग हिन्दुस्तानी नहीं समझते, कांग्रेस कमिटी की सदस्यता के लिए उम्मीदवार खड़े न हो।"

इसी प्रकार अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का बीसवां अधिवेशन कलकत्ता विश्वविद्यालय के सीनेट हॉल में हुआ। इसकी कार्यवाही को आचार्य सहाय ने विस्तारपूर्वक प्रकाशित किया। अखिल भारतीय हिन्दी सम्पादन सम्मेलन के पांचवें अधिवेशन पर इन्होंने 'गंगा' पत्रिका में सम्पादकीय लेख लिखा— "साहित्य सम्मेलन के ही पंडाल में तारीख 28 मई को अखिल भारतीय हिन्दी सम्पादक सम्मेलन का पांचवां अधिवेशन दक्षिण-अफ्रीका प्रवासी भूतपूर्व हिन्दी-सम्पादक स्वामी भवानी दयाल संन्यासी के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ। विश्वमित्र के संचालक बाबू मूलचन्द्र जी अग्रवाल स्वागताध्यक्ष थे। सभापति स्वामी जी का मुद्रित भाषण छोटा था। उसमें सिर्फ काम की बातें थीं। स्वागताध्यक्ष ने अपने मौखिक भाषण में कहा कि इस समेलन का नाम 'हिन्दी पत्रकार सम्मेलन' होना चाहिए। इस बात को सबने पसंद किया।"

शिवजी के सम्पादकीय लेख और उनके टिप्पणी-लेखन की प्रशंसा स्वयं पंडित रामावतार शर्मा, काशी प्रसाद जायसवाल, नलिन विलोचन शर्मा आदि विद्वानों ने की है। डॉ० रंजन सूरिदेव के शब्दों में, 'आचार्य शिवजी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व सम्पादन-कला की साधना का प्रतिरूप था, जिसमें एक साथ ही उनके देवत्व की दीप्ति और सहसा दयनीय विवशता-सी प्रतीत होने वाली उनकी ऋजु-प्राज्ञता का अद्भुत संयोग था।' इसी प्रकार वे जो सम्पादकीय लिखते थे, उनमें समाज और देश के हित की बातें होती थीं।

## संदर्भ-सूची

1. डॉ. रमेशचन्द्र त्रिपाठी— पत्रकारिता सिद्धांत और स्वरूप, पृ. 234।
2. संपादक शिवपूजन सहाय— मासिक, मारवाड़ी-सुधार, आरा वर्ष-1, अंक-8, 1921 ई.।
3. संपादक शिवपूजन सहाय—मासिक, मारवाड़ी सुधार, सम्पादकीय, वर्ष-2, अंक-7, 1923 ई.।
4. मतवाला— वर्ष-2, अंक-6, सम्पादकीय।
5. मतवाला— अग्रलेख, दिनांक 24.11.1923 ई.।
6. मंगलमूर्ति— भारतीय साहित्य के निर्माता, शिवपूजन सहाय, पृ.-93।
7. शिवपूजन रचनावली, भाग-4, पृ. 392।
8. शिवपूजन रचनावली, भाग-4, पृ. 396।
9. मंगलमूर्ति— भारतीय साहित्य के निर्माता, शिवपूजन सहाय पृ.-105 से उद्धृत।

# हिन्दी के आदिवासी उपन्यासों में स्त्री-शोषण की चित्रित समस्याएँ

डॉ० रश्मि जैन

रीडर, हिन्दी विभाग, एस०आर०के० पी०जी० कॉलेज, फीरोजाबाद, उ०प्र०

नारी को देवी का अवतार माना जाता है, वह ईश्वर की बनायी सर्वोत्तम कृति हैं। वह सृष्टि का उद्गम स्रोत एवं जीवनरूपी द्विपाद-चक्र-वाहिनी का एक सुदृढ़ पहिया है। सम्पूर्ण भारतीय समाज में 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' की अवधारणा से स्पष्टित, ममता, करुणा, त्याग, प्रेम एवं समर्पण की अधिष्ठात्री स्त्री की भूमिका सदा ही अविस्मरणीय रही है। परन्तु स्त्रियाँ प्रायः हर जगह शोशित-उत्पीड़ित ही रही हैं, फिर वह चाहे उच्च वर्ग की स्त्री हो या निम्न वर्ग की या फिर आदिवासी स्त्रियाँ हो सभी के साथ शोषण होता चला आ रहा है। स्त्रियों के शोषण की समस्या न तो कल कम थी न आज ही, इन शोषण ग्रस्त समाज की स्त्रियों का जीवन विषादपूर्ण एवं अपमान की जीती-जागती तस्वीर है। इन स्त्रियों की दुर्दशा पूर्ण स्थिति करने वाले यह सभ्य समाज ही है जो स्वयं को तो सभ्य और संस्कारित समाज का अंग मानता है परन्तु यह समाज स्त्रियों को भूखे गीदड़ की तरह नोच-नोच कर खाता चला जा रहा है। यह लोग स्त्रियों को मात्र भोग की वस्तु समझते हैं। भारतीय आदिवासी समाज में नारी की सामाजिक स्थिति के भिन्न-भिन्न रूप पाये जाते हैं। कुछ ऐसे भी आदिवासी समाज हैं जो नारी को अपने पैरो की जूती के समान समझते हैं। उस समाज की नारी पुरुष आश्रित होती है और कुछ आदिवासी समाज में स्त्रियाँ, पुरुषों पर अपना अधिकार जमाती है। इस समाज की स्त्रियाँ अपने आपको पुरुषों से कही ऊँचा समझती हैं और जीवन निर्वाह के लिए स्वयं को समर्थ मानती हैं।

मातृसत्तात्मक परम्परा के चलते भारत में आदिवासी महिलाओं की स्थिति देश के अन्य समुदाय की स्त्रियों के मुकाबले बेहतर है। अपने समुदाय में आदिवासी स्त्रियों का हमेशा से एक प्रमुख स्थान रहा है। लेकिन अब आदिवासी स्त्रियों के सामने अनेक समस्याएँ खड़ी होती जा रही हैं। उन्हें अन्य महिलाओं से अलग कर देखा जा रहा है। सभ्यता, विकास और हैसियत में नीची और अपने समाज में अधिक मुक्त होने के कारण ये महिलाएँ गैर-आदिवासियों की नजर में उन्मुक्त मानी जाती हैं। गैर-आदिवासी उनका उपभोग भूमि हथियाने और उनके समुदाय का दमन करने के साथ-साथ उन पर अत्याचार भी करते आ रहे हैं।

आदिवासी समाज में प्रमुख समस्या है स्त्री का शोषण, इसी शोषण को लेकर हिन्दी में अनेक आदिवासी उपन्यास लिखे गये हैं। स्त्री शोषण का चित्रण 'जंगल के आसपास' उपन्यास में चित्रित है। दमकड़ी गाँव के लोग आदमखोर से पीड़ित थे। सरकार ने उसे मारने के लिए एक अंग्रेज शिकारी राबर्ट को नियुक्त किया है। वह दमकड़ी गाँव पहुँचता है। वहाँ के आदिवासी युवतियों को देख उसकी काम वासना जागती है। राबर्ट द्वारा शिकार की गई हिरण को तेज आंच में भूना जाने लगा। राबर्ट और उसके साथी छतरी के नीचे टेबल पर फ्रांसीसी स्कॉच खोलकर उसे खाने और हजम करने के सामान का बंदोबस्त करने लगे। इस सारे दृश्य को गाँव के सभी बच्चे आश्चर्य से देखने लगे। इस झुंड में कई आदिवासी युवतियाँ भी शामिल थीं। राबर्ट ने लड़कियों के झुंड में से ज्यादा जवान और खूबसूरत दिखाई देने वाली लड़की को इशारा करके बुलाया। सब लड़कियों ने अपनी-अपनी छाती पर हाथ रखकर समझना चाहा वह क्यों बुला रहा है। जब बुलायी गई लड़की ने हाथ रखा तो राबर्ट ने मुस्कुराकर स्वीकारात्मक गर्दन हिला दी और हाथ के इशारे से कहा हँ तुम ही, चली आओ। लड़की सिकुड़ती-सकुचाती और अपनी फटी-पुरानी धोती में बड़ी मुश्किल से अपने वक्ष को छुपाती राबर्ट

के पास पहुँचती है तथा गर्दन झुकाकर उसके बगल में खड़ी हो जाती है। लड़की के यौवन को देखकर राबर्ट की आँखें भूखे भेड़िये की तरह चमकने लगी। वह गोश्त का एक टुकड़ा लड़की की ओर बढ़ा देता है। लड़की हड़बड़ाकर टुकड़े को लेना चाहती है किन्तु राबर्ट एक भद्दी नजाकत के साथ मांस के टुकड़े को हटा देता है। लड़की उस हरकत में हलकान होकर जब लौटने को तैयार होती है तो राबर्ट टुकड़ा लड़की को दे देता है और लड़की के कमर पर हाथ रखकर कहता है—“अगर रात को आँगा टब हम टुम का बहुत बरी-बरी चीज प्रेजेण्ट देगा।” लड़की गोश्त लेकर सीधे अपने घर जाती है। राबर्ट की नजरे उसका पीछा करती है।

लड़की के जाने के थोड़ी देर बाद ही उससे भी कुछ बड़ी लड़कियाँ सकुचाती-शरमाती बच्चों के उस झुंड में आ मिलती हैं और प्रतीक्षा करने लगती हैं कि शिकारी गोमा की तरह उन्हें भी बुलाए और गोश्त का टुकड़ा घर ले जाने के लिए दे ताकि उनके घर भी आज शाम हिरन का गोश्त बने। इस प्रकार झुंड में खड़ी लड़कियों को देख राबर्ट के खुशी का ठिकाना नहीं रहता। उसने हिरण की देह से बड़े-बड़े टुकड़े कटवाकर अपने सामने की प्लेटों में रखवाकर जाँच करने लगता है कि सबसे ज्यादा सुन्दर लड़की कौन सी है ताकि इशारा करके वह उसे बुलाये। आखिर एक लड़की को चुन लेता है और इशारे से उसे बुलाता है।

एकाएक एक दिन राबर्ट एक आदिवासी के घर घुस जाता है। मकान के अन्दर से चीखें सुनाई देने लगती हैं। उपन्यासकार लिखते हैं—“चीखों के साथ ही कुछ इस तरह की उठा-पटक की आवाजें भी, जैसे कोई अरनी भैंस अपनी जान बचाने के लिए किसी बाघ के साथ युद्ध लड़ रही है।”<sup>12</sup> बाहर खड़े लोगों का झुंड इस दृश्य को किसी तमाशे की तरह देख रहा था। किसी को कुछ कहने की हिम्मत नहीं हो रही थी। किन्तु यह सब जमना से सहा नहीं गया। वह तमाशे के घेरे को तोड़कर आगे आयी और दहाड़कर बोली—“कमीनों, तुम्हारी बहू-बेटियों की लाज तुम्हारी आँखों के सामने एक विदेशी फिरंगी लूट रहा है और तुम इस तरह से पत्थर के बुत बने खड़े हो। डूब मरो कुत्तो, चुल्लू भर पानी में डूब मरो।”<sup>13</sup>

उपरोक्त प्रसंग स्त्री शोषण का मात्र एक पक्ष है, इसी उपन्यास में स्त्री शोषण का दूसरा पक्ष भी अभिव्यक्त हुआ है जो वहाँ के जमींदार राय साहब तथा ओझा द्वारा बनाये गए धार्मिक नियम परम्परा के रूप में सदियों से चला आ रहा है। रायसाहब और ओझा उस इलाके के न्यायाधीश हैं। इस इलाके में किसी भी स्त्री पर अत्याचार होने पर उसे अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है। चंदेरी के शब्दों में “जिस लड़की या औरत को इज्जत लुट जाती है, अगर वह शिकायत ओझा या रायसाहब को पहुँचाए तो पहले उस लड़की या औरत को अग्नि परीक्षा देनी होती है, अपनी शिकायत को सचाई को साबित करने के लिए। अग्नि-परीक्षा में खरी उतर आने पर इज्जत लूटने वाले को वह हर्जाना देना होता है, जो औरत उसके माता-पिता या उसका पति मांग करे। अंत में हर्जाना की राशि का फैसला ओझा करता है। यही इस इलाके के ओझा का बनाया हुआ धार्मिक दस्तूर है और यह दस्तूर आदिवासी जातियों के सभी कबीलों पर लागू होता है।”<sup>14</sup>

वास्तव में आदिवासियों के बीच उत्पन्न विवादों को वे अपने पंचायत द्वारा निपटा लेते हैं किन्तु ऐसे कई आदिवासी क्षेत्र हैं, जहाँ बाहरी लोगों का प्रवेश बरसों पहले हो चुका है। इन लोगों ने आर्थिक, सामाजिक स्तर पर उनका शोषण तो किया ही धर्म के नाम पर भी वे उनका शोषण करते रहे हैं। उनकी सामाजिक व्यवस्था में हस्तक्षेप कर रहे हैं और अपना वर्चस्व स्थापित किये हुए हैं। क्या एक औरत या लड़की को इतना कह देना मात्र ही अग्नि-परीक्षा से कम नहीं है कि उसकी इज्जत लुट गई है। अग्नि-परीक्षा के डर से आदिवासी औरत मर्द द्वारा अपने पर किए गए अत्याचार को लेकर जबान तक नहीं खोल सकती।

इसी प्रकार उपन्यास ‘पठार पर कोहरा’ में भी आदिवासी महिला पर अत्याचार का प्रसंग दिखाई देता है, रंगेनी अपने पति के मृत्यु के बाद अकेली रहती है। अपना जीवन चलाने के लिए जंगल में वनोपजों को चुनकर तथा घर के पास उगाए गये तरकारियों को लेकर शहर के गलियों में बेचने के लिए जाती है। रेलगाड़ी में सिपाही उसके साथ अत्याचार करते हैं, जिससे वह गर्भवती हो जाती है।

गाँव में यह पता चलने पर उसे पंचायत में बुलाया जाता है और उससे पूछा जाता है कि यह गर्भ किसका है? रंगेनी अब तक झुका अपना सिर ऊपर उठाकर कहती है—“बीते दिनों कई मरदों ने हमारी देह खँखोरी है। रेलवर्ड के सिपाही, सँझली गाड़ी में। साहत जतने थे, सबने ...। फिर एक दिन औघड़वा भी हमारे साथ ...।”<sup>5</sup>

इसी प्रकार बस्तर के गोंड आदिवासी जीवन पर आधारित ‘जंगल का फूल’ उपन्यास में गोंड नारी की सामाजिक स्थिति के संबंध में लेखक राजेन्द्र अवस्थी लिखते हैं—“औरत की जात, वह तो कच्ची माटी की हाड़ी हैं। जिसे जो निशान उस पर बनाना हो, बना दे, जब कोई हाड़ी अकड़ती हैं तो कुम्हार उसे चाक में कसकर भरपूर तड़पाता है। ‘मुंदरी’ जानती थी कि दुनिया में कोई औरत बिना मर्द के नहीं रह सकती। मर्द उसका सहारा है, वैसा ही जैसे बेल के लिए झाड़ होता है। मर्द शीशम का पेड़ है और औरत उसकी अमरबेल, बिना झाड़ का सहारा पाए वह जी नहीं सकती।”<sup>6</sup> इसलिए जब उपन्यास में “मुंदरी सताय के बारे में सोचती तो उसके मन में हमदर्दी के भाव जाग उठते हैं।”<sup>7</sup> एक औरत के मन में दूसरी औरत के प्रति हमदर्दी जताना लेखक की साधना रही है। लेखक बिना पति के नारी को असहाय मानते हैं। नारी के जीवन यापन के लिए पुरुष का सहारा आवश्यक माना गया है।

‘जंगल का फूल’ उपन्यास की नायिका ‘महुआ’ नारी स्थिति पर तरस खाती हुई कहती है—“काश, रात में उसे अफसर के पास रहना न पड़ता, झिरिया चुड़ैल न होती तो क्या पता, सवरे सुलकसाए उससे आँखें फेर लेता और न जाने किससे वह अपनी नजरे उलझा लेता। इसलिए वह बन्धनहीन रहना चाहता है। उसका क्या, वह रह सकता है, पर मेरा क्या होगा? मैं औरत जो हूँ। कुम्हार की हांडी एक बार जूठी हुई फिर बेकार। दूसरा खसम भले मिल जाए, पर दिल कहाँ मिलता है।”<sup>8</sup> इस तरह से महुआ अपने और औरत जाति के बारे में तरह-तरह प्रकार से सोचती है।

उपन्यासकार राजेन्द्र अवस्थी ने केवल नारी स्थिति को बताया ही नहीं बल्कि नारी स्थिति को लेकर उपन्यास के पात्रों में आत्ममंथन जगाया है—मरदो ने मिलकर अपनी मरजी के कानून बना लिये हैं और उसे समाज का जामा पहना दिया है। जब कभी हम विरोध करती हैं, वे हँसते हुए कहते हैं—“तेरा दर्द समझता हूँ पर क्या करूँगा”<sup>9</sup> समाज जो कहता है, वह करना पड़ता है फिर हम बूढ़े तुम्हारी भलाई के लिए ही करेंगे।

इस तरह सबकी बातें सुनते-सुनते जलियाँ झुलझुला जाती हैं और कहती हैं। मैं सोचती हूँ यह समाज भी कैसा है, जैसा भेंडिये बसते हैं। तू तो जानती है पाली का किस्सा झिरिया की कहानी।”<sup>10</sup>

इस तरह उपन्यास में दूसरी ओर जलिया भी अपनी प्रेम व्यथा झालर सिंह से कहती है—“तो यह कहो झालर सिंह कि तुम मरदों ने उसके मन को दीमक की तरह खा डाला है। लिंगों की दुनिया में औरत-मर्द का भेद नहीं रे झालर। भेदभाव की सारी दीवारें तुम्हारी बनायी है। तुम हाथ में डुग-डुगी लेकर बन्दरों की तरह औरत को नचाते हो।”<sup>11</sup>

सत्ताय जब अपने पति के नाराज हो जाने पर उसे उसकी गलतियों से अवगत कराने का प्रयास करती है तो हिरमे उसे पीटना शुरू कर देता है। यह सब देख जलिया हिरमें से कहती है—“तुम मर्द जब चाहों ढोल पीट सकते हो जब हम पीटना चाहती है तो तुम ढोल की दरार ढीली कर देते हो और कहते हो-भगवान ने लिखा है, तुम ढोल नहीं पीट सकती।”<sup>12</sup>

निश्चित रूप से आदिवासी समाज की स्त्रियों की दशा दयनीय है तथा उनके समाज में उनकी नगण्यता विद्यमान है। जो स्त्रियों को केवल काम करने वाली तथा भोग की वस्तु ही मानते हैं। इसके अलावा उनका कोई अस्तित्व और अधिकार नहीं है। जो कुछ भी है तो वह है ‘पुरुष’ बस इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं।

एक अन्य उपन्यास ‘पिछले पन्ने की औरतें’ उपन्यास में मुख्यतः बेड़नी समाज की औरतों का वर्णन किया गया है, समाज में व्याप्त विसंगतियों के कारण दलित-शोषित जीवन व्यतीत करने को विवश स्त्रियों की दशा को रेखांकित करना कथाकार का मुख्य उद्देश्य है। समाज में इन औरतों की

उपस्थिति का अनुभव तो किया जाता है, किन्तु इनके प्रति संवेदनात्मक अनुभूति कभी-कभार ही उपजती है। अधिकांश लोगों के लिए यह औरतें 'बेड़नी' मात्र हैं, जिन्हें नाचने वाली के रूप में नचाया जा सकता है, जिन्हें भोगा जा सकता है, किन्तु उन्हें विकास की मुख्य धारा से जोड़े जाने के प्रश्न यदा-कदा ही उठते हैं। मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड अंचल में सदियों से लगभग एक सी जीवन शैली को जी रही इन बेड़नियों के अतीत और वर्तमान को उपन्यास में पिरोया गया है, जिसमें इतिहास, संस्मरणों, लोककथाओं एवं किंवदंतियों के साथ-साथ बेड़नियों के जीवन से जुड़े हुए शोध आत्मक तथ्यों को आधार बनाया गया है। स्त्री विमर्श पर आधारित इस उपन्यास में सदियों से दलित, पीड़ित, शोषित एवं उपेक्षित स्त्रियों की जीवन दशाओं एवं उनसे जुड़ी समस्याओं को रेखांकित किया गया है। कथाकार ने स्वयं लिखा है कि-“मैं पुरुषों की विरोधी नहीं हूँ, किन्तु उस विचारधारा की विरोधी हूँ जिसके अन्तर्गत स्त्री को मात्र उपभोग की वस्तु के रूप में देखा जाता है। विचारों का यह पुरुष-प्रधान परिवेश ही जिम्मेदार हैं उन औरतों के जीवन की त्रासदियों के लिए जो अतीत में 'गणिकाएँ', 'देवदासियाँ', अथवा 'नगरवधुएँ' कहलाती थीं और वर्तमान में 'कालगर्ल', 'बारडांसर' और 'सेक्सवर्कर' कहलाती हैं। अर्धशिक्षितों के बीच इन्हीं औरतों को 'नचनिया', 'पतुरिया' और 'धधेवाली' कहा जाता है। समाज में देह-व्यापार यदि आज भी जीवित है तो मात्र इसलिए कि पुरुषों में स्त्री देह को खरीदने की प्रवृत्ति आज भी मौजूद है। स्त्रियों से जुड़े इस 'अपराध' को स्त्रियों की सहज उपलब्धता पर मढ़कर कोई भी समाज दोषमुक्त नहीं हो सकता।”<sup>13</sup>

इसी प्रकार आदिवासी स्त्रियों पर अत्याचारों का प्रसंग 'रेत' उपन्यास में भी मिलता है। 'रेत' कंजरी के जीवन पर लिखा गया उपन्यास है। अंग्रेजों ने भारत के कुछ जनजातियों को पेशे के आधार पर अपराधी जनजाति घोषित किया और 'क्रिमिनल ट्राइबल एक्ट' कानून लागू किया था। जिसके चलते वे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उनका शोषण करते रहते थे। स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने उन्हें विमुक्त किया, फिर भी वर्तमान में समाज उन्हें उसी रूप से देख रहा है। जहाँ कहीं भी कोई अपराध होने पर पुलिस पुरुषों को पकड़कर ले जाती है, उन्हें छोड़ा जाने के लिए स्त्रियाँ पुलिस अधिकारियों के साथ रात बिताती हैं। इसी समस्या की अभिव्यक्ति 'कबतक पुकारूँ' उपन्यास में भी हुई है। सुखराम को पुलिस के शिकंजे से छोड़ा जाने के लिए कजरी दरोगा रूस्तम खाँ की रखैल बनकर रहती है, जिसके कारण उसे यौन रोग का शिकार होना पड़ता है।

निष्कर्षतः हिन्दी के आदिवासी उपन्यासों में स्त्री-शोषण की समस्याओं को सभी उपन्यासकारों ने उठाकर इस ज्वलंत समस्या पर सबका ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया है। हमारे देश में तब तक आदिवासी समाज की उन्नति नहीं हो सकती है, जब तक आदिवासी समाज में स्त्री शोषण पर नियंत्रण नहीं किया जाता, वर्तमान में समाज के सभी लोगों को इस समस्या पर गंभीरता पूर्वक ध्यान देना चाहिए तथा प्रयास करना चाहिए।

## संदर्भ सूची-

1. 'जंगल के आसपास', राकेश वत्स, पृ० 129
2. 'जंगल के आसपास', राकेश वत्स, पृ० 144
3. 'जंगल के आसपास', राकेश वत्स, पृ० 144
4. 'जंगल के आसपास', राकेश वत्स, पृ० 138
5. 'पठार का कोहरा', राकेश कुमार सिंह, पृ० 69
6. 'जंगल के फूल', राजेन्द्र अवस्थी, पृ० 185-186
7. 'जंगल के फूल', राजेन्द्र अवस्थी, पृ० 175
8. 'जंगल के फूल', राजेन्द्र अवस्थी, पृ० 36
9. 'जंगल के फूल', राजेन्द्र अवस्थी, पृ० 72
10. 'जंगल के फूल', राजेन्द्र अवस्थी, पृ० 69
11. 'जंगल के फूल', राजेन्द्र अवस्थी, पृ० 80
12. 'जंगल के फूल', राजेन्द्र अवस्थी, पृ० 184
13. 'पिछले पन्ने की औरतें', डॉ० शरद सिंह, आवरण पृष्ठ

# प्राचीन भारतीय आहार, पोषण का आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता

नीलम कुमारी

शोधार्थी, गृह-विज्ञान विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

मानव जीवन में भोजन का स्थान सर्वोपरि रहा है। जिस प्रकार यंत्रों को क्रियाशील बनाये रखने के लिए ईंधन की आवश्यकता होती है। ठीक उसी प्रकार शरीर को सुचारू रूप से कार्य करने के लिए आहार एवं पोषण की आवश्यकता होती है। क्योंकि मानव शरीर एक यंत्र के समान है, जिसके विभिन्न अंग यांत्रिक कल-पुर्जों के समान सदैव क्रियाशील रहते हैं। एक विदेशी विद्वान् “टर्नर साहब” ने ‘हैण्ड बुक ऑफ डाइट थैरेपी’ नामक अपनी पुस्तक में पोषण के अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा भी है कि “पोषण इन प्रक्रियाओं का संयोजन है, जिनके द्वारा जीवित प्राणी अपनी क्रियाशीलता को बनाये रखने के लिए तथा अपने अंगों की वृद्धि एवम् उनके पुनर्निर्माण हेतु आवश्यक पदार्थों को प्राप्त करता है व उनका उपभोग करता है।” इस प्रकार हमारे शरीर को आहार एवं पोषण से ऊर्जा की प्राप्ति होती है।

भारत में प्रारंभिक सभ्यता के युग से अब तक आहार शास्त्र का विकास क्रमिक रूप से हुआ है। हमारे प्राचीन ग्रंथों जैसे- वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत एवं आयुर्वेद शास्त्र में भी आहार एवं पोषण का विस्तृत वर्णन मिलता है। प्रायः सभी धर्मों के ग्रंथों में आहार के महत्त्व को दर्शाया गया है।

वेदों में आहार को ‘पिता’ कहा गया है, क्योंकि यह पिता के समान पोषण, संरक्षण तथा स्नेह प्रदान करने वाला होता है। हमारे पूर्वजों की अवधारणा थी कि पारलौकिक कर्तव्यों को पूरा करने के लिए तथा लौकिक दायित्वों के निर्वहण के लिए स्वस्थ शरीर एवं सुन्दर विचार की नितान्त आवश्यकता है। जीवन के प्रति इसी दृष्टिकोण के कारण वे शुद्ध, सात्विक तथा पौष्टिक आहार के पक्षधर थे, क्योंकि स्वस्थ शरीर ही धर्म, नीति एवं कर्तव्य पालन से व्यक्ति श्रमादि में सक्षम हो सकता है।

प्राचीन काल में आहार व्यक्ति के प्रकृति एवं कार्यों के अनुरूप होते थे। ऋषि-मुनि जो तपस्या करते थे, मन-कर्म एवं वचन की सात्विकता को बनाये रखने के लिए तथा आत्मा की पवित्रता के लिए सात्विक भोजन करते थे, जो अन्न, फल, शाक-सब्जी, कंद, मूल, दूध, घी, मट्ठा, मधु तथा ईख रस पर आधारित था जो सुपाच्य होता था तथा पोषक तत्व ये युक्त होता था।

भगवद्गीता में स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि भगवान् श्रीकृष्ण ने आहार को तीन श्रेणियों में विभक्त किया है-

- (i) **सात्विक आहार** - यह आध्यात्मिक शक्ति प्रदान करने वाला अर्थात् सरल, सादा एवं सुपाच्य आहार है।

- ( ii ) राजसी आहार - यह भौतिक सुख देने वाला अर्थात् पौष्टिक एवं गरिष्ठ आहार है एवं  
 ( iii ) तामसी आहार - यह निम्न गुणों को उत्पन्न करने वाला (मिर्च, मसाले एवं तेल युक्त चटपटा आहार) है।

‘चरक’ तथा ‘सुश्रुत’ जैसे पौराणिक आर्यवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया था कि शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य आहार पर ही निर्भर होता है। उत्तम स्वस्थ जीवन के चारों पहलुओं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त करने के लिए स्वस्थ शरीर आवश्यक है।

वैदिक काल से ही कार्य के अनुसार विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थ ग्रहण किये जाते रहे हैं। समाज में प्रायः तीन प्रकार के कार्य करने वाले लोग निवास करते थे - (i) शारीरिक श्रम करने वाले श्रमिक वर्ग। (ii) सामान्य श्रम करने वाले गृहस्थ वर्ग तथा (iii) बुद्धिजीवी वर्ग। छात्रों को राजसी तथा तामसी भोजन से परहेज रखकर शक्ति तथा समय को विद्याध्ययन में लगाने का परामर्श दिया जाता था। छात्रों को भिक्षाटन से उपलब्ध आहार उन्हें नम्रता की शिक्षा देता था। प्राचीन ग्रंथों में छात्रों के लिए भोजन की मात्रा निर्धारित नहीं की गई है। कौटिल्य ने स्त्रियों तथा नौकरों के लिए भी आहार की मात्रा सुनिश्चित की थी, जैसे- स्त्रियों को पुरुषों के भोजन का 3/4 भाग रखना चाहिए। प्राचीन काल में नौकरों को अन्य लोगों की अपेक्षा कम खाने की सलाह दी जाती थी।

संस्कृत साहित्य के माध्यम से यह ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत का समय उन्नति और विकास का था। गुप्त काल तक आते-आते यह विकास मात्र अपनी पूर्णता के शीर्ष बिन्दु को स्पर्श कर गई थी। अनाजों की कई जातियाँ उपजाई जाने लगी थी। यद्यपि समाज के बहुत से लोग शाकाहारी हो गये थे परन्तु मांस व्यजन भी विविध विधियों द्वारा बनाया जाता था।

हमारा आहार, पोषण मानवीयता के गुणों से ओत-प्रोत रहा है। देश, काल और क्षेत्र के अनुसार भले ही कुछ पारंपरिकता हमारे ऊपर हावी रहे हों, किन्तु हम किसी न किसी रूप में प्रगतिशीलता की ओर बढ़ते रहे हैं। हमारे लिए यह गर्व की बात है कि मानवीय गुणों के विकास में भोज्य पदार्थ, आहार एवं पोषक तत्वों का ज्ञान हमें प्रारंभ से ही रहा है। इसके साधन स्रोत जहाँ प्राचीन साहित्य हैं वहीं परंपरा एवं किंवदंतियों में आज भी देखने को मिलते हैं। विदेशियों ने भी यहाँ के आहार, पोषक तत्वों की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। पाश्चात्य लोगों के लेख का सर्वेक्षण करने से ज्ञात होता है कि “प्राचीन भारतीय लोग विशेषकर बिहार के प्राचीन निवासी चिकित्सीय ज्ञान से परिपूर्ण थे और संतुलित आहार लेते थे जो औषधि सदृश काम करता था। प्राकृतिक दृष्टिकोण से क्षेत्रीय भिन्नताएँ थी, किन्तु उन सामग्रियों के आहार एवं पोषण में प्रचुरता होती थी जो सरल एवं सुलभ रूप से क्षेत्र में उपलब्ध हों। न जाने क्यों ऐसा लगता है कि भारत के प्राचीन कालीन आहार एवं पोषक तत्व आज भी प्रासंगिक हैं और उनकी निरंतरता दिखती है।

हाल ही में भारत में जो आहार सर्वेक्षण किए गए हैं, उनसे पता चलता है कि अधिकांश लोगों के भोजन का संगठन निम्न स्तर का है और वे कुपोषित हैं। उनके आहार में अनाज की मात्रा बहुत अधिक रहती है तथा दाल, तरकारियाँ, दूध, दही, फल आदि की मात्रा बहुत कम रहती है। उनके आगे पोषक तत्वों पर सोचना उतना जरूरी नहीं है, बनिस्पत की पेट भर लेना। उनके आहार में मंहगे, पौष्टिक भोज्य पदार्थ, मांस, मछली, अंडा नहीं के बराबर रहते हैं। ऐसी जनाबादी में कुपोषण का विकराल प्रभाव, बच्चों तथा गर्भवती और धात्री अवस्था की महिलाओं पर औरों की अपेक्षा और अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। शिशुओं और छोटे बच्चों में प्रोटीन-कैलोरी कुपोषण, विटामिनों, रिबोफ्लोबिन, आयरन आदि की कमी से होने वाले रोगों के केस बहुत सर्वेक्षणों में अधिक

देखने को मिले। गर्भवती स्त्रियों में और धनी महिलाओं में, आयरन और फोलिक एसिड की कमी से एनीमिया रोग के केस अधिक संख्या में पाए गए। हमारे देश का आहार उत्पादन उतना नहीं है, जितनी की संख्या बढ़ गई है। पशुजन्य प्रोटीन बहुल भोज्य पदार्थ बहुत कम हैं और अत्यधिक मंहगे भी हैं। निम्न आर्थिक वर्ग की जनता इन्हें खरीदने और उपभोग करने में असमर्थ है। वर्तमान जन-आबादी को पोषण सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त मात्रा में, उच्च पोषण स्तर का आहार उपलब्ध नहीं है।

हम सभी जानते हैं और स्वीकार भी करते हैं, साथ ही यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि जनसमुदाय के पोषण स्तर में सुधार लाने के लिए, धन की जरूरत है। जब तक कि लोगों का आर्थिक और सामाजिक स्तर ऊँचा नहीं किया जा सकेगा, तब तक यह सोचना व्यर्थ है कि लोग पौष्टिक भोजन के प्रति जागरूक रहें और पौष्टिक और संतुलित भोजन ही ग्रहण करें। प्रायः देखा जाता है कि गरीब जनता को जो कुछ भोजन स्थानीय रूप से पैदावार में मिलता है, उसी से पेट भरती है। जो कुछ पास में, सस्ता और सहज ढंग से मिलता है, उसी से पूरे परिवार का पेट भरा जाता है। आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण, वे कुछ अधिक मूल्य लगाकर या कुछ दूरी से लाकर अपने परिवार को पौष्टिक आहार नहीं दे पाते हैं। शिक्षा की कमी भी इसका एक कारण है और वे जानते भी नहीं हैं कि पौष्टिक भोजन का क्या महत्व है। अज्ञानता सामान्य जनता का पोषक स्तर ऊँचा उठाने में आड़े आती है, क्योंकि यह भी संभव है कि स्थानीय रूप से उपलब्ध सस्ते खाद्य पदार्थों में भी, पौष्टिक व्यंजन बनाये जा सकने के बारे में वे जानते ही नहीं हैं। उदाहरण के लिए यदि पोषण सम्बन्धी जानकारी होती हो, तो आर्थिक रूप से कमजोर महिलाएं, यह बहाना कभी नहीं बना सकती हैं कि उनके पास पैसे ही नहीं हैं कि वे अपने बच्चों को ताकत की चीजें खिला सकें। जबकि वे मामूली सी हरी पत्ती वाली तरकारियों के द्वारा पालक के थोड़े से रस से, सस्ते फलों से ही बच्चों की पोषण सम्बन्धी जरूरतों को पूरा कर सकती हैं। उन्हें रोगों से बचा सकती हैं और ताकतवर बना सकती हैं। इसी बात से यह स्पष्ट है कि पोषण सम्बन्धी शिक्षा का प्रयास किया जाये, जिससे जन सामान्य उसके महत्व को समझे और फिर उसके नियमों को अपनी जीवन शैली में अपनाए।

### संदर्भ-सूची

1. पोषण एवं आहार विज्ञान - डॉ० जी. पी. शैरी
2. आहार विज्ञान - प्रो० (श्रीमती) सुधा नारायणम्
3. बाल विकास परियोजना पदाधिकारी- बिहार लोक सेवा आयोग, पटना।
4. आहार एवं पोषण विज्ञान - डॉ० प्रमिला वर्मा एवं डॉ० कांति पांडेय
5. आहार एवं पोषण विज्ञान - डषा टण्डन

# सूचना का अधिकार से समाज की उन्नति

संजीव कुमार सिंह

शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय  
व्याख्याता, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग  
मौलाना मजरहूल हक अरबी एवं फारसी विश्वविद्यालय, पटना

सूचना का अधिकार नागरिकों के हाथों में एक सशक्त हथियार है, कार्यपालिका के पास “शासकीय गोपनीयता कानून (Official Secret Act) है, तो विधायिका के पास संसदीय विशेषाधिकार (Parliament Privileges) है। न्यायपालिका के पास न्यायालय की अवमानना (Contempt of Court) सम्बन्धी कानून है तो नागरिकों के पास भी एक अचूक हथियार-सूचना का अधिकार (Right of Information) आ गया है। यदि इसका विवेकपूर्ण तथा कुशलता के साथ उपयोग किया जाए तो इससे न केवल देश की व्यवस्था में सकारात्मक विकास आएगा, बल्कि यह लोकतंत्र के विकास में भी मील का पत्थर साबित होगा। सूचना का अधिकार एक मूल मानव अधिकार है। यह सभ्य समाज में व्यक्ति के गौरव को बनाये रखने का साधन है। सूचना की जानकारी से कोई भी व्यक्ति, समाज एवं देश के विकास, लक्ष्यों को प्राप्त करने में अपना योगदान दे सकता है। सूचना का अधिकार भ्रष्टाचार पर नियंत्रक के समान कार्य करता है। भ्रष्टाचार के अध्ययन हेतु प्रतिष्ठित संस्था “ट्रान्सपेरेन्सी इंटरनेशनल” के द्वारा प्रकट आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि भारत के विकास को अवरूद्ध करने वाला, निर्धन की रोटी को छीनने वाला, कारक भ्रष्टाचार ही है, किन्तु भ्रष्टाचार के भस्मासुरी दैत्य से मुक्ति पाने हेतु सूचना का अधिकार एक सशक्त हथियार है।

सूचना का अधिकार अधिनियम का व्यापक क्षेत्र है। बिहार में इस कानून को नक्सली गतिविधियों तथा भ्रष्टाचार, अपराध से भी जोड़कर देखा जाना चाहिए। जहाँ आम गरीबों के कल्याण तथा विकास के नाम पर आवंटित राशि में भारी लूट-खसोट है, वहाँ सूचना का अधिकार मिलने से प्रशासन में पारदर्शिता बढ़ेगी और स्वाभाविक है कि लूट तथा कमीशन की राशि विकास कार्यों में व्यय होगी और परिणामस्वरूप रोजी-रोजगार में बढ़ोत्तरी होगी तथा इससे हिंसा तथा अपराध में कमी होगी। सेवा क्षेत्र में भी सुधार की मांग बढ़ रही है। शिक्षा, स्वास्थ्य, ऊर्जा संबंधी क्षेत्रों पर भी इस अधिकार का असर हो रहा है। उपलब्ध साधन का उचित इस्तेमाल हो रहा है और जन-जागृति बढ़ने से उचित मात्रा में विकास हो रहा है। यह औद्योगिक विकास तथा पूंजी निवेश के वातावरण का निर्माण करेगा। गरीबों, दलितों, किसान मजदूरों को भी अपने विभिन्न योजनाओं के आवंटन लक्ष्य तथा हिस्सेदारी की जानकारी नहीं रहती है और स्थानीय अधिकारी इन कार्यों के सम्पादन में भारी अनियमितता बरतते हैं तथा आमजनों का शोषण करते हैं। वे प्रायः जनता को वास्तविक स्थिति की जानकारी नहीं देते हैं। इस कानून के लागू होने से इस गोपनीयता का रहस्य खुल रहा है तथा गरीबों का शोषण अब कम हो रहा है। राजनीतियों की मनमानी पर भी लगाम लग रहा है क्योंकि निजी

स्वार्थ तथा भाई-भतीजावाद के हित में योजनाओं के चयन तथा राशि आवंटन का पर्दाफाश हो रहा है जिससे मजबूरन उन्हें जनहित में विकास योजनाओं का चयन करना पड़ रहा है।

आज गाँव विकास की ओर अग्रसर है और ग्रामीणों में जागरूकता बढ़ी है। विकास दरों को हम मुख्य रूप से उत्पादन क्षमता, विज्ञान, तकनीकी क्षमता, आपूर्ति क्षमता, परिवहन, दूरसंचार एवं मीडिया के संदर्भ में देख सकते हैं। सूचना का अधिकार इन क्षेत्रों में उत्प्रेरक का कार्य कर रहा है। सूचना का अधिकार ऐसे विकास के लिए कार्य करता है जो सहभागिता और विकेन्द्रीकरण पर आधारित है, यह सहभागिता और विकेन्द्रीकरण नियोजन नीतियों के निर्माण में भी सहायक सिद्ध हो रहा है, इसे जिस क्षेत्र में भी अपनाया गया है, वह क्षेत्र लगातार उन्नति कर रहा है। चाहे वह शिक्षा का क्षेत्र हो या व्यापार का, ग्रामीण विकास, रोजगार एवं निर्माण का, प्रत्येक क्षेत्र में इसकी प्रासंगिकता बढ़ी है। सामाजिक विकास के निचले पायदान पर बैठे सामान्य लोगों में अधिकांश का मानना है कि यह अधिकार एक साधन है जिससे न केवल व्यक्तिगत बल्कि समाज और राष्ट्र की उन्नति के लिए महत्वपूर्ण है।

“आप सभी लोगों को कुछ समय के लिए मूर्ख बना सकते हैं और कुछ लोगों को हमेशा के लिए मूर्ख बना सकते हैं, लेकिन आप सभी लोगों को हमेशा के लिए मूर्ख नहीं बना सकते।” यह कथन है अमेरिका के सोलहवें राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन का, जिन्होंने लोकतंत्र के लिए दुनिया को नयी परिभाषा दी, इसी तरह सूचना का अधिकार आज से लगभग 247 वर्ष पहले स्वीडन (1766) की सरकार ने संविधान एवं कानून के जरिये अपने नागरिकों को सूचना की स्वतंत्रता प्रदान की थी। भारत भी 12 अक्टूबर 2005 को यह अधिनियम लागू किया, जो कहीं न कहीं सम्पूर्ण आम जनता को सत्ता की व्यवस्था में प्रत्यक्ष भागीदारी से संबंधित है, जिससे विकास के नये द्वार खुले हैं और अभी खुलने बाँकी हैं। सूचना का अधिकार जनसहभागिता (People's Participation) का अभिकरण है। इस अधिकार के कारण सार्वजनिक मामलों में आम लोगों की भागीदारी बढ़ जाती है और वह अपने लोकतांत्रिक अधिकारों का प्रयोग सही ढंग से कर सकते हैं। जानकारी या सूचना का हक प्राप्त करने से जो लोकतंत्र केवल प्रतिनिधि के चुनाव तक सीमित था, आज वहाँ लोगों की प्रत्यक्ष भागीदारी एवं हिस्सेदारी की बात की जा रही है। सूचना का अधिकार गोपनीयता के विरुद्ध पारदर्शिता की वकालत तो करता ही है, इसके साथ-साथ यह नीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन में जनसहभागिता को प्रोत्साहित भी करता है। जनता के लिए जनता द्वारा चुनी गई सरकार संचालित एवं नियंत्रित करने के लिए यह एक कारगर हथियार भी है क्योंकि उदारीकरण (Liberalisation), निजीकरण (Privatisation) और वैश्वीकरण (Globalization) की नीतियों तथा आर्थिक नीतियों में हो रहे बदलाव के कारण आज आम जनता प्रभावित हो रही है। ऐसे में सूचना का अधिकार वर्तमान स्थिति में अनिवार्य तथ्य बन जाता है।

विकास चक्र में समन्वय की आवश्यकता है। अपने देश में विकास की एक आवश्यक शर्त है- ग्रामीण विकास। आर्थिक, औद्योगिक प्रगति उन्नति को ही विकास मान लेना पर्याप्त नहीं है।” इन्वर्ट के अनुसार “विकास का वास्तविक अर्थ तकनीकी या राष्ट्रीय उत्पादकता में वृद्धि नहीं है, बल्कि ज्ञान एवं चेतना के उस विकास से है, जिसके द्वारा वह सहभागी बनता है। विकास मानव की भौतिक आवश्यकताओं से ही नहीं, वरन् उसके जीवन की सामाजिक दशाओं की उन्नति से भी सम्बन्धित होता है। सूचना का अधिकार इन्हीं तथ्यों का प्रतिनिधित्व करता है जिससे विकास सम्पूर्ण समाज को अपने समाहित करता है तथा वह टिकाऊ भी होता है। गाँवों में सही सूचना का नितांत अभाव है। आज रोटी से भी अधिक गरीबी सूचना की है। वर्तमान में लागू सूचना का अधिकार कानून परिवर्तन

का आधार है। सामाजिक एवं आर्थिक शोषण को रोकना आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति में यह भावना भरने के लिए कि यह उसका अपना देश है, तथा इसके विकास के लिए उसे न केवल प्रयत्न करना है बल्कि यह भी जानना है कि सरकार क्या कर रही है। अभी तक जनता केवल वोट डालकर लोकतंत्र के यज्ञ में मूकदर्शक बना हुआ था मगर सूचना के अधिकार के बदैलत लगातार शासन के साथ संबंधित रहता है जिससे विकास के नये द्वार खुल रहे हैं और गाँवों में भी विकास जमीन पर दिख रहा है। विकास-कार्यों की सूचना देकर सूचना का अधिकार जन-जन में जिज्ञासा उत्पन्न करता है कि किस कार्य में कितनी प्रगति या अधोगति हुई है। इस अधिकार से शासन की उपलब्धियों, एवं दायित्व का दायरा बढ़ा है, जो इसके कई लक्ष्यों को प्रकट करता है वह निम्नलिखित है -

1. सभी पक्षों के विकास की सूचना देना
2. विकास के दौरान बाधक तत्त्वों को प्रकाशित करना
3. विकास के प्रति जन-जन में अभिरुचि जागृत करना
4. बाधक तत्त्वों को सजा दिलाना

शासन की उपलब्धियों को गिनाने वाली धारणा पूर्णतः अब बदल चुकी है, विकास के प्रति जन-जन में अभिरुचि जागृत करना, विकास की पूरी जानकारी देना, त्रुटियों को मुखरित करना, विकास के दौरान आने वाली कठिनाइयों को प्रकाशित करना और उनके समाधान को सुझाने की रचनात्मक प्रक्रिया ही सूचना का अधिकार है जो राष्ट्र हित की एक अनिवार्यता है।

सूचना का अधिकार अधिनियम पारदर्शी सुशासन की प्रक्रिया की शुरुआत कर रहा है और धीरे-धीरे भारतीय लोकतंत्र को प्रतिनिधिपरक की जगह पूरी तरह से सहभागी शासन में बदल सकता है। आज के समय में पारदर्शिता और जवाबदेही फ़ैशनेबल शब्द है जिन्हें पक्ष-प्रतिपक्ष दोनों इस्तेमाल करते हैं। लेकिन भ्रष्टाचार विरोधी तथा पारदर्शिता की बहस में यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि प्रश्नकर्ता ही उत्तर के मानदंड तय करता है। जब सभी पक्ष के लोगों की भाषा एक-सी होगी तभी कार्यवाही सही निष्कर्ष पर पहुँचेगी। इसीलिये सूचना का अधिकार अभियान को गरीबों और वंचितों की जन कार्यवाही पर जोर डालते रहना होगा ताकि पारदर्शिता और जवाबदेही की बहस में उसके अस्तित्व बेबुनियादी सवाल को न दबा दिया जाए। सूचना का अधिकार आंदोलन से लोगों में सहभागी जनतंत्र के लिए जरूरी संस्कृति, संस्थान और सिद्धान्त निर्मित करने के लिए प्रयत्न करने की उम्मीद जगी है। सूचना का अधिकार अंततः सत्ता में समान भागीदारी की मांग है। साथ ही, यह किसी के भी द्वारा सत्ता के निरंकुश इस्तेमाल पर रोक भी लगाता है। जनतांत्रिक व्यवस्था में इसकी वैधता से सशक्तीकरण और परिवर्तन के लिए संघर्ष को व्यापक करने की संभावना बनती है। अधिकार के प्रयोक्ता को भी जवाबदेह बनाने की इसकी क्षमता से उक्त वैधता और सशक्त होती है। एक अभियान के रूप में यह मुद्दा सैद्धांतिक, नैतिक तथा व्यावहारिक दृष्टि से जैसे-जैसे बढ़ता जायगा, वैसे-वैसे इसकी नयी परतें खुलेंगी और नये सवाल खड़े हो जायेंगे। इसके प्रयोग से नये संभावनाएं उत्पन्न हो रही हैं। आने वाले दिनों में इसका रचनात्मक उपयोग कर दायरा व्यापक करते रहना ही अभियान की सबसे बड़ी चुनौती होगी। इससे समाज के उन्नति के मार्ग का विकास होगा। समाज शक्तिशाली होगा और फिर से भारत की पहचान दुनिया में विश्वगुरु का होगा।

आज सूचना का अधिकार मानव जीवन का अहम हिस्सा बन चुका है जिसके सहारे हम किसी भी प्रकार के सार्थक एवं सटीक विकास की कल्पना कर सकते। आज कृषि स्वास्थ्य, शिक्षा, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, प्रशासन, सुरक्षा, यातायात, शहरी और ग्रामीण विकास इत्यादि क्षेत्र के विकास

और उन्नयन में सूचना के अधिकार की अहम भूमिका है। सूचना के अधिकार के उपयोग का विश्लेषण यह दर्शाता है कि जहाँ से लोकतांत्रिक नेतृत्व का उदय हो रहा है वहाँ भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति पर भी रोक लगना जरूरी है। सूचना के अधिकार के उपयोग से एक ओर जहाँ कार्यप्रणाली में पारदर्शिता आ रही है उससे भ्रष्टाचार पर रोक लग रही है, वहीं दूसरी ओर महत्वपूर्ण सूचनाओं तक पहुँचना आसान हो रहा है। पंचायती राज संस्थाओं द्वारा किये जा रहे जनकल्याण के कार्यों और इससे संबंधित सूचना समाज को नयी दिशा प्रदान कर रहा है, समाज स्वावलंबी एवं स्वाभिमानी बनकर फिर से नये उत्थान की कहानी लिख रहा है। पश्चिम से भी सीखने की आवश्यकता है। सार्वजनिक जीवन में उनकी कर्तव्यवृद्धि की शुचिता का हमें अनुसरण करना चाहिये, जिससे समाज के अंतिम व्यक्ति का लगाव देश और शासन से हो सके। प्राचीन परंपराओं के गौरव को ध्यान में रखकर हम भारतवासी नये युग का नया गीत –(सूचना का अधिकार) गायेंगे।

सूचना का अधिकार अधिनियम वास्तव में एक ऐतिहासिक विधान है। यह वंचित एवं आम लोगों के लिए बना कानून है जो सरकारी अधिकारियों से सूचना प्राप्त करने के लिए नागरिकों को वैधानिक अधिकार प्रदान करता है। इस अधिनियम के आने से शासन एक नये युग में प्रवेश करता है जिससे न केवल पारदर्शिता और उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है बल्कि समाज आर्थिक प्रगति के पथ पर भी अग्रसर होता है। सूचना का अधिकार सत्ता में समान भागीदारी की मांग है। साथ ही यह किसी के भी द्वारा सत्ता के निरंकुश इस्तेमाल पर अंकुश भी लगाता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में इसकी वैधता से सशक्तीकरण, उन्नति और परिवर्तन के लिए संघर्ष को अपने क्षितिज और व्यापक करने का अवसर मिलता है।

## संदर्भ-सूची

1. भारत सरकार - सूचना का अधिकार अधिनियम
2. बिहार सरकार - सूचना का अधिकार अधिनियम
3. हिन्दुस्तान
4. प्रभात खबर
5. आज
6. दैनिक जागरण
7. प्रतियोगिता दर्पण
8. योजना

# वर्तमान भारतीय राजनीतिक परिदृश्य

बिपिन दूबे

शोधार्थी, राजनीतिशास्त्र विभाग,  
पं० दीनदयाल उपाध्याय इन्टर महाविद्यालय, खजुरिया, बरौली (गोपालगंज)

स्वतंत्रता के बाद आज भारत आधी शताब्दी का सफर तय कर 21वीं सदी की चौखट पार कर चुका है। आज देश एक जीवन्त, उन्नति की ओर निरन्तर अग्रसर राष्ट्र के रूप में प्रतिमान है। तमाम अन्तर्विरोधों, तनावों, अवरोधों एवं विविधताओं के बावजूद भारत का लोकतंत्रिक ढाँचा अविचल रहा। यद्यपि पिछले पाँच दशकों के कालखण्ड में भारत की राजनीतिक व्यवस्था के समक्ष अनेक संकट उत्पन्न हुए हैं। इन संकटों की पृष्ठभूमि में यदा-कदा भारतीय राजनीतिक व्यवस्था की पुनर्रचना एवं अनवेषण की माँग के स्वर उठते हैं। पिछले एक दशक में समसामयिक भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के क्षितिज पर उभरे नवीन यक्ष प्रश्नों के सन्दर्भ में राजनीतिक संस्थाओं को प्राणवान बनाने की आवश्यकता अनुभूत की जा रही है।

भारत एवं भारतवासियों को स्वयं तय करना होगा कि उनकी शासनिक संस्थाओं एवं राजनीति का गन्तव्य क्या हो? भविष्य क्या हो? भारतीय स्वयं अपने शासन एवं राजनीति की चुनौतियों का निराकरण कर सकते हैं। अन्धकार से प्रकाश की ओर गतिमान होने का जज्बा भारतवासियों में मौजूद है। राजनीतिक प्रक्रिया का घनिष्ठ सम्बन्ध राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप से रहा है। राजनीति की प्रक्रिया का सम्बन्ध अनेक वर्गों और संगठनों से रहता है- राजनीतिक दल, दबाव, समूह, हित समूह, चुनाव तन्त्र, लोकपाल की अभिव्यक्ति के साधन, साम्प्रदायिक और गैर-साम्प्रदायिक गुटों, बुद्धिजीवियों, नौकरशाही और अभिजात्यवर्ग आदि-आदि से। ये ही वर्ग और संगठन देश-विशेष की राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप को निर्धारित करते हैं। राजनीतिक प्रक्रिया का सामाजिक ढाँचे और मूल्यों को बदलने में बड़ा हाथ होता है और राजनीतिक व्यवस्था जनता को राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने को प्रेरित करती है।

भारत में लोकतन्त्रीय राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत एक प्राचीन और बड़े विविधतापूर्ण समाज का आधुनिकीकरण किया जा रहा है। भारत में समाज के विखण्डित ढाँचों में राजनीतिक संस्थाओं, मूल्यों और विचारों का प्रवेश हो रहा है। भारत जैसी अराजनीतिक समाज व्यवस्था में राजनीतिक केन्द्र की स्थापना हो रही है।

संसद भारतीय लोकतंत्र का मंदिर ही नहीं, चरम शासन सत्ता की गंगोत्री भी है। संसद की गुणवत्ता पर प्रशासन की कार्यक्षमता निर्भर है और अंततः वह राष्ट्रीय जीवन की नियामक है। इसलिए संसद के बारे में, उसके इतिहास कार्यप्रणाली और प्रभाव के बारे में, अधिक से अधिक जानकारी का प्रसार राष्ट्रीय महत्त्व का अनुष्ठान है। यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण शैक्षिक कार्य है, जिसकी ओर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए था, नहीं दिया गया है।

भारत में संसदीय शासन प्रणाली की स्थापना का श्रेय अँग्रेज शासन को दिया जाता है। इसमें कोई संदेह भी नहीं कि भारत वर्तमान संसदीय शासन प्रणाली, उसकी परम्पराओं और संस्थाओं के लिए,

काफी हद तक इंग्लैण्ड का ऋणी है। लेकिन सच्चाई यह है कि संसदीय शासन के मूल तत्व भारतीय संस्कृति में निहित हैं। लोकतंत्र भारतीयों के लिए कोई नितान्त नवीन संकल्प नहीं है। इस बात के पर्याप्त ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध हैं कि गणतंत्रात्मक शासन-प्रणालियों और लोकतंत्र पर आधारित प्रतिनिधिक संस्थाएँ वैदिक युग (3000-1000 ई.पू.) से ही भारत की धरती पर फलती-फूलती और अपना सौरभ बिखेरती रही हैं।

यह ठीक है कि मुस्लिम आक्रमण से पहले भारत के राजतंत्र को पवित्र माना जाता था किन्तु, राजा की शक्ति निरंकुश, निरपेक्ष और स्वेच्छाचारी नहीं थी। उसे अपनी मर्यादाओं के भीतर रहकर काम करना पड़ता था। मनु और वेदव्यास जैसे प्रतिष्ठित शास्त्रकारों ने कुछ चरम स्थितियों में प्रजा को विद्रोह करने का या राजा की हत्या करने तक का अधिकार दिया है।

भारत की एक विशिष्ट लोकतंत्रात्मक संस्था पंचायत प्रणाली है जो किसी न किसी रूप में प्रायः समूचे भारत में लगातार बनी रही है। पंचायत-प्रणाली 'राज्य के भीतर कर पद्धति' प्रकट करती थी। जिस समय सारे देश विदेशी सेनाओं के आक्रमणों से आक्रांत था तथा राज्यों के भाग्य पल-पल में बन-बिगड़ रहे थे, उस समय भी पंचायतों ने लोगों तथा उनकी संस्कृति की रक्षा की। कुछ विदेशी लेखकों ने इन संस्थाओं को 'लघु गणराज्य' कहा है। ये संस्थायें अँग्रेजी शासन के आगमन तक और उसके बाद भी जीवित रहीं।

संसद भारतीय राजनीति की धुरी है। वह राष्ट्रपति और दो सदनों- राज्यसभा और लोकसभा से मिलकर बनती है। संसद में प्रभुसत्ता का समावेश एवं सार है। वह राष्ट्र की आवाज है और उसका दर्पण है। संविधान की उद्देशिका में यह पूरी तरह स्पष्ट किया गया है कि संपूर्ण शक्ति का अंतिम स्रोत भारत के लोग हैं। संसद जिन शक्तियों का प्रयोग करती है, जनता की ओर से करती है।

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में संसद की कुछ मौलिक भूमिकाएँ हैं। मंत्रिपरिषद् संसद के निम्न सदन अर्थात् लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है। संसद प्रशासन पर निगरानी रखती है। उससे किसी भी विषय पर जानकारी प्राप्त कर सकती है। वह जनता की शिकायतें व्यक्त करती है और उन शिकायतों के निवारण का प्रयत्न करती है। संसद संघर्षों का समाधान करती है, कानून बनाती है राष्ट्रीय एकता सुनिश्चित करती है तथा राष्ट्र को सामाजिक और आर्थिक उत्थान की राह दिखाती है।

भारतीय संविधान ने राज्यसभा और लोकसभा को समान शक्तियाँ दी हैं। राज्यसभा राज्यों की परिषद् है। उसके सदस्य विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्यों द्वारा आनुपातिक पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा चुने जाते हैं। संघ के विभिन्न राज्यों को राज्यसभा में समान प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है। भारत में प्रत्येक राज्यों की संख्या उसकी जनसंख्या पर निर्भर है। लोकसभा की निर्धारित कार्यावधि पाँच वर्ष है लेकिन राज्य सभा एक स्थाई निकाय है। उसके प्रत्येक सदस्य का कार्यकाल छः वर्ष है और उसके सदस्यों में से यथासंभव एक तिहाई सदस्य प्रत्येक दूसरे वर्ष की समाप्ति पर निवृत्त हो जाते हैं।

लोकसभा की तुलना में राज्यसभा की शक्तियों पर निम्नलिखित सीमाएँ हैं:-

1. कोई धन विधेयक राज्यसभा में पास नहीं किया जा सकता।
2. राज्यसभा किसी धनविधेयक को अस्वीकृत करने अथवा उसमें संशोधन करने की सिफारिश ही कर सकती है। यदि ऐसा विधेयक चौदह दिनों के भीतर लोकसभा को वापिस नहीं किया जाता तो उसे निर्वाचित अवधि के समाप्त हो जाने पर लोकसभा द्वारा पास किये गये रूप में दोनों सदनों द्वारा पास किया गया माना जाता है।

3. कोई विधेयक धन विधेयक है अथवा नहीं, इसका निर्णय लोकसभा के अध्यक्ष करते हैं।
4. राज्यसभा वार्षिक वित्त विवरण (बजट) पर विचार कर सकती है। उसे अनुदान माँगो को अस्वीकृत करने की शक्ति प्राप्त नहीं है।
5. मंत्रिपरिषद् लोकसभा के प्रति उत्तरदायी होती है, राज्यसभा के प्रति नहीं। अतः मंत्रिपरिषद् में अविश्वास प्रस्ताव राज्यसभा में नहीं आ सकता।

गत 54 वर्षों के कार्यकाल के दौरान भारत में संसदीय शासन की शक्तियाँ और सीमाएँ स्पष्ट हो गई हैं। भारत में संसदीय शासन की सबसे बड़ी कमजोरी है द्विदल पद्धति का अभाव। पिछले कुछ सालों से किसी एक राजनीतिक दल को अपने बल पर पूर्ण बहुमत नहीं मिल रहा है। मिली-जुली सरकारें बन रही हैं लेकिन उनके निर्माण का आधार कोई सिद्धान्त नहीं बल्कि व्यक्तिगत और दलगत स्वार्थ है। ऐसी सरकारें न तो स्थिर हो सकती हैं और न देश को सुदृढ़ शासन दे सकती हैं। उनका अधिकांश समय अपने अंतर्विरोधों को दूर करने में और सत्ता में बने रहने के संघर्ष में ही लग जाता है। वे राष्ट्र के नवनिर्माण की ओर कम ही ध्यान दे पाती हैं।

संसदीय शासन के उत्कर्ष में एक बड़ी बाधा संसदीय संस्कृति का अभाव है। विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच एक-दूसरे के प्रति आदर भाव और शासन के बुनियादी मुद्दों पर आम सहमति संसदीय संस्कृति का प्राण है। भारत में इसका अभाव दिख रहा है। भारत में राजनीतिक व्यवस्था का स्वरूप जड़ अथवा गतिहीन नहीं है। इसमें नित नवीन आयाम जुड़ते रहे हैं। भारतीय संविधान के शिल्पकारों द्वारा संविधान के उद्देश्य प्रस्ताव एवं प्रस्तावना में भारतीय राजव्यवस्था के स्वरूप का निर्धारण किया गया था।

भारत की राजनीति के स्वरूप निर्धारण में अनेक तत्त्वों का योगदान रहा है। भारतीय समाज के राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक तत्त्वों ने 'राजनीतिक व्यवस्था' के स्वरूप का निर्धारण किया है। एक ओर भारत के संविधान एवं संविधान की प्रस्तावना में उल्लेखित शाश्वत मूल्य हैं, वहीं दूसरी ओर समाज का राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिवेश एवं तत्त्व राजनीतिक व्यवस्था के नियामक रहे हैं। भारतीय शासन की नीतियाँ, स्वतंत्र भारत की सरकारों के निर्णय, जनप्रतिनिधि का आचरण, संघीय व्यवस्था का ढाँचा एवं राष्ट्र का एकीकृत स्वरूप, राष्ट्र की समृद्धि तथा विकास एवं मतदान व्यवहार इन्हीं तत्त्वों से प्रभावित रहा है।

भारत के संविधान ने संसदीय एवं संघात्मक शासन पद्धतियों को अपनाते हुए शासनिक ढाँचे का स्वरूप निर्धारित किया है। शासन के लोककल्याणकारी स्वरूप का निर्धारण कर सरकार की शक्ति का स्रोत जनता को माना है। जनता को वयस्क मताधिकार देकर उन्हें शासन कार्यों में सक्रिय सहभागी बनाया गया है। देश की राजनीति के स्वरूप निर्धारण में राजनीतिक दल सामाजिक तत्त्वों में- क्षेत्रीयतावाद, जातिवाद, सम्प्रदायिकता तथा भाषावाद के मुद्दे तथा आर्थिक तत्त्वों में निर्धनता एवं वर्गवाद के मुद्दे शामिल हैं।

## जाति एवं राजनीति

स्वतंत्रता संग्राम में सभी जातियों एवं सम्प्रदायों के लोगों ने जब समान रूप से योगदान दिया, तब ऐसा लगता था कि स्वतंत्रता के पश्चात् जाति व्यवस्था तथा इसकी सबसे बड़ी कुरीति जातिवाद का प्रभाव कम हो जायेगा। परन्तु ऐसा नहीं हुआ तथा स्वतंत्रता के पश्चात् जातिवाद ने फिर से जोर पकड़ा और जातिवाद राजनीति शक्ति के रूप में उभरने लगा। अतः भारत में जाति एवं राजनीति में

परस्पर अन्तःक्रिया के अध्ययनों में समाज-वैज्ञानिकों द्वारा रुचि लेना स्वाभाविक ही था। वास्तव में, यह विषय सर्वाधिक वाद-विवाद का विषय रहा है तथा विभिन्न अध्ययनों से हमें पता चलता है कि भारत में जाति एवं राजनीति परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं, यद्यपि इनके महत्व में स्थान विशेष के अनुसार भेद हो सकता है।

प्रथमतः जब एन० एम० श्रीनिवास ने अनेक राज्यों के अध्ययन के आधार पर भारतीय राजनीति में जाति की महत्वपूर्ण भूमिका की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया तो अधिकांश लोगों को यह बड़ा अनोखा लगा था तथा तब इनके विचारों को अधिक समर्थन प्राप्त नहीं हो पाया था। लोगों ने यह आशंका प्रस्तुत की थी कि श्रीनिवास ने राजनीति में जाति की महत्ता को बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किया है। परन्तु शीघ्र ही 1957 के द्वितीय आम चुनावों पर किये गये अध्ययनों से श्रीनिवास के विचारों की पुष्टि हो गई। तब से लेकर आजतक जाति एवं राजनीति में अन्तःसम्बन्ध समझने के लिए अनेक अध्ययन किये गये हैं।

भारत में जाति व राजनीति के परस्पर सम्बन्धों का अध्ययन करने वाले विद्वानों में एम०एन० श्रीनिवास, ए०सी० मेयर, रजनी कोठारी, आन्द्रे बेतेई, एडमर्ड लीच, कैथलीन गॉफ, एफ० जी० बेली, एल० आई० रुडोल्फ, एच० ए० गोल्ड, टी० के० ओमन, योगेश अटल, एम० एस० राव, हेरॉल्ड आईजेक आदि प्रमुख हैं। चुनाव संबन्धी अध्ययनों में भी जाति को एक महत्वपूर्ण चरण माना जाता है।

कुछ विद्वानों ने राजनीति में जातीय समितियों की भूमिका का भी अध्ययन किया है। सभी जानते हैं कि आज अनेक जातीय समूहों ने जातीय समितियों के रूप में अपने-आपको और संगठित कर लिया है। इन समितियों का उद्देश्य अपने सदस्यों के लिए सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक कार्यों का निष्पादन है। इनमें से कुछ समितियाँ प्रभावी समूहों का भी कार्य करने लगी हैं। रुडोल्फ तथा रुडोल्फ कोठारी तथा मारु भट्ट आदि विद्वानों ने अपने अध्ययनों के आधार पर राजनीति में जातीय समितियों की महत्वपूर्ण भूमिका की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

## वर्ग एवं राजनीति

कार्ल मार्क्स ने आर्थिक समानता के अतिरिक्त सदस्यों को अपने वर्ग के प्रति चेतना को वर्ग का एक प्रमुख आधार बताया है। मार्क्स के अनुसार 'सामाजिक वर्ग ऐतिहासिक परिवर्तन की ईकाइयों तथा आर्थिक व्यवस्था द्वारा समाज में निर्मित श्रेणियाँ दोनों ही हैं। मिलब्राथ के अनुसार उच्च वर्ग के लोगों में निम्न वर्ग के लोगों की अपेक्षा अधिक राजनीतिक सहभागिता पायी जाती है। अमेरिका ब्रिटेन, नार्वे, डेनमार्क तथा स्वीडन में हुए अध्ययनों से हमें पता चलता है कि कृषक नगरीय लोगों की अपेक्षा राजनीति में कम सक्रिय हैं।

भारत में वर्गों पर अधिक अध्ययन नहीं हुए हैं तथा वर्गों का अस्तित्व एवं उनमें परस्पर सम्बन्ध आज भी वाद-विवाद का विषय है। आन्द्रे बेतेई के अनुसार यद्यपि सामाजिक वैज्ञानिकों ने भारतीय गाँव में जाति को समझने के लिए हमारे ज्ञान में काफी वृद्धि की है, फिर भी इन समुदायों में वर्ग सम्बन्धों के अध्ययन में वे अधिक संकोचशील रहे हैं। वर्ग की ओर कृषि अर्थशास्त्रियों ने ध्यान केन्द्रित किया है तथा उन्होंने जाति को ऐतिहासिक विषय के रूप में देखने का प्रयास किया है। वर्ग की ओर अधिक ध्यान न दिये जाने का एक अन्य कारण भारत में जाति एवं वर्ग का परस्पर सम्पाती (Coincide) होना है। योगेन्द्र सिंह के अनुसार भारत में जाति तथा वर्ग परस्पर जुड़े हुए रहे हैं क्योंकि उच्च जातियों के लोग, जिनका सामाजिक स्तर ऊँचा है, उच्च वर्ग के भी रहे हैं, जो आर्थिक

दृष्टि से भी सम्पन्न थे। प्रत्येक गाँव में एक प्रबल जाति पायी जाती है जिसका सामाजिक स्तर तो उँचा है ही, परन्तु अधिकांश भूमि का स्वामित्व भी उसी के पास होने के कारण वह आर्थिक दृष्टि से भी उच्च है। जाति व्यवस्था भारतीय समाज में इतनी सुदृढ़ रही है कि इसने वर्ग-व्यवस्था को अपने नीचे दबाये रखा है और इसे उभरने नहीं दिया।

बॉयोमोर के अनुसार भारत में वर्तमान समय में सभी राजनीतिक दलों के सदस्य मुख्यतः मध्यवर्ग नगरीय व युवक वर्ग से सम्बन्धित हैं। बम्बई में प्रजा समाजवादी दल के एक सर्वेक्षण (1953) से ज्ञात होता है कि उसके 469 सक्रिय सदस्यों में 136 औद्योगिक श्रमिक थे तथा अन्य सभी मध्यवर्ग के थे। ए० एच० सोमजी (1959) ने गुजरात के एक गाँव का अध्ययन करके हमें यह बताया है कि जाति अथवा धर्म में से किसी का भी मतदाताओं की स्वतन्त्र इच्छा पर प्रभाव नहीं पड़ता। मतदाताओं में रुचि का एक मुख्य तत्व आर्थिक हित था क्योंकि बड़े जागीरदारों ने मुख्या काँग्रेस के विरुद्ध मत दिया, जबकि छोटे भू-स्वामियों तथा सरकारी कर्मचारियों ने इसके पक्ष में मत दिया।

## नातेदारी एवं राजनीति

भारत में समाज-वैज्ञानिक ने परिवार एवं नातेदारी की राजनीति में भूमिका की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया है। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि नातेदारी की राजनीति में भूमिका जाति व्यवस्था की अपेक्षा कहीं कम महत्वपूर्ण है। दूसरे नातेदारी व्यवस्था जाति में ही समाहित है क्योंकि किसी व्यक्ति के नातेदार उसकी जाति के सदस्य भी हैं। फिर भी नातेदारी व्यवस्था ग्रामीण एवं स्थानीय स्तर पर शक्ति के वितरण को काफी सीमा तक प्रभावित करती है। जनजातियों में नातेदारी व्यवस्था की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि जनजातियों को राष्ट्रीय धारा में लाने के प्रयासों में भारतीय सरकार को सफलता ही नहीं मिली है, अपितु इससे उनकी समस्याओं की प्रकृति को समझने तथा उनके सामाजिक, आर्थिक स्तर को उँचा करने के प्रयास भी शुरु हुए हैं। परम्परागत रूप से जनजातीय लोगों का राजनीतिक व्यवहार बाहरी लोगों की अपेक्षा उनके स्थानीय नेताओं एवं नातेदारी व्यवहार द्वारा अधिक प्रभावित होता है। परम्परागत रूप से जनजातियों, पंचायतों की भी नातेदारी व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका रही है क्योंकि मुखिया के नातेदारों की स्थिति अन्य लोगों से उँची रही है। अनुसूचित जनजातियों के लिए निर्वाचन प्रतिनिधियों एवं नौकरियों में आरक्षण की सुविधा के कारण इनमें राजनीतिक सक्रियता में निश्चित रूप से वृद्धि हुई है। परन्तु नातेदारी की राजनीति में भूमिका के बारे में आनुभविक अध्ययनों का अभाव है।

## धर्म एवं राजनीति

धर्म मानव-जीवन का एक अनिवार्य तत्व है, जो कि जीवन के सभी पहलुओं को प्रभावित करता है। किर्सले डेविस के अनुसार, मानव समाज में धर्म इतना सर्वव्यापी स्थायी एवं दृढ़ है कि इसे स्पष्ट रूप से समझे बिना हम समाज को नहीं समझ सकते। मजूमदार एवं मदन के शब्दों में धर्म किसी पारलौकिक अतिमानुष और अतीन्द्रिय (परा संवेदी) शक्ति के भय का एक मानवीय प्रत्यन्तर है। यह व्यवहार की अभिव्यक्ति अथवा परिस्थितियों में किये गये अनुकूलन का वह रूप है जो अलौकिक शक्ति की धारणा से प्रभावित होता है।

धर्म एवं राजनीति परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। अमेरिका, फ्रांस तथा बेल्जियम में हुए आनुभविक अध्ययनों से हमें यह पता चलता है कि धर्म व्यक्तियों के राजनीतिक व्यवहार को

प्रभावित करता है। उदाहरणार्थ, कैथोलिक लोगों की अपेक्षा यहूदी राजनीति में अधिक भाग लेते हैं तथा कैथोलिक लोग प्रोटेस्टेंट लोगों की तुलना में अधिक सक्रिय हैं।

भारतीय समाज एवं जनजीवन धार्मिक विविधताएँ लिए हुए हैं। अत्यंत प्राचीनकाल से ही विदेशी संस्कृतियों का आगमन होता रहा है तथा सभी धार्मिक विशेषताओं को बनाये रखने का प्रयास करते रहे हैं। इसी कारण भारतीय समाज अनेक धार्मिक सम्प्रदायों में विभक्त होता चला गया। इसमें हिन्दू धर्म की बहु-देववादी प्रकृति ने भी योगदान दिया है। स्वतन्त्रता से पूर्व भारत में धार्मिक विविधता तथा राजनीति पर इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जब काँग्रेस सारे देश की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रही थी तब मुस्लिम लीग इसे दो राष्ट्रों में विभाजन की माँग कर रही थी। साथ ही यद्यपि अनेक सिख स्वतंत्रता संघर्ष के समर्थक थे, फिर मास्टर तारा सिंह और उसके समर्थक सिखों के लिए पृथक् खालिस्तान की माँग कर रहे थे। स्वतंत्रता संग्राम के समय अँग्रेजों ने भारत में अपना शासन बनाये रखने के लिए धार्मिक विविधता का समुचित लाभ उठाया। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत को एक सम्प्रदाय निरपेक्ष (Secular) लोकराज्य के रूप में स्वीकार किया गया। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25 के अन्तर्गत विभिन्न धार्मिक समुदायों की अन्तःकरण की स्वतंत्रता को स्वीकार किया गया है। भारतीय संविधान का 26वाँ अनुच्छेद नागरिकों को धार्मिक मामलों का प्रबंध करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। अनुच्छेद 27 में किसी धर्म की उन्नति एवं प्रचार-प्रसार के लिए करों की वसूली पर प्रतिबन्ध लगाया गया है तथा अनुच्छेद 28 में सरकारी अनुदान प्राप्त शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा न देने की गारण्टी दी गई है। अनुच्छेद 29 में अल्पसंख्यकों के संस्कृति एवं शिक्षा सम्बन्धी अधिकारों को संरक्षण दिया गया है, जबकि अनुच्छेद 30 में अल्पसंख्यकों को अपनी पसन्द के शिक्षा संस्थानों की स्थापना एवं प्रशासन का अधिकार दिया गया है।

भारत सैद्धान्तिक रूप से तो एक सम्प्रदाय निरपेक्ष लोकराज्य है, परन्तु अगर हम व्यावहारिक रूप से देखें तो धर्म एवं साम्प्रदायिकता राजनीति को प्रभावित करने वाले तत्त्वों में से प्रमुख तत्त्व हैं। भारत में धर्म की राजनीति में भूमिका निम्नांकित तथ्यों के आधार पर स्पष्ट की जा सकती है-

1. स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में अनेक राजनीतिक दलों, यथा- मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा, अकाली दल आदि का गठन धर्म एवं साम्प्रदायिकता के आधार पर हुआ है। मौरिस जोन्स के अनुसार, अगर साम्प्रदायिकता को व्यापक अर्थ में लिया जाये तो सभी दलों में किसी न किसी स्तर पर और कुछ न कुछ मात्रा में साम्प्रदायिकता देखी जा सकती है।
2. चुनाव अभियान तथा मतदान आचरण को प्रभावित करने के लिए धर्म एवं साम्प्रदायिकता का सहारा लिया जाता है। मठाधीशों, इमामों तथा पादरियों ने पिछले कुछ वर्षों में चुनावों को प्रभावित करने में अपने प्रभाव का खुलकर प्रयोग किया है।
3. भारत में अनेक धार्मिक संगठनों (यथा- जमायते इस्लामी, जमीयत-उलयए-ए-हिन्द आदि) राजनीति में सशक्त प्रभावी समूहों की भूमिका निभाते हैं तथा धर्म के आधार पर पृथक् राज्यों (यथा खालिस्तान) की माँग की जाती है।
4. मन्त्रिमण्डलों के निर्माण में धार्मिक आधार पर विभिन्न सम्प्रदायों को प्रतिनिधित्व दिया जाता है।

भारत में आज भी साम्प्रदायिकता एक गम्भीर समस्या है। कुछ विद्वानों (यथा- डी०आर० गोयल) इस बात पर बल दिया है कि साम्प्रदायिक तनाव तथा उपद्रवों को एक विघटनकारी कारक की अपेक्षा मौलिक एकीकरण के अभाव में सूचक के रूप में देखा जाना चाहिए। यह सत्य है कि इससे

एकीकरण में कुछ बाधा पड़ती है। परन्तु आधुनिक तकनीकी एवं विचारों से ऐसा होना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है।

साम्प्रदायिकता के विषय में यह कहा जा सकता है कि स्थिति अभी लाईलाज नहीं हुई है। असगर अली इन्जीनियर ने उचित ही लिखा है कि, 'जन समूह धार्मिक हैं, साम्प्रदायिक नहीं। सभी सम्प्रदायों में शुभेच्छा वाले धार्मिक और बौद्धिक नेता भी विद्यमान हैं। .....हम निश्चित ही साम्प्रदायिकता की आवृत्ति और गहराई को कम कर सकते हैं।

## भाषा एवं राजनीति

भारतीय राजनीति के अनेक निर्धारक तत्वों में से एक भाषा भी है। भारत एक बहुभाषी देश है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार भारत की संख्या 1 मार्च 2001 को 1 अरब 2 करोड़ 70 लाख थी। देश की विशाल जनसंख्या द्वारा 1652 से अधिक भाषाएँ बोली जाती हैं, जिसमें 63 भाषाएँ अभाष्य हैं। इनमें प्रमुख भाषाओं को, जिसे देश की जनसंख्या का 91 प्रतिशत लोग प्रयुक्त करते हैं- संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया गया है। 1992 ई० में हुए 71 वें संविधान संशोधन के पश्चात् यह संस्था 18 तथा दिसम्बर 2003 में पारित 100वें संविधान संशोधन विधेयक में डोगरी, मैथिली, संथाली एवं बोड़ो को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने के बाद अब यह संख्या 22 हो गयी है। अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में राजभाषा के रूप में हिन्दी का विरोध भाषा के आधार पर राजनीतिक दलों द्वारा संकीर्ण राजनीतिक हितों को प्रश्रय देना एवं भाषायी राज्यों के विवाद आदि ने राष्ट्रीय एकीकृत ढाँचे को चुनौती उपस्थित की है। प्रो० मॉरिस जोन्स के अनुसार क्षेत्रवाद और भाषा के सवाल भारतीय राजनीति इतिहास के इतने ज्वलन्त प्रश्न रहे हैं और भारत के हाल के राजनीतिक इतिहास की घटनाओं के साथ इतना गहरा सम्बन्ध रहा है कि अक्सर ऐसा लगता है कि यह सम्पूर्ण राष्ट्रीय एकता की समस्या है। भाषागत राजनीति के कारण ही धरती-पुत्र (The son of Soil) की धारणा का प्रचलन हुआ, जिसके तहत राज्य के संसाधनों, रोजगारों के अवसर का प्रादेशिक भाषा-भाषियों के पक्ष में आवंटन एवं अन्य भाषा-भाषियों के पक्ष में आवंटन तथा अन्य भाषा-भाषियों के प्रति असहिष्णुता की प्रवृत्ति को जन्म दिया है। महाराष्ट्र में शिवसेना ने मलयाली भाषी केरलवासियों एवं कन्नड़भाषी कर्नाटकवासियों का विरोध, वर्ष 2003 में रेलवे सेवा में भर्ती को लेकर, असम एवं बिहारियों के मध्य टकराव आदि घटनाएँ स्थानीयता की संकीर्ण भावना की परिचायक हैं।

भारतीय राजनीति में भाषा के नवमूलक प्रश्न को राजनीतिक स्वार्थों से प्रेरित कारकों एवं तत्वों ने प्रोत्साहित किया है। देश की राजनीति में राजभाषा के प्रश्न अथवा प्रादेशिक भाषाओं की राजभाषा को चुनौती तथा भाषायी आधार पर राज्यों के पुनर्गठन के मुद्दों का कार्य किया है। बहुभाषी राष्ट्र के रूप में भाषाओं का वैविध्य भारत का अनुठा लक्षण है, जिसे दलीय राजनीति से ग्रस्त राजनीतिक दलों ने परस्पर अन्तर्कलह का अभियन्त्र बना दिया है।

## आतंकवाद एवं राजनीति

आतंकवाद कोई दार्शनिक सिद्धान्त नहीं, यह एक साधन है, जिसके मूल में किसी सामाजिक या राजनीतिक परिवर्तन की आकांक्षा निहित रहती है। यह एक हिंसक नीति है, जिससे हिंसा के माध्यम से समाज में आतंक फैलाया जाता है। आतंकवाद रुपी विकराल दैत्य के पंजे कश्मीर की वादियों से लेकर चेचन्या, फिलीस्तीन, काबुल तक फैले हैं और 11 सितम्बर 2001 को विश्व के सर्वाधिक

शक्तिशाली माने जाने वाले संयुक्त राज्य अमेरिका का आर्थिक एवं रणनीतिक इमारतों पर प्रहार कर इसने अपनी भयावहता का परिचय दिया है।

यद्यपि आतंकवाद की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है तथापि विश्व में आतंकवाद का इतिहास बहुत पुराना है। शाब्दिक दृष्टि से आतंकवाद शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम बुसेल्स ने दण्ड विधान को समेकित करने के लिए 1931 में बुलाए गये तीसरे सम्मेलन में किया गया था जिसके अनुसार आतंकवाद का अभिप्राय “जीवन, भौतिक अखण्डता अथवा मानव स्वास्थ्य को खतरे में डालने वाला था। बड़े पैमाने पर सम्पत्ति को हानि पहुँचाने वाला कार्य करके जानबूझकर भय का वातावरण उत्पन्न कराना है। भारत के सन्दर्भ में मायरन वीनर ने लिखा है कि “भारत में सरकार दबाव गुटों के मांगों पर उस समय तक ध्यान नहीं देती, जब तक कि जन आंदोलनों के माध्यम से वे अपनी शक्ति का परिचय नहीं करा देते। 11 सितम्बर 2001 को आतंकवादी हमले का शिकार हो चुके दुनिया के दरोगा अमेरिका ने शीतयुद्ध के दौरान साम्यवाद को नष्ट करने हेतु बढ़-चढ़कर आतंकवाद के बीज बोये थे। चेचन आतंकवादियों की समस्या से जूझ रहे रूस ने अतीत में साम्यवाद के प्रचार-प्रसार हेतु आतंकवादी गुटों को प्रश्रय दिया था। इन महाशक्तियों ने धार्मिक कठमुल्लावादी एवं पिछड़े राष्ट्रों को अपना सहयोगी बनाकर आतंक को प्रायोजित किया था।

ओसामा-बिन-लादेन ने लगभग एक दशक तक अमेरिकी गुप्तचर संस्था सीआईए के सबसे प्रमुख कारकून के रूप में कार्य किया था। आर्थिक सैनिक साजो समान से दक्षिण एशिया में पाकिस्तान को अपने नुमाइन्दे के रूप में अमेरिका ने ही तैयार किया था और उसी पाकिस्तान से तैयार पाले पोसे तालिबान ने अमेरिका को चुनौती दी। अमेरिका द्वारा 11 सितम्बर 2001 के उपरान्त आतंकवाद का प्रसार करने वाले देशों को दण्डित करने के नाम पर अक्टूबर 2001 में अफगानिस्तान पर हमला तथा जैव एवं रासायनिक हथियारों को छिपाने के आरोप के आधार पर वर्ष 2003 में इराक पर हमला आतंकवाद की राजनीति के नवीन रूप हैं। मीडिया आतंकवाद का जन्म हुआ है। आतंकवादी प्रचार पाने के लिए प्रतिष्ठित केन्द्रों जैसे- राजनीतिक, आर्थिक, सामरिक महत्व के केन्द्रों पर हमले करने लगे हैं। वर्ल्ड ट्रेड सेंटर, भारत की संसद तथा जम्मू-कश्मीर की विधानसभा आदि पर हमला इसी तथ्य का परिचायक है। आतंकवाद ने साईबर आतंकवाद का रूप ले लिया है। आज आतंकवादी संगठन कम्प्यूटर इन्टरनेट द्वारा विविध देशों में अपना नेटवर्क स्थापित कर चुके हैं। वे लेपटॉप से विनाश का संवहन कर रहे हैं।

## निष्कर्ष

वर्तमान भारत की राजनीति जो आज निकृष्ट एवं अनैतिक कार्यों, क्रियाकलापों से कलंकित हो चुकी है, वह प्राचीनकाल में विश्व के लिए पथप्रदर्शक थी। वर्तमान भारतीय राजनीति को भाषावाद, क्षेत्रीयता, जातिवाद, नातेदारी, सम्प्रदायवाद एवं आतंकवाद ने दूषित कर दिया गया है। संसद से लेकर कार्यपालिका के छोटे ईकाई तक भ्रष्टाचार का बोलबाला बढ़ गया है। अधिकांश जनप्रतिनिधि भ्रष्टाचार एवं घोटालों के मामलों में फंस गये हैं, जिससे वर्तमान प्रजातंत्रीय व्यवस्था पर लोगों को सोचने के लिए मजबूर कर दिया है, जो एक दुःखद बात है। लोगों की आस्था एवं विश्वास इस शासन प्रणाली से कम होती जा रही है। यह वर्तमान व्यवस्था कभी भी देश में एक बड़ी क्रांति को जन्म दे सकती है। हमें इस व्यवस्था को सुधारने एवं जनप्रतिनिधियों में सच्चरित्रता को भरने की जरूरत है जिससे देश का कल्याण एवं विकास संभव है। अन्यथा वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य कभी भी देश में शान्ति एवं सुरक्षा की कमी या सुख समृद्धि को अनिश्चितता में डाल सकती है।

## संदर्भ-सूची

1. भारतीय शासन एवं राजनीति- डा. रुपा मंगलानी
2. भारतीय शासन एवं राजनीति- डा. पुखराज जैन एवं वी. एल. फाडीया
3. संसद का इतिहास- डा. सुभाष कश्यप
4. 'कास्ट एण्ड सेक्यूलरिज्म इन इण्डिया'- रजनी कोठारी एण्ड आर भारु
5. 'दि कॉन्सेप्ट ऑफ डॉमिनेन्ट कास्ट समक्वेरीज'- टी. के. ओमान
6. 'टुवार्ड्स ए कास्ट मॉडल ऑफ इण्डियन पॉलिटिक्स'- ए. एच. गोल्ड
7. राजनीतिक समाजशास्त्र- डा. धर्मवीर
8. भारतीय शासन एवं राजनीति- मॉरिस जेन्स
9. भारतीय सरकार एवं राजनीति- डा. आर. जन. त्रिवेदी एवं डा. एम. पी. राय
10. आतंकवाद का बदलता रूप- जोगिन्द्र सिंह

# आधुनिक भारतीय चिन्तक डॉ० भीमराव अम्बेडकर के राजनीतिक विचार

डॉ० मुखलाल राय

वरीय सहायक प्राध्यापक,  
राजनीतिशास्त्र विभाग, के०एस०एस० महाविद्यालय, लखिसराय

डॉ० अम्बेडकर के चिन्तन में जनतंत्र के प्रति उनकी गहरी आस्था सर्वव्याप्त है। यह जनतंत्र को मानव जीवन का एक ढंग मानते थे। मानव जीवन में स्वतंत्रता का महत्व स्वीकार करते हुए, उन्होंने मानवीय स्वतंत्रता को माध्यम के रूप में माना, हालांकि वह स्वतंत्रता को स्वेच्छाचारिता के साथ नहीं जोड़ते थे। डॉ० अम्बेडकर ने अनियंत्रित स्वतंत्रता को कभी स्वीकार नहीं किया। चूंकि आदमी पाशविक प्रवृत्ति से भी प्रभावित होता है, इसलिए राज्य द्वारा उसकी स्वतंत्रता पर अंकुश लगाना आवश्यक हो जाता है। डॉ० अम्बेडकर ने राज्य की उपादेयता को स्वीकार किया। वह चाहते थे कि राज्य के माध्यम से सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन तथा सुधार लाना जनहित में सिद्ध होगा। निःसंदेह डॉ० अम्बेडकर राज्य को जनतांत्रिक व्यवस्था में एक अनिवार्य संस्था मानते थे। विशेषकर अशान्ति और विद्रोह के समय इसका उत्तरदायित्व बढ़ जाता है। उन्होंने समाज को अधिक महत्व दिया, लेकिन फिर भी राज्य का महत्व कम नहीं होता, उसका सबसे बड़ा कार्य 'समाज की आन्तरिक अव्यवस्था और बाह्य अतिक्रमण से रक्षा करना है।' राज्य का अपना एक क्षेत्र है जिसमें उसकी गतिविधियाँ मान्य होती हैं, हालांकि डॉ० साहेब राज्य को निरपेक्ष शक्ति के रूप में नहीं मानते थे। उसका स्थान गौण है। उन्होंने कहा, 'किसी भी राज्य ने एक ऐसे अकेले समाज का रूप धारण नहीं किया जिसमें सब कुछ आ जाए या राज्य ही प्रत्येक विचार एवं क्रिया का स्रोत हो।' वह राज्यव्यवस्था को मानव हित की सेवा के दृष्टिकोण से देखते थे। राज्य जन-साधारण की सेवा का एक सशक्त माध्यम है।

डॉ० अम्बेडकर की दृष्टि से, राज्य एक मानव संस्था है। फिर भी राज्य सर्वशक्तिमान एवं निरपेक्ष नहीं होता, क्योंकि जनता ही उसका अन्तिम आधार है। कोई भी राज्य संगठन या सरकार जनता के द्वारा उसकी आज्ञापालन पर निर्भर होती है। राज्य की सत्ता के प्रति आज्ञापालन की भावना महत्वपूर्ण बात है। राज्य व्यवस्था की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि लोग उसके कानूनों का पालन करें। डॉ० अम्बेडकर जेम्स ब्राइस की इस बात से सहमत थे कि शक्ति या दबाव के द्वारा राज्य अपने को मजबूत बना सकता है। लेकिन दबाव अनेक साधनों में से एक है। यह निर्विवाद तत्त्व नहीं है। डॉ० अम्बेडकर ने कहा, 'राजनीतिक समुदायों को उत्पन्न करने, उनकी अच्छी दिशा में ढालने, उनको विस्तृत रूप देने तथा उनको एकत्रित करने में दबाव से अधिक महत्वपूर्ण आज्ञापालन की

भावना है। आज़ापालन की भावना जो सरकार के कानूनों तथा नियमों के प्रति प्रदर्शित की जाती है, व्यक्ति और सामाजिक समुदायों की कुछ मनोवैज्ञानिक धारणाओं पर निर्भर करती है।<sup>13</sup> यह आज़ापालन का भाव आलस्य, सम्मान, सद्भावना, बुद्धि और भय के सम्मिश्रण से उत्पन्न होता है। ये गुण या भावनाएँ सापेक्ष हैं और राज्य तथा समाज की परिस्थितियों पर निर्भर होती हैं। राज्य और जनता दोनों ही किसी व्यवस्था को भलीभाँति संचालित करने में सफल हो सकते हैं।

राज्य व्यवस्था की सुदृढ़ता के लिए जनता के द्वारा सम्मान एवं सद्भावना का होना आवश्यक है। सरकार के प्रति आज़ापालन का भाव शान्ति व्यवस्था के लिए जरूरी है। इन बातों के बिना न कोई सरकार, न कोई जनतंत्र या समाजवाद, सफल हो सकता है। इसीलिए डॉ० अम्बेडकर ने कहा, 'सरकार की सत्ता के प्रति, सरकार की सुदृढ़ता के लिए आज़ापालन की भावना उतनी ही आवश्यक ही आवश्यक है जितनी कि राजनीतिक दलों की राज्य के मौलिक तत्त्वों पर एकता। किसी भी विवेकशील व्यक्ति के लिए यह असम्भव है कि वह राज्य व्यवस्था को कायम रखने के लिए आज़ापालन के महत्व को अस्वीकार करे। नागरिक अवज्ञा में विश्वास करना, अराजकता में विश्वास करने के समान है। डॉ० साहेब ने जनता की भलाई के लिए राज्य व्यवस्था को अत्यन्त आवश्यक बतलाया। इसके लिए यह भी जरूरी है कि सभी नागरिक राज्य के कानूनों तथा नियमों के प्रति आज़ापालन की भावना बनाए रखें। साथ ही, डॉ० अम्बेडकर की यह मान्यता थी कि राज्य का प्रमुख कार्य व्यक्ति एवं समाज की स्थिति को सुधारना है। राज्य व्यवस्था, उसकी अनिवार्यता एवं सामर्थ्य में अटूट विश्वास प्रकट करते हुए, डॉ० अम्बेडकर ने कहा कि उसके मुख्य कार्य इस प्रकार होने चाहिए—

1. 'प्रत्येक व्यक्ति के जीवित रहने, स्वातंत्र्य तथा आनन्द के अधिकारों को बनाये रखना राज्य का काम है,
2. विचार एवं उसको व्यक्त करने तथा धर्म की स्वतंत्रता बनाये रखना राज्य का काम है,
3. सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक असमानताओं को दूर करना और शोषित वर्गों को सुविधाएँ देना राज्य का काम है, और
4. प्रत्येक नागरिक के लिए यह सम्भव करना कि वह भूख-प्यास तथा भय से मुक्त रहे, राज्य का काम है।'<sup>14</sup>

डॉ० अम्बेडकर के राजनीतिक विचारों में राज्यव्यवस्था का सिद्धान्त एकदम राजनीतिक न होकर, सामाजिक और नैतिक भी है। वह मार्क्स की भाँति यह विश्वास नहीं करते थे कि विकास के अन्तिम चरण में राज्य समाप्त हो जायेगा। वह यह मानते थे कि सामाजिक एवं नैतिक दृष्टि से, राज्य सदैव आवश्यक है और उसका किसी भी अवस्था में लुप्त होना असम्भव है। लेकिन बाबासाहेब के अनुसार, राज्य की स्थिति केवल उसी समय तक सार्थक है, जब तक वह व्यक्ति और समाज की सेवा एवं सुरक्षा का साधन बना रहता है। वह राज्य की समष्टिवादी अवधारणा से सहमत नहीं थे, क्योंकि राज्य का निरंकुश एवं निरपेक्ष होना मानवीय स्वतंत्रताओं के हित में नहीं होता। डॉ० अम्बेडकर का बल इस बात पर था कि राज्य, व्यक्ति और समाज साथ-साथ सम्मानपूर्वक रह सकते हैं, और शोषित एवं कमजोर वर्गों के अधिकारों के संरक्षण का मुख्य दायित्व सभी के सहयोग से निभाया जा सकता है।

डॉ० अम्बेडकर संसदात्मक सरकार के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने माना कि ब्रिटेन में जिस प्रकार की संसदीय प्रणाली है, वह भारत में उपयुक्त रहेगी। संसदीय प्रणाली भारत के लिए कोई नवीन बात

नहीं है। भारत में कई ऐसे काल आए, जबकि जनतंत्रीय प्रणाली प्रचलित थी, पर कालान्तर में वह लुप्त हो गई। डॉ० अम्बेडकर ने यह कहा, 'आज संसदीय सरकार की बात हमारे लिए विदेशी प्रतीत होती है। यदि हम गाँवों में जायें तो मालूम होगा कि लोग यह नहीं जानते कि वोट क्या है? पार्टी क्या है? जनतंत्र प्रणाली उन्हें विचित्र प्रतीत होती है। इसलिए हमारे सामने यह समस्या है कि इस प्रणाली को कैसे बचाया जाये। जनता को हमें शिक्षित बनाना है, और उसे संसदीय जनतंत्र तथा संसदात्मक सरकार के लाभ बताने हैं।'<sup>5</sup> डॉ० अम्बेडकर ने संसदीय प्रणाली को इसलिए पसन्द किया कि यह ऐसी सरकार है, जिसे जनता स्वयं चुनती है, यह ऐसी प्रणाली है जो भारत में प्रचलित थी और यह जनतांत्रिक है जिसमें व्यक्तिगत स्वतंत्र को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। यदि संसदीय सरकार अच्छी हो जन-साधारण की भलाई करें, तो डॉ० अम्बेडकर के अनुसार उसमें तीन शर्तों का होना आवश्यक है-

1. पैतृक शासन नहीं होना चाहिए। कोई भी मनुष्य पैतृक शासन का अधिकारी नहीं है। जो कोई शासन करना चाहता है, उसे जनता के द्वारा समय-समय पर चुन कर आना चाहिए। उसे जनता की स्वीकृति लेनी चाहिए। पैतृक शासन का संसदात्मक सरकार में कोई स्थान नहीं है।
2. कोई भी कानून या कोई भी योजना, जो जनता के हित के लिए बनाई गई है, वह उन लोगों की सलाह से बनाई जानी चाहिए जिनको जनता ने अपना प्रतिनिधि चुनकर भेजा है।
3. जनतंत्र में जनता के कार्य राज्य के मुखिया के नाम से किये जाते हैं, लेकिन वह एक मूर्ति के समान होता है। उसकी पूजा की जा सकती है, पर वह अपनी मर्जी के मुताबिक शासन नहीं चला सकता। जनतंत्र में सरकार मूलतः न प्रतिनिधियों द्वारा चलती है जिनको जनता ने चुना है, हालाँकि सैद्धान्तिक रूप से गतिविधियाँ मुखिया के नाम से ही चलती हैं। जो लोग रहना चाहिए<sup>6</sup> संक्षेप में, स्वच्छ एवं निष्पक्ष चुनाव होते रहना संसदीय प्रणाली के लिए परमावश्यक है।

परतंत्र देश और विदेशी सरकार तो सदैव कष्टदायक होती है। डॉ० अम्बेडकर ने एक अच्छी सरकार को स्वशासन से जोड़ा और कोई भी अच्छी एवं स्वदेशी सरकार प्रतिनिधि सरकार होती है। यह प्रतिनिधि सरकार किसी राजनीतिक दल द्वारा बनाई जाती है जिसे जनता चुनती एवं पसन्द करती है। सत्ता में आसीन राजनीतिक दल को निरंकुश तथा तानाशाह बनने का प्रयास नहीं करना चाहिए और न ही ऐसी विधियाँ प्रयोग में लानी चाहिए जो जनतांत्रिक और संसदात्मक न हों। डॉ० अम्बेडकर का यह कहना था कि "यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि शक्ति राजनीतिक संगठन के लिए एक दवा है और वह बीमार पड़ जाए तो उस दवा का प्रयोग करना चाहिए। लेकिन चूँकि राजनीतिक संगठन की शक्ति दवा है, उसे उसका रोजाना का भोजन नहीं बनाना चाहिए।

एक राजनीतिक संगठन को वास्तव में कार्य की प्रेरणा से ओत-प्रोत होना चाहिए और यही उसके लिए स्वाभाविक है। यह उसी समय सम्भव हो सकता है जब राजनीतिक संगठन के बनाने वाले विभिन्न तत्त्वों में संगठित रूप से कार्य करने की इच्छा हो और साथ-साथ उन नियमों का पालन करने की भावना हो जिनको किसी अधिकृत व्यवस्था ने पास किया हो।"<sup>7</sup> डॉ० अम्बेडकर ने स्पष्टतया संसदीय सरकार को उत्तम सरकार माना। उन्होंने कहा कि कानूनों तथा नियमों का परिपालन न केवल जनता, अपितु सभी राज्य कर्मचारियों और जन-प्रतिनिधियों के द्वारा आवश्यक है। इस प्रकार संसदीय सरकार एक साधन मात्र है, साध्य मानव कल्याण है।

डॉ० अम्बेडकर संसदीय अथवा प्रतिनिधि सरकार की व्यवस्था में दल पद्धति को आवश्यक मानते थे। लेकिन वह एक ही दल पद्धति के विरोधी थे। उन्होंने कहा, "यह स्वीकार्य है कि संसदीय

सरकार में दल पद्धति एक आवश्यक अंग है, लेकिन साथ-साथ यह स्वीकार नहीं है कि उसमें एक ही राजनीतिक दल हो, एक राजनीतिक दल उसके लिए घातक है। यदि सच कहा जाये तो एक दल पद्धति संसदात्मक प्रणाली के लिए एकदम प्रतिकूल है।<sup>98</sup> डॉ० अम्बेडकर के अनुसार, एक दल पद्धति दबाव तथा अन्याय का साधन बन सकती है। जनता को गुमराह करने की अनेक सम्भावनाएँ उत्पन्न हो सकती हैं। यह निरंकुशता का ही दूसरा रूप होगा। अतः “संसदीय सरकार को एक दल के द्वारा चलाना जनतंत्र को निरंकुशता के समान ही बनाना है, ताकि निरंकुशता अपना कार्य जनतंत्र की ओट में करती रहे।<sup>99</sup> इस प्रकार जनतंत्र तथा संसदीय पद्धति का एक दल पद्धति के साथ कोई तालमेल नहीं है।

आज संसार में कई ऐसे हैं जहाँ पर एक ही पार्टी का शासन है। लेकिन एक दल पद्धति में बहुमत का दबाव समाप्त नहीं हो पाता है। यह उन लोगों के लिए शत्रु बन जाता है जो उस पार्टी के विचारों एवं नीतियों का विरोध करते हैं। इसलिए डॉ० अम्बेडकर ने एक दल की ओट में किसी भी तरह के निरंकुशवाद को पसन्द नहीं किया। उन्होंने कहा, “निरंकुशता केवल इसलिए समाप्त नहीं हो जाती कि दल जिसमें वह निहित है, चुनकर भेजा गया है और निरंकुशता इसलिए स्वीकार है कि निरंकुश लोग अपने ही भाई हैं। इसे चुनाव का विषय बनाने से ही यह समाप्त नहीं हो पाता है। इसकी वास्तविक गारण्टी यह है कि इसका उस सम्भावना के साथ सामना किया जाये कि उसे गद्दी से उतार दिया जाये। सत्ता से धराशाही कर दिया जाये अर्थात् उसे एक विरोधी दल बनाकर ठीक किया जाये।<sup>100</sup> स्पष्ट है कि डॉ० अम्बेडकर संसदीय प्रणाली में कम से कम पक्ष-विपक्ष के दो दलों के समर्थक थे, ताकि निरंकुशता या तानाशाही जनता पर हावी न होने पाये। उन्होंने यह माना कि ‘निरंकुशवाद स्वतंत्रता का विरोधी है चाहे वह स्वदेशी हो या विदेशी।’<sup>101</sup>

राज्य और सरकार का सिद्धान्त, जैसा कि डॉ० अम्बेडकर के राजनीतिक विचारों में सन्निहित है, यह स्वीकार करता है कि सामाजिक न्याय और सभी नागरिकों की सुख-सुविधाओं की सम्भावनाओं में अभिवृद्धि करना, उनका मुख्य कार्य है। सामाजिक हितों को, व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं को ध्यान में रखते हुए, आगे बढ़ाना उनके कार्यक्षेत्र में आता है। डॉ० अम्बेडकर राज्य के आदर्शवादी विचार से सहमत नहीं थे, जो यह मानता है कि राज्य एक रहस्यमय व्यक्तित्व है, एवं स्वतंत्र इकाई है, पृथ्वी पर ईश्वर की एक योजना है जिसके ऊपर व्यक्ति का अस्तित्व निर्भर है। डॉ० साहेब के अनुसार, जनता अथवा विभिन्न व्यक्ति ही मिलकर राज्य का निर्माण करते हैं। उनके बिना कोई भी राज्य नहीं बन सकता है। अतः उसका यह कर्तव्य हो जाता है कि आदमी इस धरती पर जो उत्तमता प्राप्त करना चाहता है, उसमें वह सहयोग दे। इस अर्थ में राज्य अथवा कोई सरकार एक महत्वपूर्ण साधन है, न कि साध्य, और उसका यह दायित्व है कि वह ऐसी समाज व्यवस्था स्थापित करे, ताकि सब लोग, अछूत, कमजोर अथवा अन्य कोई, एक सम्मानपूर्वक जीवन जी सकें। राज्य एक अनिवार्य मानव संस्था है जिसका लुप्त होना असम्भव सी बात है। संक्षेप में, राज्य अथवा सरकार जैसी मानव संस्था को समाज के व्यापक हितों की दिशा में अधिक से अधिक उपयोगी बनाया जाना चाहिए।

डॉ० अम्बेडकर का मानववादी दृष्टिकोण सुस्पष्ट है। उनके राजनीतिक चिन्तन में कानून एवं संविधानवाद का महत्वपूर्ण स्थान है। कानून स्वतंत्रता एवं समानता का संरक्षक है। उन्होंने कहा, ‘कानून के समक्ष सभी नागरिक समान हैं और सबको नागरिक अधिकार है।’ उनकी मान्यता थी कि नये संविधान के अन्तर्गत सभी नागरिकों के अधिकार समान हैं और कोई भी कानून, नियम या रीति-रिवाज अथवा व्यवस्था ऐसी नहीं रहेगी जो भेद-भाव करती है, जो ऊँच-नीच अथवा छूत-अछूत का विचार पैदा करती है। डॉ० अम्बेडकर ने आगे कहा, ‘कोई राज्य ऐसे कानून नहीं

बनायेगा या रीति-रिवाजों को लागू नहीं करेगा, जिससे नागरिकों की सुविधाएँ समाप्त हों, न कोई राज्य किसी नागरिक को उसके जीवन, स्वतंत्रता तथा सम्पत्ति के अधिकारों से कानून की विधि के बिना वंचित करेगा, और न कानून का संरक्षण ही उसके लिए माना किया जायेगा।<sup>12</sup> व्यक्ति के प्राकृतिक एवं अन्य अधिकारों का संबंध संविधानवाद से है। डॉ० अम्बेडकर ने न केवल सैद्धान्तिक संविधानवाद पर ही विचार किया, अपितु सांविधानिक नैतिकता और व्यावहारिकता पर भी बल दिया, ताकि जनतांत्रिक प्रणाली सुचारू रूप से चलती रहे। अपने राजनीतिक विचारों में डॉ० अम्बेडकर ने संघीय तथा एकात्मक सरकार को परिस्थिति में उपयुक्त बतलाया और कहा, 'एक भारतीय होने के नाते, भारतीय राष्ट्रवाद में रूचि होने के कारण, मैं स्पष्ट कह देना चाहता हूँ कि मैं सरकार के एकात्मक रूप में विश्वास करने वाला हूँ और ऐसे सुझाव को छिन्न-भिन्न करने का विचार मुझे प्रिय नहीं है। एकात्मक सरकार भारतीय राष्ट्र के निर्माण में बहुत ही प्रभावशील रही है।'<sup>13</sup> संक्षेप में, एकात्मक सरकार भारतीय राष्ट्र को टूटने और विभक्त होने से बचा सकती है।

### संदर्भ-सूची

1. स्टेट्स एण्ड मॉडर्निजिज, पृ. 3
2. वी.आर. अम्बेडकर, पाकिस्तान और द पार्टीशन ऑफ इण्डिया (थैकर एण्ड कश्वनी बम्बई 1946), पृ. 33
3. वही, पृ. 293
4. स्टेट्स एण्ड मॉडर्निजिज, पृ. 3
5. दस स्पोक अम्बेडकर, भाग प्रथम (भगवानदास द्वारा संकलित एवं संपादित, भीम-पत्रिका प्रकाशन, जलंधर, 1963) पृ. 51-52,
6. वही, पृ. 52-53
7. पाकिस्तान और द पार्टीशन ऑफ इण्डिया, पृ. 362
8. रानाडे गाँधी एण्ड जिन्ना, पृ. 74,
9. वही, पृ. 74-75,
10. वही, पृ. 75
11. वही, पृ. 75
12. स्टेट्स एण्ड मॉडर्निजिज, पृ. 9
13. गोलमेज परिषद् (RTG=प्रथम-सत्र, 12.11.1930-19.01.1931) प्रॉसीडिंग्स, पृ. 123-129

# Inscribed Stupas, Self-assertive Their Personality

---

---

**Mohd. Sameel Naseem**

*Department of History, Singhania  
University Pachheri Bari, Rajasthan*

---

---

**Dr. Sanjay Kumar**

*Department of Buddhist Studies  
University of Delhi, New Delhi*

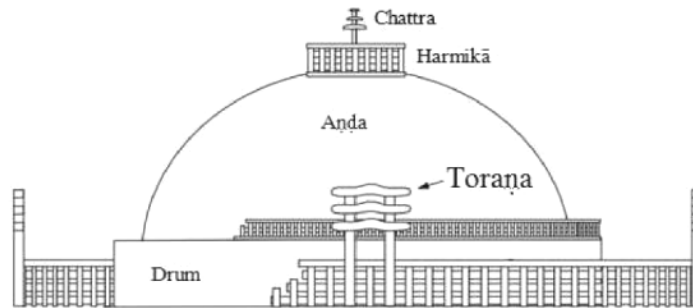
## **Abstract**

With the record I gathered at Sanchi, I juxtaposition and oddity the toric *stupas* on the southern pathway with the another 28 non-inscribed *stupas*. I seems nearby at all 30 *stupas*' physical countenance to negotiate, similarities and odds. By the description and ensuing analysis of the record, I target to commentary where the two hammered *stupas* from the southern pathways fit inboard the corpus of *stupa* characterization at Sanchi and try to judge if the similarities and odds are valued. Before assembly this record, I generated many questions that I expectation to be able to reply in my study. Do *stupas*' iconographic equality fit the thematic equality? For example, do every the *stupas* in Mnushi Buddha situation equal to a distinct iconographic style? Even much exclusive, do the hammered *stupas* exhibit any rare characteristics that situated them apart from not just another *stupas* of a same kind, unless from the another *stupas* from other pathways? And from the southern pathway? Lastly, the most significant question concerning these inscribed *stupas*, self-assertive their personality: do the inscriptions develop the *stupas* exclusive or more valuable, or do their iconographic countenance? Anywhere my study, I as well think whether or not the *stupas* reflection were carved from a exponential (or "cookie-cutter") reflection and ask if there were various molds for various types of *stupas*. My target, at the very rare, is to present and analyze new record in many various ways to start up to understand the reflection of a *stupa* at Sanchi.

## **Sections of Stupa**

In this iconography of a *stupa* reflection, the railing is equally depicted to how it highlight at Sanchi *stupa* no. 1, By many crossbars linked two rail pillars. On peak, across the whole railing are the copingstones. In this characterization of *stupas*, the railing may either have two linked crossbars among every pillar, or three, depending on the illustration or scene. Some of the *stupas* also obtain, like Sanchi *stupa* no. 1, several railing, representing a earth circumambulatory ways and an upper one. Generally the railing is the architectural essentiality that separates the circumambulatory ways from the another section of the *stupa*, yet in the *stupa* reflection it is suspicious a circumambulatory ways was intended.

Instead, it is a emblematic merits. The odds can be plainly seen when juxtaposition the very huge, three-tiered *stupa* characterization from the west column of the north pathway on the master list of *stupa* representations



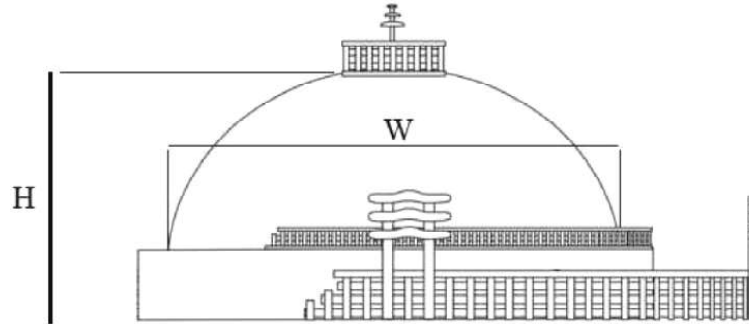
*Sections of a Stupa*

On few *stupas*, *aas* rise from a raised stage, known as a drum. Drums come out to serve one chief function: to raise the *aa* above the earth. While every of the change *stupas* at Sanchi get drums,<sup>3</sup> it is obscure as to whether or not these originally had those. Apropos to attending archaeologists at the location, *Stupa* no. 3 was rechauffe to match the appearance of a *stupa* on its gateway.<sup>4</sup> On the pathway of *stupa* no. 1, just a few of the *stupa* reflection possess drums. Thus, therefore of the all reconstruction of great *stupas* from piles of the bricks, the frequency of main drums made at open-air votary sites like Sanchi is up for discussion. The use and value of depicted *stupas* to rebuild the “real” *stupas* remains an ongoing dispute that may be debate in a forthcoming study. In the assistance, drums are a fixedly unique nature used in just a few instances.

#### **Stupa’s Iconographical Connection by other Stupas.**

Next nature I see at the number of railing per *stupa*. Some *stupas* have upto to three railing while others have only one. The railing in this reflection may have two or three crossbars to each rail pillar. The variability among the happens of two crossbars to this is of three crossbars rise to be insignificant presently. I have not design it in any table. Therefore, the number of railing per *stupa* is concerned to the total study in this section. Adornment of this *stupas* in the reflection is a easy feature to proportion, as closely total the *stupas* in the pathways relief art possess adornment of some sort. Commonly these decorations are the garlands established or in the task of being placed, on that drum, with worshippers. Other garniture may comprise unique patterns traced in the face of this drum or *aa*, or sunblind dangling from the *chattras*. The chief ornamentations are the rosary draped throughout the *aas*. They plunge back and forward up and down there on the width of the *aa*. In few of the scenes, mythological soaring figures or folk coming to prayer at the *stupa* place rosary on the *a*. Between the *stupas*, this is an odd default of ornamentation on someone of the *stupas* on the southern pathways. It is obscure if this is an artistic liking or

if there was anything unique about the situation on the southern *stupa* pathways of every *stupa*, it may be artistically unthinkable to display a garland.



### Aa Measurements of Stupa Images<sup>8</sup>

At the tops of the *stupa* images, I quantify the number of *chattras*. Because *chattras* are typically reserved for heavenly figures and ruler, as shown in another reliefs depicting ruler or aniconic representations of the Buddha, like as a Bodhi Tree, the figure of *chattras* it is colorable significant. One principle is that the immensely *chattras* these are, the holier the location or person whose sign are induct in the *stupa*. unless, the connection among the number of *chattras* and the apparent magnitude of the *stupa* within the scene is unreadable. The number of *chattras* may be left to the maestro. Alternatively, it can be a random insertion that succumb on unavoidable environmental cause, such like space onto the architrave or die. For those *stupas* that do hold office a drum, and hence many railing, the height of the drum is scale. The height of every drum is almost uniformly closely half that of the all height of the thorough *stupa*. Because, the height of the drum it is, at Sanchi, an scenic stable. No other merits is as regimentals as the drum height.

### Types of Stupas

From a nearby study of the satisfied, outlined above, three topical categories come out from the 30 location by *stupas*. *Stupas* in Mnushi Buddha places illustrate the first manner. Table 2.3 from the other chapter outlines whence and how many season the Mnushi Buddha scenes happens. All the Mnushi Buddha situation at Sanchi by *stupas* are onto the outer portrait of the peak architraves of every of the four *toraas*. A suitable Mnushi Buddha scene necessity contain seven factors, a mixture of trees and *stupas*. That is The Mnushi Buddhas are the secular Buddhas, six of which are the instant predecessors to the Gautama. The scenes might consist of alternating factors, like as tree, *stupa*, tree, etc., with be merely all trees. One apparent illustration from the southern pathways (Image 4.1) seems the various factors, the alternating model of tree, *stupa*, tree, etc. among every element, even though, are shorts scenes consisting of the devotees who direction the trees or *stupas*. The devotees come in various heights, even though some may be mythological count while others are perhaps only human. Every figure is doing a rare activity in the small scene—

few are turning their hands or others are bending their hands in faith. Others perform various mode of movement depending on their connection with the tree or *stupa*.



### *Top Architrave with the Mnushi Buddha Theme*

This *parinirva stupa* is the forward identifiable manner (Image 4.2). These are three mark closely related to significant biographical incident in the Buddha's life: that *bodhivka* by the Enlightenment, the *cakra* by the First preaching, and the *stupa* for this *parinirva*.<sup>9</sup> The three mark are often represented side by side in certain contexts and several, scholars interpret them like aniconic mark of the Buddha, mention his life.<sup>10</sup> even though, Susan Huntington formulated a principle of reenactments<sup>11</sup>, Linrothe amazement why no one plays the doings of the Buddha in the reenactments.<sup>12</sup> Vidya Dehejia tensions multivalency, emphasizing varied possible explanation for a single reflaction. 13 At Sanchi, context may be applied to deduce *parinirva* location, where in many locations alongside of the pathways, like as the outwards face of the south pathways architraves, there is the compatible and well-known model of signs referencing is the Buddha's personalia. One such *stupa* from the south pathways, appears on the die among the mean and lower architraves on the west aspect On the direct onward die is a genesis scene. That, among the middle or top architraves, it is a Awakening of Gautama. Straight below the *dharmacakra* on a column, symbolizing the sooner Sermon at Sarnath pattern, it shows colorable that this the similar contextual criteria, I oneself with at least three like *parinirva* at Kuinagara. The final thematic type formation of legendary or mythological scenes from Buddhist literature. These are the scenes typically receive place through the related to the proliferation of Buddhism or significant turning points in Buddhist memoir. The first and highest important of these situation is the previously depict scene *tora*, it shows the character of motive of opening it to receive relics for the reason of splitting them up to indite more *stupas*. Sure, as aforementioned in section 2, *ngas* and *ngin* s guarded and prayer the *stupa* and stop A oka's intended task. Some legend scenes, like in reflectione 4.3, may not be identifiable, yet are very suitable scenes known to the maker of the on some infusion. Reflaction, as they would have been painting other identifiable legendary scene is underlay on the west pillar, upstanding panel on *tora*. The *stupa* here, by three the internal face of the northern balustrades and a *tora*, is especially unique in many style. It is also the just *stupa* to appear under the false metropolis of the pathways. Marshall<sup>14</sup>, and others<sup>15</sup>, know the scene as describe the Mallas of Kuinagara, esteeming the *stupa* of the Buddha through his *parinirva* . as long as Marshall and Foucher's explanation may be disputed,

the motive is clear— it is few scene, either knowing or unknown, taking space after the Buddha's dying and is part of the forthcoming memorials of Buddhism.<sup>16</sup>



*Bottom Architrave Depicting a Legend Scene*

### **Unidentifiable Stupa Images**

The final group, the unidentifiable team of seven, does document distinct trends between their iconographic specialties. They seem on architrave conclusion and dies, belike individual, disjointed panels. The width to the height rate of the *stupas* is only below one on common, showing they are commonly slightly taller than these are wide, a specialty common of the narrative scenes. However, unequal the legend scenes, this is the group common just one railing per *stupa*, a strong various from the legend scenes, however yet a strong equality to the *parinirva* scenes. But, the contrast among the average number of *chattras*, what is just one in this team, is a strong difference from the *parinirva* scenes, which usual closely four *chattras* per *stupa*. Additionally, the level of one fellow may fit singly the *parinirva* situation or the Mnushi Buddha scenes. In absentia any more witness, it is unthinkable to place any of those *stupas* in other categories founded on their iconographic compatibility or differences. Further *stupa* nos. 26 and 27, with level huge than one person, do not suitable the shape of legend scene *stupas* therefore they do not have drums or different railing. The width to height rate on average is beneath one, which is also a strong expansion from the *parinirva* scenes. In the finish, this unidentifiable iconographic method of *stupa*, even though consistent by one another in many path, does not plainly fit into any of the other manner. So, they could represent a wholly other style of *stupa* that we are thematically incapable to identify purely or imagine currently.

### **Conclusion**

The intention of this section has been to outline many iconographic speciality of characterization of *stupas* on the Sanchi *toraas*. athwart describing and analyzing this is characteristics, whence do the two hammered *stupas* from the south *toraa* suitable into this data? To start , the Mnushi Buddha *stupa* of nanda, #2 in the Tables, stylistically equal to the *stupas* of another Mnushi Buddha *stupas*, maybe demonstrating that is nanda, onward by whomsoever may have to project and carved the architrave, required to create a uncrippled Mnushi Buddha *stupa*.is Alternatively, the considering that is the southern pathways

was the very first of this four, nanda's Mnushi Buddha *stupa* might have been between the first of its kind, thus edging the criterion of Mnushi Buddha *stupas* on the Sanchi architraves. Inboard the team of Mnushi Buddha *stupas* on the peak architraves, nanda's *stupa* has a closely perfect width to height rate of one and a scale of one fellow. Both quantifiable merits are consistent by the group of Mnushi Buddha *stupas* as a entire. The only noteworthy various is that nanda's *stupa* does not hold any sort of ornamentation. This may be instruct by the fact that nobody of the *stupas* on these south *toraas* have any decoration.<sup>17</sup> One probability is that therefore of the two *stupas'* petrograph, no ornamentation was permit on the *aa* of the *stupas*. hence, to unify all the merits of the south *toraas'* *stupas*, none of them hold any rosary or decorations.<sup>18</sup> Thinking about every of the style of *stupas* and their connection with the pathways, the just apparent relation within the record is that the *stupas* from the south pathways are slightly more peerless by their iconography. Nobody of them are fitted, all yet one have drums (a rare merits otherwise), and each but one have two railing. The plausibility of the two donative petrograph on this unique set of *stupas* improve their appearance therefore the scripture in the center of the *aas* ceremony almost as an adornment itself—a written molding perhaps—and refer these two *stupas* a particular place in the corpus of donated tectonics and art at Sanchi

## References

1. Adapted from L Fogelin, *Beyond the Monastery Walls*, Dissertation. University of Michigan (2003): p. 13.
2. Actually in several of the *stupa* scenes, figures are actually standing on top of the balustrade performing a devotional ritual.
3. Here I am referring to the ASI's reconstruction of *stupas* nos. 2 and 3 specifically. While the balustrade of *stupa* no. 2 was largely found undamaged, none of the balustrade of *stupa* no. 3 remained *in-situ*. *Stupa* no. 3 is the only other *stupa* at Sanchi that had a *toraas*, which stands in its original place even today.
4. Additionally, they have used this, and other *stupa* images, as models for the reconstruction of many *stupas* in the area, and not just no. 3.
5. At Mathura and Amaravati there are a number of relief images containing *stupas* with *toraas*. However, a discussion of these images is beyond the scope of the present study.
6. L Fogelin, "Material Practice and the Semiotic Metamorphosis of a Sign: Early Buddhist Stupas and the Origin of Mahayana Buddhism," Unpublished Manuscript, 2009, will discuss the terms "accentuation" and "implied mass" in great detail. He argues that the creators of such *stupas* were attempting to create visual tricks, or illusions, to imply that the some *stupa* are larger than in reality. Fogelin uses evidence from rock-cut *stupas* from the Western Deccan to argue his point. *Ibid.*, pp. 24-6.
7. K Karlsson, *Face to Face with the Absent Buddha* (Uppsala: Uppsala University Press, 1999): p. 174.
8. See *ibid.*, pp. 174-186 for a lengthy discussion of aniconism and *stupas*.

9. Susan Huntington has challenged the frequency of aniconism. In S L Huntington, "Early Buddhist Art and the Theory of Aniconism," in *Art Journal* 49 (1990), pp. 401-8 she proposes that the symbols in question depict later worship at Buddhist sites and the beginnings of pilgrimage to those sacred sites. She earlier mentioned this concept in S L Huntington, *The Art of Ancient India* (Boston: Weatherhill, 1985).
10. R Linrothe "Inquiries into the Origin of the Buddha Image: A Review," *East and West* 43 (1993): p. 249: "why is it, if there was no disinclination to represent the Buddha, that no one plays the part of the Buddha himself [in the pageants]?"
11. V Dehejia "Aniconism and the Multivalence of Emblems," *Ars Orientalis* 21 (1991): p. 45.
12. J Marshall, *The Monuments of Sanchi* vol. 1 (Delhi: Swati Publications, 1982 reprint): pl. 8.
13. L Fogelin, "Ritual and Presentation in Early Buddhist Religious Architecture," in *Asian Perspectives*, 42.1 (2003): p. 147.
14. The identification of this stupa as a "legend scene" and not as a parinirva scene, even though it might involve the stupa at Ku inagara, is due to its grand scale and disassociation with the surrounding panels.
15. All three of the parinirva scenes that I have highlighted in this chapter are all contextually part of a large thematic scheme involving several other depictions from the Buddha's biography. This particular scene stands alone and is truly unique in its size, iconography, and placement.
16. If true, this explanation would shift all of the focus on the central inscribed stupa of nanda. Because the inscription takes up the entire face of the stupa, no garland was possible. All other stupa representations would thus conform to this appearance, only without the inscription. Other than its centrality to the architrave and the inscription, this would be an extraordinary amount of emphasis placed on one stupa.
17. Other reasons are possible as well. For instance, the supervisor of the south gateway may have wanted to make the southern gateway different, and therefore the deliberate omission of garlands in this way is a unique choice.

# Non-Cooperation Movement in Bihar and Dr. Rajendra Prasad

---

---

Dr. Ravi Shankar Kr. Choudhary

*Guest Faculty, Department of History  
T.N.B. College, Bhagalpur*

## **Abstract**

The First President of Indian Republic Rajendra Prasad was the first great freedom fighter who dedicated his life to Gandhian Principles and was among the great Indians in Bihar who stood by Gandhi in an unconditional way. The present paper highlights the role of Rajendra Prasad in Non-cooperation Movement., The details of his participation show how Rajendra Prasad effectively provided leadership in his own simple and heart winning way, to his followers, and was largely responsible for a successful non violent Non.cooperation Movement.

Rajendra Prasad matured into undisputed leader of Bihar during the noncooperation movement but had already had his baptism in a big way in the Gandhian methods during the Champaran movement of 1917 which was the rehearsal of the exciting series of events that were to take place during the subsequent three decades. He himself wrote, "When I look upon the period elapsed and the work that has since been done in the country, I feel as if we are enacting the Champaran drama on a very much vaster scale."<sup>1</sup> On the success in Champaran a newspaper commented, "How we wish we had only half a dozen Gandhis in India to teach our people self abnegation and selfless patriotism."<sup>2</sup> Indeed Gandhi himself prepared some of his followers into a sort of other Gandhis by putting his entire faith in them. When the district authorities at Champaran asked him to do away with his followers who appeared to them to be threat to peace he said that they were 'able, earnest and honourable men' and 'to abandon them is to abandon my work.' Rajendra Prasad was one of these men<sup>3</sup> and subsequently grew to be foremost among them. Simplicity, erudition, judicious temper, high sense of moral values and self-restraint were his natural qualities and to them he added the capacity to make peace between conflicting interests, learnt in the august company of Gandhi, whom he closely watched and admired 'as a negotiator and peacemaker'<sup>4</sup> and from whom he along with others had 'the first lesson of self- help and self- reliance' as well.<sup>5</sup>

Prior to Champaran movement Bihar had little political clout and was likened to 'a pool of stagnant water.'<sup>6</sup> Not many Biharis had been attending the annual sessions of the Indian National Congress but thereafter the province 'swung powerfully into all India politics'<sup>7</sup> and Rajendra Prasad became its most sought after leader. Gandhi was catapulted to the centre-stage of the Indian

politics when to protest on his call against the 'unjust, subversive and destructive' Rowlatt bills and subsequent atrocities in Punjab many parts of the country including Bihar participated in the Satyagrahs, to which was added the Khilafat question, and the two together provided the background for the movement of non-cooperation.<sup>8</sup> Bihar took part impressively in all the programmes of the movement but Rajendra Prasad at one stage lamented the lack of sincerity for Satyagraha and when asked by Gandhi to suggest names of Satyagrahis from Bihar he felt that except him very few would do what Gandhi wanted.<sup>9</sup> However, Rajendra Prasad and other helpers of Gandhi at Champaran worked 'to break out of the confines of elitist politics'<sup>10</sup> during the non-cooperation movement.

The idea of non-cooperation rested on the premise that the British- rule depended 'on the active collaboration of some Indians and the acquiescence of the rest,'<sup>11</sup> and if the Indians ceased to cooperate it was bound to collapse. To ensure this collapse was designed the movement that demanded from its adherents the surrender of titles and distinctions conferred by the government along with resignation from honorary offices and government jobs, the boycott of elections to the provincial legislatures, severance of 'connections with the government and government aided educational institutions and boycott of courts. Besides, starting no-tax campaigns, establishment of national schools, setting up of panchayats, propagation of spinning wheel and boycott of foreign cloth and propaganda for prohibition also formed part of the movement.<sup>12</sup> The Khilafat Committees had already been established all over India to protest against the dismemberment of Turkey and danger to Khilafat. Muslim leaders like Maulanas Shaukat Ali, Mohammad Ali and Abul Kalam Azad supported these programmes with religious fervour and undertook countrywide tour in connection with both the movements. It was at a meeting of Khilafat committee held in Allahabad in April 1920 that Gandhi placed before the country for the first time his aforesaid programme of non-violent civil disobedience.<sup>13</sup> What is, however, relevant to point out here is that Rajendra Prasad despite his personal debilitating situation and certain ideological reservations proved to be one of the sincerest practitioners of these programmes.

To begin with he had 'to face a piquant situation when at a public, meeting in Patna in April 1920 Maulana Shaukat Ali enquired from the people how far were they prepared to follow the non-cooperation programme and in the same breath also asked Rajendra Prasad to speak on the subject and though the latter, who had previously thought over the issue but was not yet decided with any degree of certainty, got up and with calm determination declared his readiness to join the movement as soon as it was launched. He did so in spite of the fact that he intended to enter the state legislature and had been nursing the Champaran constituency with this aim but with this new development he might have to forsake that idea. This would also mean giving up his practice at the bar. He had not consulted his brother about all this but as he himself said, 'the die was cast.'<sup>14</sup> There was no looking back. In August the 12th session of the Bihar Political Conference under his presidentship voted for accepting the non-cooperation scheme even before any decision in the matter had been taken at

all India levels. In his presidential address in Hindi Rajendra Prasad made a bold appeal. A number of other leaders like Brajkishore Prasad, Dharnidhar, Mazharul Haq, Shah Muhammad Zuber, Mohammad Shafi, Nurul Hasan et al also advocated the cause forcefully in their addresses but prominent Muslim leaders like Hasan Imam, Sarfaraz Hussein Khan and others were ranged against it. This was perhaps an indicator of what Jinnah was to do at the special session of the Congress at Calcutta from 4 to 9 September 1920. He voted against Gandhi's resolution on non-cooperation.<sup>15</sup> To get back to the narrative of the August meeting of the Bihar Political Conference it is worthwhile to mention that Rajendra Prasad chose to speak in Hindi, against the established practice of speaking in English, for the benefit of the large number of peasants from the rural areas who had gathered to attend that meeting. He also pacified many of those who had reservations about non-cooperation. The Conference also resolved to urge the government to take care of the rising prices in order to relieve popular distress. This was apparently incompatible with the principle of non-cooperation<sup>16</sup> but probably not really until the government had decided to non-cooperate with those whom it governed. The Conference was significant in yet another respect. On the suggestion of Braj Kishore Prasad the demand of Swaraj was added to the demands for justice in the Punjab and for restoring the Khilafat of the Muslim world. Only Gujarat Provincial Political Conference had resolved to accept non-cooperation programme earlier than Bihar<sup>17</sup> but the latter was somewhat ahead and innovative in its methods and ideas.

Rajendra Prasad indeed grew in an atmosphere that was responsible for defining his role, along with some others, during the non-cooperation movement. Throughout much of the nineteenth century the imperial government had been a distant autocratic entity that played a limited part in the lives of the most of the Biharis.<sup>18</sup> From the last quarter of that century the extension of representative institutions vide the Acts of 1882, 1909 and 1919 led to the linking of local politics with wider imperial structure and the latter becoming obtrusive factor in the former. The grant of such concessions was however, slow and largely unsubstantial resulting in breeding animosity rather than support for the authority. Moreover starved of funds owing to ill-advised Permanent Settlement and also because of the expenditure on ensuring peace in the districts<sup>19</sup> the British rule could hardly do anything worthwhile to strengthen the public utility services and thereby win popular support, albeit they had raised popular expectations through their interventions in local politics. The separation of Bihar from Bengal also didn't mean much to the people at large many of whom had little idea of the jurisdiction that they belonged to.<sup>20</sup> Nonetheless, it created opportunities for higher castes, middle class and educated people for advancement of their professional and public activities. They were no longer required to face, unequal competition from skilled and educated Bengalis. The hitherto sleepy Patna now with a university, high court, secretariat and some other institutions attracted young Biharis in place of Calcutta as new centre of education, job and career advancement. The Congress in Bihar till then was a 'hollow business' that was 'run by half a dozen wire-

pulers' and its 'audience consisted chiefly of the junior bar.'<sup>21</sup> It was indeed dominated by zamindars and lawyers.<sup>22</sup> However, the situation began to change and the numbers swelled increasingly from around 1919.<sup>23</sup> The merchant, rich peasants and small landlords of rural Bihar began to join it overwhelmingly. Rajendra Prasad, a law graduate from Calcutta, was the son of a small landlord from Saran but had set up his practice at Patna and joined the urban professionals who supplied the legal, educational and other such services to the rural elite. The Montagu-Chelmsford reform further increased this mutual dependence by expanding the electorate to include substantially the rural and urban middle classes and ensuring their control and influence over local government.<sup>24</sup> There were also the peasants and their leaders who had participated in the agitations led by peasant organizations and had grown sufficiently militant before they joined Congress.<sup>25</sup> Others who joined this handwagon were the smaller players of Bihar politics who had the realization that they did not stand any good chance in elections against big landlords and other influential persons.<sup>26</sup> It is to this section of the society that Rajendra Prasad refers to when he says that the Congress meeting at Bhagalpur town in 1920 was largely drawn from outside the professional classes and it were they who voted enbloc in favour of the non-cooperation resolution.<sup>27</sup>

Be that as it may, the events relating to the non-cooperation started moving rather fast. On 1 August 1920, Gandhi surrendered his decorations to herald the beginning of the movement<sup>28</sup> the resolution on which, however, was passed in the special session of the Congress at Calcutta from 4 to 9 September 1920 and confirmed in the annual session at Nagpur in December. Several candidates for the elections under the Montford reforms withdrew their candidature. Rajendra Prasad in accordance with his commitment turned away from the elections and toeing the line of Gandhi argued that the council entry was futile as it could never secure the revision of the Turkish terms, nor could it right the Punjab wrongs.<sup>29</sup>

On the question of quitting the bar he was worried about the fact that in doing so he would be leaving the entire burden of family expenses on his elder brother who didn't have more than meager resources at his command. His another concern in this connection was his commitment to see through the long drawn Hariji's case at Arrah and some of the briefs at Patna High Court against which he had accepted remuneration in advance. After discussing with his friends he decided to quit and thereafter did not appear in any other case except Hariji's though in principle he had made up his mind riot to leave the work of his clients incomplete even at the risk of being misconstrued by some as an excuse for continuing his practice.<sup>30</sup> It were only his moral values that led him to consider the ethical aspect in deserting his clients.

A more serious matter, that engaged his attention, was the boycott of the government and government aided school and colleges. He already had the experience of the boycott of the government educational institutions in Calcutta during the anti-Bengal partition movement and on that basis he felt that this might not succeed until and unless some alternative avenues of employment

were made available to the students boycotting government institutions. Honest as he was, he also wanted the students to be made aware of the curtailment of the employment prospects and accompanying privation and suffering before proceeding with this programme of boycott. Nevertheless, when some enthusiastic workers started a national college at Patna and pressed him to join the same as Principal, he dismissed his thought as outgrowth of his overcautious approach and accepted the offer. His approach was actually the reflection of the reality that in India during those days, as to a very great extent even today, the education was merely a means of earning one's livelihood. Moreover, by its very nature the English education rendered people unworthy of anything except joining government service or one of the professions like law or medicine. With the growth of educated population employment opportunities had progressively decreased. Rajendra Prasad, therefore, wanted the boycott of the English schools first and, depending on the response, opening of national institutions later. There were, however, others who felt that availability of alternative institutions right from the beginning was necessary for making boycott a success. They prevailed and soon two hundred primary national schools were set up and fifty secondary schools were linked with the national college. At this stage Gandhi forcefully put forward his proposal for establishing a national university and helped in collecting funds for the same. Mazharul Haq made over his bungalow and adjoining campus at the outskirts of Patna known as Sadaquat Manzil, which after sometime was rechristened as Sadaquat Ashram, to the university known as Bihar Vidyapith. Mazharul Haq became its Vice-Chancellor. The national college was also shifted to this campus and it became Rajendra Prasad's abode for next twenty five years. The students were housed in the palm-leaf huts in the mango-grove there. 'From a desolate place the area was converted into a garden sprinkled with huts and pulsating with activity.' He resigned from the membership of the senate and syndicate of the Patna University to lend meaning to the boycott. There was unprecedented enthusiasm among the students who boycotted the government educational institutions.<sup>33</sup> Gandhi appreciated the work of Rajendra Prasad and others and asked the teachers to work sincerely so that the students who came from government institutions did not feel cheated.<sup>34</sup> The experiment successfully went on and by June 1921 Bihar had 41 high and 600 primary and middle national schools catering to the needs of 21,500 pupils.<sup>35</sup>

One thing that stands out very prominently is that not only Rajendra Prasad but all concerned in his family responded splendidly to the multiple boycott calls. His brother renounced his title of Rai Saheb conferred on him for his work in the cooperative movement and resigned his honorary magistrateship. He, however, decided to hold on to his membership and Vice-Chairmanship of the Chapra Municipality as he was there by virtue of being the elected representative of the people. His son Janardan and Rajendra Prasad's sons Mrityunjay and Dhananjay were withdrawn from their respective educational institutions never to enter government institutions ever again. Rajendra Prasad wrote, "Our family was thus able to implement the non-cooperation programme to the full."<sup>36</sup>

On 5 October 1920 the Bihar Pradesh Congress Committee appointed a sub-committee to oversee the implementation of the non-cooperation programmes with Mazharul Haq, Rajendra Prasad, Brajkishore Prasad and Mohammad Shafi as members. Meetings of the sub-committee were held in October itself in Gaya, Daltonganj, Hilsa and Khusrupur and in November in Barh, Arrah, Bakhtiarypur and Dumraon. Rajendra Prasad 'toured the entire length and breadth of Bihar in 1920 and for the first time..... saw the whole province and made innumerable contacts.' He spoke with utmost confidence in the meetings and the little amount of hesitation and shyness left in his public speaking inspite of his considerable experience in the art of speaking at the bar was soon gone. He spoke in Bhojpuri in the Bhojpuri areas and in Hindi in other areas. Once he even addressed a meeting in Bengali in Purulia. He was indeed a multilingual person who learnt Persian, Urdu, Hindi, English and Sanskrit at different stages of his career.<sup>37</sup> He usually encountered audience of 5 to 20 thousand but once in Hathuah he had to address a meeting of over 50 thousand people, who had gathered in pursuance of rumour that Gandhi would address the meeting, and all this often without the help of loudspeakers which were then not much in vogue and also at the cost of straining his stomach. He also toured outside Bihar particularly when he was required to accompany Gandhi.<sup>38</sup> When the non-cooperation movement began he could hardly keep his wife with him or go to see her in his village. Such was his preoccupation as left him little time for his personal work.<sup>39</sup>

Gandhi's visit to Bihar in December 1920 stirred the minds of the people.<sup>40</sup> The masses were getting bold and the prestige of the Government among the people was declining fast.' The government was in a tight spot. It was having telling effect on its excise revenue particularly owing to the campaign against the evil of drink.<sup>41</sup> But more than all this the Bihar government was appalled to see the largely attended meetings and threatened to invoke the Seditious Meetings Act if the trend continued.<sup>42</sup> It indeed suggested to the Government of India to extend the said Act to Muzaffarpur in view of the lootings of the weekly village hats (markets) on a large scale there. Such incidents took place in Darbhanga, Champaran and other districts also. The central government did not agree to the proposal and wanted the situation to be dealt under the provisions of ordinary laws. 'Under section 107 of the Criminal Procedure Code many were called upon to furnish security for good behaviour or, in default, to suffer imprisonment. Section 144 Cr.P.C. was also imposed, banning processions and meetings. Many went to prison and furnished security.' Rajendra Prasad was himself served a notice under-section 144 when he went to Arrah to address a meeting there as that might disturb the students appearing at the ongoing matriculation examination on the 17th February 1921. Newspapers flashed the matter and a question was asked in the council about the advisability of such action particularly when Rajendra Prasad was held in high esteem by the people of Bihar and any interference with his liberty was likely to stir up unnecessary bitterness and rouse a feeling of profound indignation.<sup>44</sup> Law-abiding as he was he himself relented and addressed a hastily arranged meeting somewhere outside Arrah town on schedule but showed his commitment by addressing

another at the original venue in the town after 5 p.m., the time limit for the operation of section 144.<sup>45</sup> The case of Rajendra Prasad is somewhat different but when prosecutions began the leaders organized public meetings of protest, made 'violent appeals to social and religious prejudice' and hailed 'as martyrs the so-called victims of prosecution.' This led to the power of the crowd increase immensely so much so that when the police undertook to investigate a certain charge of outraging the modesty of women by the non-cooperators in Saran the policemen were beaten up by the crowd and they could be rescued only after the arrival of a detachment of armed force. In few other cases some Europeans visiting a fair near Muzaffarpur were roughed up, the District Magistrate of that district was disarmed, attempt was made to beat up a planter and servants of his factory, two peons of a factory were even murdered in retaliation to their attempt to realise rents from unwilling raiyats; liquor and cloth shops were picketed, deliberate attempts were made to arouse the people against the Europeans and so on.<sup>46</sup> The police thought that the Congress workers were responsible for these events. In their reckoning they in fact wanted to extract economic advantages out of these.<sup>47</sup> There were others who thought these were fundamentally sentimental outbursts<sup>48</sup> aided by messianic expectations of people arising out of Gandhi's ascending status as a mahatma and a divine entity. The people came to have unshakable faith in the proposition that under Gandhi's Raj the necessities of life would be much cheaper.<sup>49</sup> The trend towards violence worried the Congress leaders<sup>50</sup> who never wanted to encourage disrespect for private property and wanted to prevent everything that might create chasm within the Indian community. Rajendra Prasad made statement to deny the hands of the congressmen in the incidents of hat lootings and other acts of violence. He, however, conceded that some unscrupulous supporters of Congress might have done so.<sup>51</sup>

Meanwhile the Working Committee and the AICC, met at Vijayawada from 31st March to 15th April 1921 and decided to defer the movement for sometime but wanted the congressmen to fulfil its demand of one crore rupees for the Tilak Swaraj Fund,<sup>52</sup> enrolment of one crore primary members of the Congress party and making twenty lakhs of charkhas or spinning wheels operational.<sup>53</sup> Bihar's response to these demands was prompt and encouraging. Rajendra Prasad moderated proportionately Bihar's contribution and appealed to the congressmen to collect two lakhs of rupees and enroll two lakhs members and start operation of forty thousand charkhas in the province during the Satyagraha week commencing on 6 April 1921. He asked the reliable volunteers to visit every house and appeal to every man and woman to become a member of the Congress and contribute to the Tilak Swaraj Fund. The Satyagraha day on 6 April was observed in a befitting manner with complete hartal in Patna.<sup>54</sup> As a result of these exhortations a sum of 7th lakh rupees was collected, a little less than one lakh members enrolled and a large number of charkhas introduced.<sup>55</sup> By June 1921 a total of 48 depots had been set up in eleven districts of Bihar to distribute cotton and charkhas.<sup>56</sup> Rajendra Prasad's involvement in all this was singular.

In order to make the programmes relating to non-cooperation reach the masses effectively he also took up editing a Hindi weekly *Desh*, that had just been started. It soon built up a good circulation but ran into loss because of the weaknesses of the management. Simultaneously he also worked as a member of the editorial board of the 'Searchlight', an English bi-weekly published from Patna. These papers served well the nationalist cause during the non-cooperation movement. Indeed the non-cooperators often felt like putting across their side of the story to counter the mischievous news items carried on in other sections of the media.<sup>57</sup> Thus, the time of Rajendra Prasad was now divided between the national college, the newspapers *Desh* and the *Searchlight*, and mobilising the masses for the movement.<sup>58</sup>

The A.L.C.C. met in Bombay in July 1921 to evaluate the situation and though it was found overall satisfactory and conducive for playing the trump card of satyagrah yet Gandhi counseled some more patience and keep on popularising spinning and the boycott of foreign cloth upto September 30. The Government announcement of the visit of the Prince of Wales to India in the ensuing winter, however, brought Satyagraha nearer. The visit in fact had been planned to recreate the impact of King Geiorge V's visit that had soothened the hurt feelings of the people during the anti-Bengal partition agitation, but the Government was thoroughly mistaken as this time the Congress decided to add the boycott of the visit to the many boycotts already at work. This happily contributed to mutual trust and cordiality between the Hindus and the Muslims as well<sup>59</sup> but overall communal unity in the country received a severe jolt because of the Moplah rebellion that began against the Government and took the ugly turn of attacki, killing and forcibly converting the Hindus who also retaliated by organising their campaign of conversions. The communities, however, eventually exhibited complete unanimity in boycotting the visit of the Prince of Wales.<sup>60</sup> This, nevertheless, led to the government unleashing another round of repression in the wake of a major disturbance erupting out of protest against some Parsis who participated in the official function to welcome the Prince in Bombay. This had led to the loss of lives of 50 to 60 people and injuries to over 300 in December 1921. The congress responded by organizing *Sevak Dais* or volunteers corps whose members were required to swear adherence to non-violence in thought, word and deed and to accept its discipline in order to avert a repetition of the Bombay incident, but the Government could not appreciate the gesture of the Congress, banned the *Sevak Dais* and arrested its leaders. Large scale arrests were made in Bihar too. The police swooped on the office of the Provincial Congress Committee in Chapra and put an entire meeting, in which Rajendra Prasad was participating, under strict surveillance. Undaunted he along with BrajKishore Prasad and Mazharul Haq condemned the repressive measures of the government and encouraged the people to enroll in the *Sevak Dais* and declared themselves to be the members of the same. In the meantime the Congress Working Committee on 5 October 1921 had met in Bombay and appealed that the government employees, military as well as civilian, should withdraw from their respective services. Rajendra Prasad along

with some others had already signed manifesto only a day earlier urging the people to do the same. The manifesto also laid down the thesis that any movement without violence was nothing more than 'a propaganda movement of the purest type' and, therefore any attempt to crush it was 'an attempt to crush public opinion.' The repression against the non-cooperation movement was just that.<sup>61</sup>

On 28 August 1921 the B.P.C.C. in its meeting hoped that despite official threats and over zealousness the people would continue the propaganda of Swadeshi and by 30 September the complete boycott of foreign goods could be achieved.<sup>62</sup> In his addresses he used to say that swadeshi was linked with swaraj as it shook the very foundation of economic exploitation of the Indians. He believed that 75,000 Karghas or looms, each one producing eight yards of cloth together with the indigenous mill-made clothes would suffice for the people of the province. The weavers and cloth merchants met at Patna City and assured the Congressmen that they would not buy foreign raw thread anymore. They listened to Gandhi's advice to clear their foreign stock even at a loss and push the sale of Indian clothes.<sup>63</sup> Many merchants of Monghyr and Bhagalpur decided no more to deal in foreign cloth.<sup>64</sup>

As regards the nature of the non-cooperation movement it is said that it appeared to be 'a chameleon campaign', taking colour from its surroundings as it was shaped in each locality.<sup>65</sup> In Bihar it received impetus from the Khilafat movement and interacted with anti-indigo and anti-Darbhanga Raj Protests. Indeed, it provided 'a vehicle for the expression of a variety of discontent's'.<sup>66</sup> The case of Swami Vidyanand was peculiar. He engineered an agitation against the Darbhanga Raj and simultaneously supported the non-cooperation movement but opportunistic as he was he ran in November 1920 elections as well. The Congress call for electoral boycott went in vain in preempting Vidyanand's adventurism but certainly the voters could be dissuaded from participating in those elections to a great extent<sup>67</sup>, albeit the electorate in 1920 comprised less than 2% of the adult male population only. The point, however, to be looked into here is that the Congress sought social harmony and wanted to forge landlord peasant unity against the colonial rule and it was in this backdrop that Rajendra Prasad did not favour a confrontation with the zamindars at this juncture.<sup>68</sup> Indeed Gandhi also very much wanted to keep the peasant movement separate from the non-cooperation movement -albeit the former had received impetus from the latter.<sup>69</sup> In any case there was considerable support for the non-cooperation movement in Bihar and the small landlords and rich peasants were in the vanguard and they subsequently rallied support from among their clients and retainers within the village society.<sup>70</sup>

Otherwise also the movement kept on progressing in Bihar. Big and small meetings were held, liquor shops picketed and propaganda against non-payment of chaukidari tax made. Kilafat meetings were also held. The movement continued in Bihar even after it was called off in the wake of the Chauri Chaura violence but now it remained confined to pursuing the constructive programme. Rajendra Prasad led the movement from the front and he steadily became to

Bihar what Gandhi was to India - the friend, philosopher and guide. He was one of the truest followers of Gandhi. He spoke in the characteristic manner of Gandhi that nothing short of swaraj was acceptable to Indians who would not brook a recurrence of the Punjab and Khilafat wrongs. He defined swaraj as the government of the people. He explained satyagraha as the weapon of the righteous people. A satyagrahi, according to him, had to be unwavering, non-violent and ready to suffer for any noble cause. It was basically a movement for self-purification. He considered non-cooperation movement even more important than satyagrah because in its constructive aspect it could lead to miraculous regeneration. Illustrative of it was the fact that if fifty lakhs of charkhas were pressed in service Bihar could save about sixty crores of rupees.<sup>71</sup> Gandhi praised the good work done in Bihar in connection with non-cooperation and he felt that its leaders, he particularly mentioned Rajendra Prasad in this connection, comprehended the true spirit of the movement.<sup>72</sup> In fact, the latter acknowledged Gandhi's overwhelming influence on him and he had the satisfaction that he could develop the ability to avoid bitterness and conflict in whatever he spoke or wrote.<sup>73</sup>

#### References & Notes

1. Rajendra Prasad (1949), *Satyagraha in Champaran*, Ahmedabad, p.x (Foreword).
2. *Amrit Bazar Patrika* (1917), editorial, 23rd April.
3. Others were Brajkishore Prasad, J.B.Kripalani, Ramnaumi Prasad, Anugrah Narayan Singh, Vindhyavasini Prasad, Dharnidhar, Shivanandan Ray and Gorakh Prasad.
4. Rajendra Prasad (1957), *Mahatma Gandhi and Bihar some Reminiscences*. New Delhi, p.20.
5. *Satyagraha in Champaran*. op. cit., p.188.
6. *Bihar Times* (1900). 5 Jan.
7. J.C.Jha (1985), 'The Khilafat and the Non-Cooperation Movement in Bihar (1919-22),' P.N. Ojha (ed.) *History of the Indian National Congress in Bihar 1885-1985*, Patna, p.188.
8. J.M. Brown (1972), *Gandhi's Rise to Power : Indian Politics 1915-22*. Cambridge, p.216.
9. Fortnightly Report, Bihar and Orissa (1919), 1 June, Home Political 49, July; and 1 July, Home Pol. 51/61, Aug., *Bihar state Archives*.
10. Brown, *op.cit.*, p.276.
11. *Ibid.* pp. 307-08.
12. Tara Chand (1971), 'The Story of the First unarmed Revolt', *1921 Movement Resminiscences*, Delhi, p.2,5.
13. *The collected works of Mahatma Gandhi*, vol. XVIII, Delhi, p. 484.
14. Rajendra Prasad (1957), *Autobiography*, Asia Publishing House, pp.111-12.
15. *Mahatma Gandhi and Bihar*, *op.cit*, pp.38-42.
16. *Ibid.*, p.116
17. *Ibid.*, pp. 115-124 33 *Ibid.*, p. 117

18. Anand A. Yang (1970), 'The Agrarian Origins of Crime : A story of Riots in Saran District, India, 1866-1920'. *Journal of Social History*, XIII, 2, Winter.
19. Anil Seal (1973), 'Imperialism and Nationalism in India', Gallagher, Johnson and Seal (ed.) *Locality, Province and Nation*, Essays on Indian Politics 1870-1940, London.
20. F.Tomasson Jannuzi (1974), *Agrarian Crisis in India. The Case of Bihar*, New Delhi, pp. 107-116.
21. *Mahatma Gandhi and Bihar* (1917), op.cit., p. 46. Also see, Gati to Vineent, 6 Aug. 1917, Home Pol., file no.47, Oct., N.A.I.
22. K.K. Datta (1957), *History of the Freedom Movement in Bihar*, Patna, vol. I, Appendix VII.
23. Brown, op.cit., pp. 78 and 267-68.
24. H.F. Owen (1971), 'Towards Nationwide Agitation and Organization : the Home Rule Leagues, 1915-18,' D.A. Low (ed.), *Soundings in Modern South Asian History*, London, 1968 and 'Organizing for the Rowlatt Satyagraha of 1919.,' Ravinder Kumar (ed.), *Essays on Gandhian Politics : The Rowlatt Satyagraha of 1919*, London.
25. Brown, op.cit., p.40.
26. Ibid., pp.253, 260 and 26.
27. *Mahatma Gandhi and Bihar*, op.cit., p. 40.
28. D.G Tendulkar (1951), *Mahatma (Life of Mohandas Karamchand Gandhi)*, Vol. II, Bombay, p.1.

Gandhi's decorations included the gold medals he had got 111 South Africa.

29. J.C. Jha, op.cit., p.205.
30. *Autobiography*, op.cit., pp. 114-15
31. Ibid., p.116
32. Ibid., pp.115-124
33. Ibid., p.117.
34. Among the distinguished teachers of Bihar Vidyapith were Jagat Narain Lal, Badrinath Verma, Mathura Prasad, Jagannath Prasad, Prem Sundar Bose, Ram Charitra Sinha and Abdul Bari.
35. Sumit Sarkar (1983), *Modern India. 1885-1947*, New Delhi, p.221.
36. *Autobiography*, op.cit., pp. 125-26.
37. Kewal L. Pajabi (1960), *Rajendra Prasad : First President of India*, Macmillan, pp. 18-19.
38. *Autobiography*, pp. 127-28.
39. Ibid., p.23.
40. *Mahatma Gandhi and Bihar*, op.cit., p.42.
41. *Autobiography*, op.cit., pp. 133-34.
42. Govt. of Bihar and Orissa (1921), Political Special, File No. 144 of, B.S.A.
43. *Autobiography*, op.cit., p.133.
44. Govt. of Bihar and Orissa (1921) Political Special, File no. 98 of, B.S.A.
45. *Autobiography*, op.cit., pp.134.

46. Chief Secretary, Govt. of Bihar and Orissa (1921), to Secy., Home Dept., Govt. of India, 10 Dec., no. 4618-c, *File no. 441 of N.A.I.*
  47. Macral (1921), D.LCx Police to the Chief Secy., Govt. of Bihar and Orissa, 20 Jan., *Pol. Spl., File no. 21 of B.S.A.*
  48. Forrest (1921), Commissioner, Tirhut to Rainey, Chief Secy. Govt. of Bihar and Orissa, 2 July, *Pol. Spl. File no.37, B.S.A.*
  49. Commissioner, Bhagalpur to Chief Secretary (1921), 1 June, *Pol. Spl. File no. 184, B.S.A.*
- Also see, Shahid Amin, Gandhi as Mahatma: Gorakhpur District, Eastern U.P., 1921-22, Ranjit Guha(ed), Subaltern Studies : Writings on South, Asian History and Societies. vol.3. O.U.P, Delhi, 1984, pp.61.
50. Report of S.P of Champaran (1921), 23 April, *Pol. Spl. File no. 37, B.S.A.*
  51. *Autobiography, op.cit., p.133-34.*
  52. B.G Tilak died on 1 August 1920 and the Congress decided to raise a memorial fund to commemorate him.
  53. *Autobiography, op.cit., p.128.*
  54. The Searchlight (1921), Patna, 8 April.
  55. J.C. Jha, *op.cit., pp. 217-18.*
  56. Sumit Sarkar, *op.cit.*
  57. J.C. Jha, *op.cit., pp. 199.*
  58. *Autobiography, op.cit., pp. 131-32.*
  59. *Ibid., pp. 137-38.*
  60. *Ibid., pp. 140-52.*
  61. The Searchlight 1921, 31 Aug.
  62. J.C. Jha, *op.cit., p.227.*
  63. Spl. Branch Police report (1921), 7 Aug., Govt. of Bihar and Orissa, *Home Pol. File no. 430 of, B.S.A.*
  64. H.D. Craik to Chief Secy. (1921), Govt. of Bihar and Orissa 23 July, D.O. no. 228, *Home Pol. File no. 400 of, B.S.A.*
  65. Brown, *op.cit, p.322.*
  66. S.Henningham (1982), *Peasant movement in Colonial India : North Bihar 1917-1942*, Canberra, p.74.
  67. Govt. of Bihar and Orissa (1920), RR. (1) Dec., *Pol. Spl. file no. 8, B.S.A.*
  68. S. Henningham, *op.cit., p.76.*
  69. J.C. Jha, *op.cit., p.200.*
  70. *Ibid., p.227.*
  71. Chief Secy. (1921), Govt. of Bihar and Orissa to Secy., Govt. of India (Home Dept.), 10 Dec., no. 4618-c, *File no. 441 of, N.A.I.*
  72. *Young India* (1921), 2 March.
  73. *Autobiography, op. cit., p.153.*

# A Historical Study of Socio-Cultural Change in Pre-Independence Mithila

---

---

Dr. Madan Paswan

*Sunderpur Bira (Manth Pokhar)*

*P.O. Vasudevpur, Dist. Darbhanga, Bihar*

Mithila is the name of that part of the state of Bihar which is bound on the north by the Himalayas and on the East, South and the West by the rivers Koshi, Ganga and Gandak respectively. It influenced and shaped the Socio-political thoughts of ancient India. Mithila was the seat of learning, civilization, chivalry and diplomacy. Thus in the History of human thought Mithila has carved out a place of unique distinction. The geographical features of this area, assuring a certain amount of security and seclusion are responsible for the evolution of Mithila culture. The geographical situation has given an almost unbroken continuity of life and pattern of culture since time immemorial. It is a typical example of the influence of geography on History and culture of a land. What George Abraham Grierson in respect of Darbhanga is true of entire Mithila. He says "The climate is responsible for the characteristic ease loving complacent attitude and excessively talkative character of the people. Naturally, therefore, philosophic discussions and erotic poems found a fertile soil in the district where people are allergic to hard work. The people are generally of a high keen intellect and are well adept in conversations".<sup>1</sup> The simplicity in habit, minimum need in livelihood, high thinking in character and fertile ground for the growth of philosophic thought like Mimamsa, Nyaya and other eternal philosophies of life. Mithila stands out as a typical one. It has always been the seat of high cultural attainments.

Moreover, the region is known for strict caste hierarchy and cast consciousness, outmoded, theatrical aptitude, unproductive art and craft, feudal leadership, all of which made the region characteristic case waiting for rejuvenation and resurgence.

Human life is an organic whole, it requires for its absolute happiness as much political and economic liberty as a liberal society, free from orthodoxy, taboos, superstitions and dogmas. It is, therefore, only natural that the work of social reform should go side by side with political and economic uplift. There can not be political upsurge or sound economic system where the social arrangements are imperfect.

The politics and society are interdependent. One cannot separate the fragrance from the rose and if one will try to do so, both will be destroyed. Similarly one can not separate the relation of politics with society and culture. This interdependence is not like accidental but as Hegel, Comte and Spengler

believe, it is the law of our nature and the lessons of our history,<sup>2</sup> Like the member of our body, we can not have strength in the hands and the feet if our internal organs are in disorder. What applied to the human body holds good of the collective humanity, we call the society.<sup>3</sup> Roman Empire fell to pieces not because its administrations were inefficient or its finances were weaker than those which overpowered it, but because there were really no sense of national life and cultural identity in the community. Society is a changing thing. It takes its changing shape accordingly. Hence the first duty of a reformer is not to revolutionise but to lop off the diseased overgrowth and excrescences and to restore vitality and energy to the social organism. The purpose of the socio-cultural reform is to produce a favourable effect on the mind of the whole community and in practice to move only so much forward as was possible without losing contact with the main mass of society. The present paper is an attempt to trace the Circumstances leading to the rise and growth of socio-cultural organisations, institutions and work of reformers and to evaluate their contributions to society and cultural life of pre Independence Mithila.

The influence of western education, its professional nature and the impact of modern concepts about social equality and justice, individual freedom and the place of religion in life have brought about in the course of time the series of remarkable changes in the customs, manners, beliefs in the general sense of values in Mithila Society. The pace of change has been further accelerated and its direction crystallized by the operation of the new economic forces which is a result of the introduction of mechanical power. This revolutionized the methods of production, gave rise to large concentrations of population in Urban area. As in other spheres of life so also in social and religious matters, this region has also come out of a more or less static spell. This pace has, however, been slow because of the traditional aristocracy, which had been able to keep Mithila in a sort of cultural isolation to a great extent. This is the reason why the Buddhism, Jainism and the Christian missions have not been able to go ahead in this area. The *Maharajadhiraj* is still regarded with a certain amount or religious fervour as the Mithila Naresh and is looked up to for all social and religious matters. Naturally the hold of the traditional customs and religious obligations is yet far too deep. It is rightly said that the purpose of socio-cultural movement cannot be evaluated, or the actions of members understood, unless we clearly perceive the back ground of the society against which they play their part.<sup>4</sup> The major part of the customs of this region consists of ritualistic practices related to various ceremonies known as *Sanskaras*. These ceremonies are conducted under the directions of *Brahmin Pandits*. The chief of these customary rituals are those of birth, thread girding, marriage, pregnancy and death.

### **Work of Darbhanga Raj**

At the beginning there was no class of social reformers in Mithila, local Zamindar i.e. Darbhanga Raj took to uplift the people of Mithila. Maharaja Lakshmishwar Singh of Darbhanga was the champion of social progress and development. As a matter of fact not in Mithila but in the whole of Bihar, social

changes could be possible only when they got recognition from both the local chiefs and Pandits, Wherever a crisis arose the common people looked up to their local Zamindars for the lead. Maharaja Lakshmishwar Singh came forward to modernise the whole social life of Mithila after he ascended the throne in 1879. His education through English removed peoples fear of English education on the ground of religion. Maharaja upgraded the existing Raj Anglo-Vernacular school to the matriculation standard and made it a free institution. Preference in Raj Service was given to scholars from the Raj educational Institutions.<sup>5</sup> There were a number of free Raj middle schools in different parts of the estate. Maharaja besides creating numerous schools offered the award of ten gold medals in 1881 to the students of Patna Division who successfully passed in examination of the Calcutta University. It unfolded the vista of a new world and sowed the seeds of an intellectual revolution pregnant with far reaching consequences. In response to Lord Bentinck's famous resolution of 1835, Maharaja Rudra Singh of Darbhanga donated Rs. 5000/- to first Anglo-vernacular school of Muzaffarpur. He also gave land on which the school was built.<sup>6</sup> "An attempt for establishing an English school at Darbhanga was made in 1861 by James Forlong, general manager of Darbhanga Raj.<sup>7</sup> After some years it became purely Raj School and its expenses being met entirely from the Darbhanga Raj.

The Bengali residents had opened a girl's section in the Bengali Middle English School at Darbhanga in the early eighties of 19<sup>th</sup> Century. The secretary of the school approached Maharaja in Feb. 1886 for aid. As this was the first attempt to female education at Darbhanga, it would have been a matter of great pity should the undertaking have to be abandoned for want of funds."<sup>8</sup> The Maharaja sanctioned a monthly grant of Rs 40/- for the school besides the use of the house free of rent."<sup>9</sup>

### **Brahmo-Samaj and Keshav Chandrasen**

The Influence of the Brahmo-Samaj founded on the principles of monotheism by Raja Ram Mohan was felt in the 19<sup>th</sup> Century when keshav chandra sen visited Darbhanga and other parts of Bihar. A branch of the Samaj was started at Darbhanga. Brahmo-samaj immensely facilitated the amelioration of the condition of women by upholding and working for the removal of the Purdah, for the abolition of Polygamy and early marriage and for the introduction of widow marriage. It also advocated the removal of the rigours of the caste system and supported the growth of Inter-caste marriages.

### **Arya Samaj Mandir**

The Arya Samaja Mandir was established in 1921 at Laheriasarai, essentially a religious institution which aimed at the revival of the vedic culture. Its founder Dayanand Swami laid a good deal of stress on social service. The Arya Samaj at Laheriasarai worked for widow-marriage, inter-caste marriage rehabilitating helpless and abandoned women and children, cremation of unclaimed dead bodies of Hindus etc. The samaj also runs a girls middle school at Laheriasarai and has its branches at Madhubani, Samastipur, Rosera, Bathua, Tajpur, Jainagar and Kamtaul.

The Arya Samaj tried to raise the status of the lower castes and women and to promote the education of women. It opposed child marriage which prevailed in Mithila,<sup>10</sup>. The educational activities of the Arya Samaj led to the condemnation of rigid caste system, untouchability, inferiority of women and the custom of Pardah in Mithila.”<sup>11</sup>

### **Mahatma Gandhi**

Pardah was a great hindrance to female education and it attracted the attention of many leaders including Mahatma Gandhi who had discussed its removal at Champaran and Darbhanga and requested the people to tear down Pardah with one mighty effort.<sup>12</sup> Though the dowry system was itself an evil, yet it removed the evil system of child marriage to some extent. Unable to meet the demands of dowry, many parents were forced to delay the marriages of their daughters and this had automatically countered the practice of Child marriage in the Province.

### **Sadar Committee**

Sadar Committee was set up at Darbhanga in 1876<sup>13</sup> to curtail marriage expenses and to put a stop to the practice of Polygamy, very common among the Maithil Brahmins. The most unfortunate aspect of the system was that by the death of one Bikaua large number of women became widows. Rules were framed for putting solemn promises against their observance by the Maithil Brahmins. Rules for other castes were also framed with the approval of the headmen of the respective castes. Maharaja also donated an annual subscription of Rs 1000/- and gave suitable rent free house to the Sadar committee for running its offices at Darbhanga. Those who infringed the rules were punished by inflicting upon them the social fines as agreed to previously by the Panchayats according to the seriousness of their offence. The main proposal of the famous age of Consent Bill of 1891 was that the intercourse with wife under 12 years of age should be made penal and that in cases of infant marriage, the bride should be entitled to repudiate the marriage, if she so desired, on attaining maturity. Maharaja supported the move in the Supreme Legislative Council and considered it to be a very sensible measure “the growth of a Virile nation.”<sup>14</sup> Though the sea voyage was opposed by the injunctions of the Shastras, Maharaja supported the cause of the sea voyage.

### **Social Service Organisation out Side Mithila**

Social service organizations in pre-independence days were mostly voluntary although some of them used to receive state aid. Whenever there was a major crisis like epidemic, flood, famine or earthquake the state govt. came to the rescue of the people and liberally made contributions for relief. The Bihar earthquake of 1934 had ravaged Darbhanga district. The Maharaja of Darbhanga, the central Relief committee under Rajendra Prasad, the Calcutta Mayor’s fund and various voluntary relief organisations rushed their help to this district.

In 1944-45 when there were widespread flood havoc and depredation of kala-a-zar and malaria in this area relief bodies from Bombay had come and worked in the interior of this area. Servants of India Society and Ram Krishna

Mission also rendered help in this crisis. Quite a large number of charitable trusts and endowments were founded by the aristocracy. A purse of Rs 50,000/- was raised and presented to Sir John Rutherford, Governor of Bihar in 1944. Thus the Zamindars and businessmen also discharged their social obligation.

### **The Maharani-Adhirani Kameshwari Priya Poor Home**

The Maharani-Adhirani Kameshwari Priya Poor Home of Darbhanga was established in 1940 with the object to "do social and humanitarian service by bringing about moral, material and educational uplift of the downtrodden people specially destitute persons, beggars, abandoned children, widows and infirm persons, to help the suffering humanity, by providing them with shelter and helping them to pick up independent means of livelihood so as to lead a pure, moral, healthy and happy life."<sup>15</sup> The institution runs a number of sections-general or clinical for the inmates of the Home and seeks to educate public opinion. Propaganda is made by means of charts, Leaflets, Pamphlets, slide films, posters etc.

The school provides technical training in cottage industries to both literate and illiterate Persons, specially the orphans and the destitute children. Training is given in dyeing, weaving and tailoring. Almost all the trainees are the inmates of the poor Home. There is also provision for seven scholarships of seven rupees each per month of poor students. In Blind school, all the inmates are given free board and lodge. They are also given three rupees per month for pocket expenses. The school has also a library consisting of about two hundred religious books and novels in Brail letters. The blind inmates are also given training in cane work and music. There is also a Montessori School where young boys and girls are taught by the means of modern technique.

There is a Netralogy (Eye camp) in its premises. During winter free cataract operations are held by qualified doctors. The eye patients are given free board, lodge and medicine during the period of their treatment. Very poor patients are also given spectacles at a very low price or even free of cost, There is also one social centre for women under the management of the poor Home. This centre receives grant in aid from the central social welfare Board.

### **Yetim Khana Islamia**

This institution was started in 1905 for Muslim orphan boys. It was managed by a managing committee consisting of 13 members with a secretary and one President. The institution provides free board, lodge and necessities of life.

### **Madarsa Ahmadia Salfia**

This institution was affiliated to Bihar Madarsa Examination Board, Patna in the year 1940. It teaches up to the standard of Fazil in Arabic, Urdu and Persian.

### **Madarsa Imdadia**

This Madarsa was established in 1882 at Laheriasarai. This prepares its students for Fazil Examination in Arabic literature only. No tuition fee was charged from Students.

### **Madarsa Hamidia, Quilaghat**

This institution, established in 1880, is one of the oldest in Darbhanga district. In 1962 there were 120 students out of whom 30 students got free board and lodge. It gives free education up to Fazil standards. A number of institutions have recently been sponsored in Darbhanga district with the object of doing social services. They are more or less dependent on government help or on the aid given by Central Social Welfare Board, Bharat Sevak Samaj etc.

### **Sarvodaya Mahila Charkha Samiti**

It was sponsored in 1956 with the object to trained ladies in the craft of Charkha. In the rural area under the National extension programme a number of Mahila Mandals were started. The aims were to literacy centres, social education, teaching craft etc. It started at Musapur, Dumri, Raghapur, Piprahi, Madhwapur, Narhan etc.

### **All India Harijan Sevak Sangh**

A branch of the All India Harijan Sevak Sangh was started at Darbhanga in 1936. The Sangh arranges public meetings and propaganda for removing social evils. An inter caste marriage between a Maithil Brahmin boy and a Chamar girl at a village near P.S. Rosera was solemnised in 1956 through the Sangh. The Sangh has started two co-operative societies in The Municipal areas of Madhubani and Samastipur for the Sweepers. The co-operative societies advance loans at a nominal rate of interest. It also makes propaganda against the consumption of Intoxicants.

### **Akhil Bhartiya Maithil Mahasabha**

Akhil Bhartiya Maithil Mahasabha was a non-political organisation in this region. Its aim was to eradicate social evil among the Maithil Brahmins and karn-Kayasthas. The ruling Maharaja of Darbhanga was its life long president. This organisation was also known in the beginning as Mithila Conference. It was established in 1910 as a result of the Propaganda carried on by the Mithila Mod.<sup>16</sup> "The most common topics for discussion were the problems of spreading modern education in Mithila, the vital need for giving encouragement to the cultivation and preservation of Mithila culture, as well as the overall economic uplift of the people of Mithila. The Maithil Mahasabha disbursed scholarships among hundreds of students every year. It enabled men from all parts of Mithila to meet at a particular place and discuss common problems. It was concerned with the retarded progress of Maithili language and literature, scant use of the Maithili alphabet called Mithilakshar and several other shortcomings of this region. Its first conference was held in March 1910 at Madhubani and passed resolutions that attempts should be made to spread education, that Maithils and Kayastha should avoid polygamy, early marriage and marriage at an old age. It also resolved that the girls should be married at the age of 15 and 16. Although well founded and well managed, this organisation could not become an all acceptable Maithil organisations for several reason. It was an organisation of Maithil Brahmins and Karn Kayasthas and hence it could not bring into its

fold other castes and its membership remained limited. It was a creation of the Darbhanga Raj and naturally it gave foremost consideration to the interests of the Raj.

### **Maithili Sahitya Parishad**

Maithili Sahitya Parishad can be regarded as an important step in the direction of organising for the upliftment of Maithili language and literature, art and culture. No other castes other than the Brahmins and Kayasthas fell concerned for it.<sup>17</sup> In Pre-independence days there were some other organisations coming up. Among them Darbhanga Kshatriya Mahasabha, Akhil Bhartiya Yuvak Samiti-Calcutta, seva sangh, Maithili Samiti, Mithilaksharanakan Samiti etc. These bodies cultivated a sense of rejuvenation among the Maithils. They all belonged to the twenties and thirties of the 20<sup>th</sup> Century.

### **Kayastha Conference**

Kayastha conference was established in 1877 aiming at promoting social development of Kayastha community. The organisation discussed at its sessions questions of child marriage and other social evils, A sub-committee was formed under Braj Kishore Prasad of Darbhanga to enforce the abolition of monetary stipulations in marriage.<sup>18</sup>

### **Newspapers and Journals**

The work of Maithili Journals are commendable. They created an environment for the rise of organisations as well as for giving them some burning problems to discuss. It was in 1905 that Maithili Printing press was started and the first magazine of the region, Mithila Mihir was started in 1907-08 under the patronage of Darbhanga Raj. Outside Mithila Kashi Vidavatan Samiti and Maithili Hitsadhan of Jaipur had started publication of Journals.<sup>19</sup>

Although many organisations and reformers took interest, yet the desired result was not achieved. No doubt Mithila and Maithili have marched ahead from where they were and much has been achieved in the sphere of Social and cultural life, it may be noted that many of the socio-cultural problems were settled.

No organisations and reformers has regular source of revenue. The old organisations were generally receiving contributions from the rich landlords. There were no membership contributions. This affected adversely the implementation of the resolutions passed at the annual conferences. Lack of sufficient fund naturally led to another drawback, i.e. absence of permanent office. Very few had permanent office. Organisations, institutions and reformers in Mithila had individual character. Lack of co-ordination was a vital reason for their cramped functioning. The method adopted by different bodies for voicing their demands was mostly traditional. Passing resolutions at annual celebrations had been the most usual way. Social organisations were least effective in providing institutional leadership to the people of the region, because of the total lack of constructive programme and also because of traditional social ethics. These bodies did not fully had resource to pressure-tactics. These bodies

could not create task force to carry their message to the people at large. They were supposed to take stock of the work done, discuss the causes of their failure and take remedial measures needed. All organisations barring a few were platforms for the middle class intelligentsia. Each organisation was manned and managed by middle class intelligentsia. These reforming agencies failed to attract common man, illiterate and below the Strata of the society of Mithila.

In spite of these weakness, the 19<sup>th</sup> century, marked a turning point in the History of Modern Mithila as new ideas and light, focussed by great institutions like Brahmo-Samaj, Arya Samaj and others and personalities like Mahatma Gandhi persuaded it. The impact of direct contact with English education, western thinking and socio-cultural organisations brought about a new awakening. It was realized that Mithila could not advance as long as social backwardness, illiteracy, religious superstitions and other evils were not uprooted. Thus in this socio-cultural background lies the factors responsible for the rise and growth of the Variety of Socio-cultural organisations. Men organised themselves according to the needs of the Society. Gradually the people of Mithila began to imbibe the progressive ideas through the vigorous efforts of some of the enlightened sons of the soil who devoted their lives to the cause of social, educational and religious regeneration of the area. Besides, different agencies for Social and educational reforms began to be established in different parts of Mithila which had Profound influence to remove social taboos, illiteracy, religious superstition early marriage, purdah, Sati etc. and encourage sea voyage, widow-remarriage and the like.

#### **Notes & References**

1. Kins, Documents on Darbhanga District, P. 27.
2. C.Y. Chintamani, Ed. Speeches and writings of Pheroze Shah Mehta, P.372.
3. The Miscellaneous writings of Late Lonoural M.G. Ranade, Published by Mrs. Ramabai Ranade, PP. 231-32.
4. The Journal of Bihar Research Society, P.21.
5. Kins, Documents on Darbhanga District, P. 27.
6. The Journal of Bihar Research Society, Vol. VIII, XI, Jan. to Dec. 1962.
7. Proceedings of the Indian Historical Records Commission, Vol. XXXIV, Part-II, P. 34.
8. J.S.Jha, Beginning of Modern education in Mithila, P. 138.
9. Darbhanga Raj Records, Memo No. 2075, dated 22 Feb. 1886.
10. J.S. Jha, Biography of an Indian Patriot : Raja Lakshmeshwar Singh of Darbhanga, PP. 137-138.
11. Ibid., P. 138.
12. Rajendra Prasad. Atmakatha, p. 333.
13. Jha, op. cit., P. 138.
14. Journal of Bihar Research Society, Vol. XIVIII, Parts – 1-1-10, P. 39.
15. Constitution and By – Laws on the Maharani Adhirani Kameshwari Priya Poor Home Darbhanga.
16. J.Mishra, Histroy of Maithili literature, Vol.-1, P. 7.
17. Amar, C. Mishra, Maithili Sahitya Parishad Itihas, P.3.
18. R.R. Diwaker, Bihar Through the Age, P. 541.
19. Upendra Thakur, History of Mithila.

# Agricultural Economy of Awadh

---

---

**Dr. Manisha**

*Assistant Professor, University of Lucknow*

India was perhaps always predominantly an agricultural economy. But other occupations had made their presence felt. This was very much evident in Awadh because no direct taxes were imposed by the government on any branch of industry or any trading activities. The Zamindars and Taluqdars imposed certain taxes. Even those taxes which were supported to be one of the major employments of the people like salt were taxed just like any other product of the soil and were included in the land revenue. The inclusion of other taxes in the land revenue and no direct taxes on trade and commerce had created in the minds of the people that the overwhelming majority of the people depended exclusively on agriculture. An analysis of the economic condition of the different categories of the population in Awadh shows a somewhat different picture.

On the basis of different professions the population of Awadh may be divided into five categories:

1. Depend on trade or industries,
2. Partly depended on trade or industries and partly on agricultural profession,
3. Partly depended on services and partly on agricultural profession,
4. Totally depend on agricultural profession
5. Landless labourers

In 1849-50 the population of Awadh was approximately five million.<sup>1</sup> Approximately one million people resided in the capital (Lucknow).<sup>2</sup> Unfortunately we have no exact figure regarding the profession of the different categories of people in Awadh during the later years of Nawabi regime. A clear indication is available on the basis of the figures of 1859-60, when a trade tax at the rate of 30% was imposed upon the different categories of traders. According to the taxation estimates of 1859, 502435 individuals were taxed and paid rupees 11, 32,841-8-0 which represents an aggregate gross income of rupees 3, 77, 61,400 and shows a per capita income of rupees 75-2-6 per annum. If we exclude 59483 traders of the Lucknow city, who paid tax of rupees 3 lakhs, the number of individuals in the rural areas of Awadh falls to 4, 42,952 who paid a tax of rupees 843714 which represents an aggregate a gross income of rupees 2, 8123,800 and shows a per capita income of rupees 63-7-10<sup>3</sup> which is rupees 8-10-8 less in the per capita income of the rural traders in comparison to

the traders of Lucknow. This tax was exclusively imposed on the non-agriculturist categories of the province at the rate of the 3% On their gross estimated income under the principle that no man was to be taxed who was not in a position to pay at least one rupee as tax per annum.<sup>4</sup> Taking the family as a unit of five persons each on an average based upon a rough calculation as no family data are available, the taxable non-agricultural population of the province was 25, 12,175 in 1659-60.this tax was imposed at such a time when the people of the province were in a very depressed condition because they had just passed through a great turmoil and were facing the necessary consequences<sup>5</sup>

In 1859-60 the population of the province of Awadh was approximately seven million<sup>6</sup> The census report of 1869 recorded its population about 1,12,000,00.<sup>7</sup> In 1849-50 the population of the province was approximately five million <sup>8</sup> The census reports of 1881 shows a total population of 11317741 which is a very small rise of only 1.6% in one decade whereas the census of 1891 shows a total population of 12650831 which is a rise of 11% in one decade. It is a well known fact that Awadh did not pass through any natural calamity during 1870 and 1880. Moreover the census operations were better organized in 1881 than in 1869. So the figure of 1869 cannot be taken as reliable. On a rough calculation the rise in the population may be taken as 10% on an average per decade. Taking the figure of 1881 as a base the following may be the population of Awadh from 1849-50 to 1881.

<i>Year</i>	<i>Population</i>
1881	11387741
1871	10248967
1861	9224071
1851	8301664

According to the above mentioned figure the population in 1859 was probably 9039590 and in 1849 it should be 8115631. Thus the family consisted of five members on an average the non-agricultural population of Awadh was 2512175 which was 27.79% of the total population. As pointed out earlier this tax was imposed only upon those individuals who were in a position to pay at least one rupee per annum as tax. Another interesting fact is that if 2512175 was the taxpaying non-agricultural population, a minimum of 2512175 more might have been non-tax paying non agricultural population which made the total of 5024350 out of a total population of 9039590.

Compare the composition of population<sup>9</sup>

<i>Profession</i>	<i>Population</i>	<i>Percentage</i>	<i>Year</i>
Non Agricultural	5024350	55.58%	1859
	8266418	72.59%	1881
Agricultural	4015240	44.42%	1859
	3121323	27.41%	1881

The above mentioned comparison indicates that the pressure on the agricultural profession began to increase and more than 100% of the non-agricultural population of Awadh changed their profession and now entirely depend on agriculture. During this period a large number of Tarai land and other waste lands were constantly being brought under cultivation. Thus the area of cultivated land was increased because a large number of non-agricultural populations had no option except agriculture as a source of their livelihood.

Awadh was practically self-sufficient in every field under the Nawabi regime. But the Nawabs of Awadh require little from other countries, some luxurious items from other places even from England also. They brought shawls from Kashmere and the Punjab, silks, satins, broadcloth, muslins, guns, watches etc from England.<sup>10</sup>

A great portion of salt and saltpetre required is raised within Awadh, and so is all the agricultural produce, except in season of drought; and the arms required to the troops are manufactured in Awadh, with the exception of some few cannon and shells.<sup>11</sup> Generally the Nawabs of Awadh patronized the local industries and imposed high duty on foreign goods. By the treaty of 1788 some exported articles from the British territories were paid a duty of 2 ½ % and the remaining categories were taxed at the rate of 5%. Saadat Ali Khan tried to check the import of articles in the territories of Awadh by raising the duties. In later years till 1850 imported goods valued at rupees 980-8-0 had to pay the duty of rupees 90-7-3 instead of rupees 24-8-0 according to the terms of the treaty.<sup>12</sup> They gave preference to the development of 'local industries' for the sake of their own economic independence. Even in case of heavy artillery and shells, when the British Government refused to sell these equipments, the native darbar directed its attention towards this problem also.<sup>13</sup> However it was a general principle on the part of the rulers as well as the nobility to impose restrictions on the imports of the foreign goods and to patronize the local small scale industries.

Previously the local industrialists were enjoying the local protection as well as rulers and the nobility. But after the annexation of Awadh in 1856 these small scale industries were destroyed by the new regulations or excessive demand of duty. Before the annexation of Awadh the armament industry flourished under the protection of the Nawabs. They supply their products to the Awadh army and her militia and Taluqdars also. The number of Awadh army, her militia and police was approximately 60,000 and the number of armed retainers of the Taluqdars was approximately one lakhs.<sup>14</sup> Besides that sometimes the general people also keep arms at their home for self defence. Accordingly, the demand for 'gun-powder' was fulfilled by villages. It was manufactured in the villages and supplied to the Government contractors. Nazims also purchased it from the villages and open markets also.<sup>15</sup> The British policy of de-industrialization had badly affected the manufacturers of 'gun-powder' and the village economy.

On 20<sup>th</sup> May 1856, immediately after the annexation of Awadh, the Chief-Commissioner of Awadh accepted the recommendations of the Judicial Commissioner and declared that those persons who desired arms had to take license on the payment of rupees two and to have effect for one year except in case of ministers and courtiers of the late King. In the case of the manufacturers of gunpowder and armourers, they had to take out annual licenses on the stamp paper of rupees 16. The gun-powder makers were required to not to keep more than 10 mounds of gun-powder and for the armourers the quota was fixed for the production of weapon for the production of weapon per annum<sup>16</sup> The armed retainers of the Taluqdars were disbanded and the Taluqdars were ordered to surrender guns and military stores till 1<sup>st</sup> October 1856.<sup>17</sup> Under British rule the Nawabs army and police, their number were approximately 60,000, were also disbanded. Consequently under British rule Awadh lost its industry within a year and increased the percentage of unemployed population.

The industries of Salt and Saltpetre, soap and glass for bracelets was the profession of a large number of people. The whole tribe of 'Lonias' were engaged in the supply of Reh for its preparations.<sup>18</sup> No duties were imposed upon the manufacturers of these articles but all those areas where it was manufactured were included in the land revenue and the Taluqdars and Zamindars were allowed to make their own arrangement with the manufacturers. Salt was the most prominent article in this trade. Under Nawabs rule a large quantity of Oude salt was smuggled into the British territories of Banaras and Allahabad Division. Excluding the elite classes the local salt was consumed by all and was being sold at the rate of fourteen seers per rupee in the market.<sup>19</sup> After the annexation of Awadh under British rule immediate steps were taken to separate the land revenue from the salt revenue and the privilege of manufacturing salt was leased to the contractors with some restrictions. Over and above the duty of one rupee per mound was imposed on it thus deriving a total income of rupees 813607 in 1859.<sup>20</sup> The enhance duty was imposed on such a necessity of life resulted in the costly production and failed to compete with the imported salt with the result that the industry died its natural death and it became a government monopoly. The saltpetre manufacturers also suffered from such enhancements.<sup>21</sup> the result was that a large number of people faced the problem of unemployment or dependence on land or became landless labourers. It also imposed pressure on land and the productivity of land.

The trade of opium in Awadh was affected after the annexation of the state. The opium trade was prohibited. Opium was consumed in Lucknow and exported to Nepal and British territories also. The trade of Awadh timber was one of the main exported articles. The forests were the property of the landed aristocracy. They sold these forests to the contractors or merchants and sometimes the British Government purchased it for its guns carriage factory at Fatehgarh.<sup>22</sup> Under British rule the forests became a Government property; therefore, the landed aristocracy lost their source of income from these forests.

This monopoly of the British also affected the economy of the 'Mallahs' or the boatman, who were deeply involved in this business. Apart from these landed aristocracy and the Mallahs, thousands of artisans, who prepared the luxury articles such as Huqqah snakes, embroiderers with gold and silver thread, makers of fine and rich dresses, fine turbans, ornamented shoes and the variety of such skilled sub-ordinate trades,<sup>23</sup> Suffered from these changes. After the annexation of awadh they also faced the problem of unemployment due to the lack of demand. Unfortunately we have not detailed information about those traders who maintained a lucrative trade under Nawabi regime.

The non-agriculturist tax payers formed a major portion of the society in the Nawabi regime. They were categorized in different categories like Bankers, Manufacturers, Artisans, Traders, Miscellaneous- Dancers, Dancing Women, Camel Driver, Shikaries, Carters and Fowlers. However in 1859 approximately 56 percent of the total population of Awadh depended on the non-agricultural resources and financially they were in better economic condition as compared to those who depend on agriculture profession under Nawabi rule. Unfortunately under British rule all of them lost their economic status in the society. The agricultural profession faced great setbacks due to extra burden on land and division of land besides the exploitation of landlords and the land revenue policy of the British Government. Now they lost their economic prosperity which they enjoyed under the rule of the Nawabs of Awadh.

#### **References:**

- <sup>[1]</sup> Ahmad Imtiaz- Lucknow: Memories of a city, "Through The Eyes of a Street"
- <sup>[2]</sup> A Doha in Ramcharitmanas of Tuilsidas- *"RAM EK DIN CHANG UDAI, INDRALOK ME PHUCHI JA, SURPATI SOOT BANDHU SANG NIHARI, PAKAD LEEN ASS HIRDAYA BIHARI.*
- <sup>[3]</sup> Abdul Halim Sharar, 'Lucknow The Last Phase of an Oriental Culture', page 130.
- <sup>[4]</sup> Rehana Begum, AwadhKeSamajikJeevanKaltihis, page 254-55
- <sup>[5]</sup> Ibid, page- 255
- <sup>[6]</sup> Sharar, page 130
- <sup>[7]</sup> Rehana Begum, page 256
- <sup>[8]</sup> <sup>1</sup>Mirza Zafar Hussain
- <sup>[9]</sup> Rehana begum, page 256
- <sup>[10]</sup> Amir Hasan, page 89
- <sup>[11]</sup> ibid
- <sup>[12]</sup> Sharar, page 131
- <sup>[13]</sup> Gulam Ali, 'Imaad-us-Saadat', page 68.
- <sup>[14]</sup> Amir Hasan, 'Vanishing Culture of Lucknow', page 88-89
- <sup>[15]</sup> Rehana Begum, page 255
- <sup>[16]</sup> Sharar, page 131
- <sup>[17]</sup> ibid
- <sup>[18]</sup> Amir Hasan, page 89.

<sup>[19]</sup> Sharar, page 131

<sup>[20]</sup> With patta called kankava and with tassels called dehrkhana. Sharar, page 131

<sup>[21]</sup> Ibid.

<sup>[22]</sup> Sharar, page 131

<sup>[23]</sup> Sir John Simon and the members of Simon Commission came to Lucknow in 1929 and KaiserbaghBaradari was chosen for the 'Garden Tea Party' on 5<sup>th</sup> December 1929. That time the Lucknowites chose a different way to put forth their resentment. While the party was in full swing a few black kites fell right before John Simon with caption "Simon Go Back". Those who flew these kites were Balak Ram Vaishya, Mohanlal, Shri Chandra Bhanu Gupta. Pawan Kumar Singh, 'Shahar-i-Awadh'.

# Birth Order and Personality Traits Among College Students

---

---

Dr. Shashi Kala Singh

*Associate Professor, Department of Psychology  
Ranchi University, Ranchi*

## **Abstract**

The present study looked at the influence of birth order on the personality traits. The personalities of first born, middle born, last born and only child were measured by using the Eysenck Personality Inventory. Participants were 100 college students belong to Ranchi. They were classified into four groups, each group has 25 students. Significance of mean differences of extraversion - neuroticism scores of these four groups were tested by computing "t" test. Results indicated that participants of different birth positions did not differ significantly in terms of extraversion – neuroticism.

*Keyword: Birth Order & Personality Traits*

## **Introduction**

Birth order is described as the order in which a person comes into their family. For instance, the first child born to the family would be characterized as a first-born, a person who has no siblings younger than themselves would be last-born, only children would be those with no siblings and the rest would be middle-born children. There are several theories regarding the child's place in the family. Many people believe that birth order affects personality. The order in which a person is born into their family plays a substantial role in the individual's development of personality (Stewart et al., 2001). Alfred Adler (1870–1937) was a pioneer in the study of birth order. His research suggested that the position a child had by the order of birth significantly affected the child's growth and personality. Adler stated that the greatest portions of 'problem children' are eldest children. He believes that later in life they resent authority and leadership of others. The youngest child, according to Adler, is generally spoiled. They cannot decide on any strong ambition because they want to excel in every aspect of their lives. Adler's thought on the only child is that although they have no siblings, their rivalry takes the form of their father – they are in competition for the attention of mother. According to Adler, the only child wants to be the centre of attention all the time. Since Adler's work on birth order, many more studies have been carried out in the field of psychology, all yielding different results.

Personality formation is a dance, a constant interweaving of influences. It is not so much nature vs. nurture, but nature with nurture. It would be far too

simplistic to say that genetics had nothing to do with personality - it's all environments. An equally incomplete answer is to argue that it is all genetics, and environment has no say in the matter. Personality is the particular combination of emotional, attitudinal, and behavioural response patterns of an individual. Different personality theorists present their own definitions of the word based on their theoretical positions. The personality is not capable to go beyond ones limited built up structure, because receiving a kind of security and meaning out of it, the self defence is strong and will not allow influences that might reduce or change ones self-image. Personality is made up of the characteristic patterns of thoughts, feelings and behaviours that make a person unique. Personality arises from within the individual and remains fairly consistent throughout life. "Personality is the entire mental organization of a human being at any stage of his development. It embraces every phase of human character: intellect, temperament, skill, morality, and every attitude that has been built up in the course of one's life" (Warren & Carmichael, 1930). Cattell (1950) "the personality of an individual is that which enables us to predict what he will do in a given situation". The terms 'Introvert' and 'Extrovert' personality characteristics were first used by Sigmund Freud, and the context of these terms was extended by Carl Jung. Extroversion-Introversion is an inborn tendency and often can be observed in every very young child. A person who is more talkative, arguing for their opinions, interacting with every one so frankly and seek excitement in every bit of life (Cattell & Mead, 2008) is called extraversion. And in other hand a person who is more reserved, less likely to be social and tends to be uncomfortable with interacting with strangers is the trait opposite to the extroversion and is termed as introversion (Goldberg, 1992).

The influence of birth order on personality development has been studied for many years. Birth order theorists believe that the children's position in the family determines their personality characteristics. These personality characteristics influence a person's behaviour outside of the home. The importance of birth order on a child's personality was first introduced by Alfred Alder (Ansbacher & Ansbacher, 1956). The pioneer of birth order research, Alfred Adler, had theorized that each birth position has a set of personality traits. Firstborns are always seen as leaders, high-achievers, ambitious, and conforming. Middle children, on the other hand, may experience difficulty finding a position of privilege and significance in the family because they never have the opportunity to monopolize parents' attention. Lastborns and only children are frequently viewed as the spoiled kid of the family. It is because both of these birth positions are the only focus of the family. A dethronement theory was proposed to explain birth order effects on personality development. Before the birth of the younger sibling, the eldest child had his or her parents' complete attention but he or she was later dethroned by a newborn. As a consequence of dethronement, the child would struggle to regain parental attention. This led the firstborn to develop such characteristics as conscientious, conservative, independence and competence. Another theory that describes birth order effects on personality development is family-niches model Sulloway

(1996). Sulloway also hypothesized that firstborns are less agreeable as compared to later-born children because firstborns dominate the younger siblings to minimize the diversion of parental investment. In contrast, the younger siblings avoid confrontation with the firstborns to solicit parental investment, which in turn led them to be more agreeable. Furthermore, he found that firstborns are more conscientious than the later-born children because firstborns reflect their parents' attitudes, beliefs, and personality characteristics whereas later-born children may develop attitudes, beliefs, and personality characteristics that are apart from the eldest sibling and parents.

### **Review of Literature**

Alfred Adler clarifies that birth order is not a direct determinant of a child's personality, but the child's interpretation of his perceived situation that is the most important factor (Adler, 1932). Psychological birth order is generally defined as the way a person perceives and interprets his position in the family (Ashby, et al., 2003). Schachter (1959) found that firstborns showed more fear of physical pain and were made anxious more easily than later born children, this would suggest that considerable personality differences exist between firstborns and later borns (MacDonald, 1971). The fact that birth order impacts behaviour suggests that where one falls in one's family influences one's personality and life decisions (Argys et al., 2006). Nyman (1995) carried out a study to identify birth order personality attributes. The information was obtained by asking subjects to list three words that described the characteristics of each birth position, and then to rate each descriptive word in terms of positive or negative connotation. The eldest birth position was viewed as dominant-aggressive, a quality that reflects both strength and weakness. Sulloway (1996) proposed that personality traits developed in childhood mediate the association of birth order with scientific radicalism. People who were the oldest sibling in their family tend to be less extraverted, dominating, talkative, lively, and assertive (Herrera, Zajonc, Wiczorkowska, & Cichomski, 2003; Pollet, Dijkstra, Barelds, & Buunk, 2010). This relationship persists after controlling age and number of children in the family.

Birth order may have subtle effects on perceived personality. Phillips (1998) administered the Revised NEO Personality Inventory (NEO-PI-R; Costa & McCrae, 1992a) to a sample of 177 college students. The NEO-PI-R is the most widely used measure of the five-factor model, in addition to the five factors, it provides scores on six specific traits, or facets that define each of the five factors. Phillips reported that firstborns (including only children) did not differ significantly from laterborns on any of the five factors. Parker (1998) found no association between birth order and personality. Jefferson, Herbst, McCrae administered brief measures of neuroticism, extraversion, and openness to experience to 9964 participants and reported that self-report and spouse rating of personality dimensions were unrelated to birth order. Frank Sulloway, a professor at the University of California Berkeley states that birth order helps to shape personality. His study was done with a group of 5000 subjects from 5

different countries. His study shows that first-born children are less extroverted and less open to new experience as opposed to latter-born children. (Connor, 2007). First-born children are usually introverted and relatively mature for their age (Herrera, et. al., 2003). Michalski and Shackelford (2002) surveyed 277 undergraduate students, obtaining demographic information (e.g. age, gender, socioeconomic status and sibling sequence information) and self-ratings on 40 bipolar items designed to assess the Big Five. No relationships were found for conscientiousness, emotional stability or extraversion and a positive relationship (contradictory to Sulloways findings) was found between first-born status and agreeableness. Jefferson, Herbst, and McCrae (1998) failed to show that birth-order was associated with personality in 9664 participants rating themselves. Skinner (2003) focused on birth-order effects in different facets of dominance, using a between-family design, and was unable to find any significant birth-order differences.

### **Hypotheses**

- o There will be no significant difference in extraversion scores between first and later-born.
- o There will be no significant difference in neuroticism scores between first and later-born.

### **Method**

#### **Participants**

Participants were 100 students taken from different colleges of Ranchi town. They were classified into four groups, first born, middle born, last born and only child each group containing 25 cases. All of these belong to middle socio-economic status.

#### **Instrument**

The Eysenck Personality Inventory developed by Eysenck and Eysenck (1964), was used to measure extraversion – introversion and neuroticism-stability of the subjects. There are 57 items in the inventory, 24 items assessing extraversion, 24 items assessing neuroticism and 9 items comprising the lie scale. Extraversion is concerned with how people behave socially. People high in extraversion will be lively, outgoing, and highly sociable (Ryckman, 2008). If a person scores low in extraversion, they are said to be introverted. Individuals who score highly on the neuroticism scale tend to be more anxious, nervous and insecure than those who score low on the scale (Ryckman, 2008). Neuroticism is thus a measure of emotional stability.

#### **Procedure**

The participants were asked to fill out a Questionnaire measuring personality. Each participant was instructed to indicate which birth position that they were born in. The options for birth order were first born, middle born, last born and only child. After the collection of data, the response sheets were

scored individually for each subject. In order to fulfill the hypotheses of the study the score obtained were analysed with Means, SD's and t values.

### Result and Analysis

**Table: 1** Comparison of four groups of birth order on extraversion and neuroticism scores

Type	Groups	Number	Mean	SD
Extroversion	First Born	25	34.58	12.15
	Middle Born	25	33.85	13.04
	Last Born	25	34.41	11.91
	Only Child	25	33.96	12.45
Neuroticism	First Born	25	35.87	11.65
	Middle Born	25	36.68	13.69
	Last Born	25	35.59	14.69
	Only Child	25	34.26	12.89

**Table: 2** 't' values for the different categories of birth order on extraversion

Sub Groups Compared	t values	P values
First Born Vs Middle Born	0.20	Not significant
First Born Vs Last Born	0.05	Not significant
First Born Vs Only Child	0.17	Not significant
Middle Born Vs Last Born	0.15	Not significant
Middle Born Vs Only Child	0.03	Not significant
Last Born Vs Only Child	0.13	Not significant

**Table: 3** 't' values for the different categories of birth order on neuroticism

Sub Groups Compared	t values	P values
First Born Vs Middle Born	0.24	Not significant
First Born Vs Last Born	0.06	Not significant
First Born Vs Only Child	0.46	Not significant
Middle Born Vs Last Born	0.27	Not significant
Middle Born Vs Only Child	0.64	Not significant
Last Born Vs Only Child	0.04	Not significant

The recorded difference in extraversion between first and later-borns was not found to be statistically significant, using the t-test of independent means. Result had shown that personality traits were not consistently linked to birth order. Therefore, the null hypothesis that no significant differences would be found in Extraversion scores between first and later-born was supported. The result indicated an insignificant influence of birth order on Neuroticism. Four types of birth order groups did not differ significantly from each other. Hence null hypothesis is accepted. The result does not significant. The findings of the present study have support from the observation made by Jefferson et.al (1998) and Parker 1998).

Stansbury and Coll (1998) report that family variables, parenting style, age spacing and gender interact with birth order to influence personality. Later in life social-psychological factors such as the influence of the peer group may have a far greater effect on the development of personality traits than birth order. Peer group dynamics may influence the individual on a structural level, and social learning can have a powerful reinforcing effect on some aspects of personality, which may differ between individuals dependent on the social circumstances away from the family, regardless of birth order (Bandura, 1977).

## References

- Adler, A. (1932). *What life should mean to you*. London: George Allen & Unwin.
- Ansbacher, M.L. & Ansbacher, R. (1956). *The Individual psychology of Alfred Alder*. New York: Basic Books.
- Argys, L.M., Rees, D.I., Averett, S.L., & Witoonchart, B. (2006). Birth order and risky adolescent behaviour. *Economic Enquiry*, 44(2), 215-233.
- Ashby, J., LoCicero, K., & Kenny, M. (2003). The relationship of multidimensional perfectionism to psychological birth order. *Journal of Individual Psychology*, 59(1), 42-51.
- Bandura, A. (1977). *Social Learning Theory*. Englewood Cliffs, NJ: Prentice Hall.
- Cattell, H.E.P & Alan, D.M. (2008). *The saga Handbook of Personality Theory Assessment*, 135-159.
- Cattell, R.B. (1950). *Personality: A systematic theoretical and factual study*. New York: McGraw Hill.
- Connor, S. (2007). *Are the family clichés true?* Retrieved November 11, 2011.
- Goldberg, L.R. (1992). The development of markers for Big Five Factors Struct. *Psychol. Asses.*, 4(1): 26-42.
- Herrera, N. C., Zajonc, R. B., Wiczkowska, G., & Cichomski, B. (2003). Beliefs about birth rank and their reflection in reality. *Journal of Personality and Social Psychology*, 85(1), 142-150.
- Jefferson, T. J., Herbst, J. H., & McCrae, R. R. (1998). Associations of birth-order and personality traits: evidence from self-reports and observer ratings. *Journal of Research in Personality*, 32, 498-509.
- MacDonald, A.P. (1971). Birth order and personality. *Journal of Consulting and Clinical Psychology*, 36(2), 171-176.
- Michalski, R. L., & Shackelford, T. K. (2002). An attempted replication of the relationships between birth-order and personality. *Journal of Research in Personality*, 36, 182-188.
- Nyman, L. (1995). The identification of birth order personality attributes. *The Journal of Psychology*, 129(1), 51-59.
- Parker, W. D. (1998). Birth order effects in the academically talented. *Gifted Child Quarterly*, 42, 29-38.
- Phillips, S. M. (1998). *Birth order and personality—Not again!* Paper presented at the 69th Annual Meeting of the Eastern Psychological Association, Boston, MA.

- Pollet, T. V., Dijkstra, P., Batelds, D. H., & Buunk, A. P. (2010). Birth order and the dominance aspect of extraversion: Are firstborns more extraverted, in the sense of being dominant, than laterborns? *Journal of Research in Personality*, 44(6), 742-745.
- Ryckman, R.M. (2008). *Theories of Personality* (9th Ed.). U.S.A: Thomson Wadsworth.
- Schachter, S. (1959). Ordinal position, anxiety, and affiliation-I. In R.R. Sears, L. Festinger, & D.H. Lawrence (Series Eds.) & Schachter, S. *Stanford studies in psychology: Vol. 1. The psychology of affiliation: Experimental studies of the sources of gregariousness* (pp. 42-61). Stanford, CA: Stanford University Press.
- Skinner, N. F. (2003). Birth-order effects in dominance: failure to support Sulloways view. *Psychological Reports*, 92, 387-388.
- Stansbury, V.K & Coll, K.M. (1998). 'Myers-Brigg Attitude Typology: The Influence of Birth Order with Other Family Variables'. *Family Journal*, 6:2, 116-123.
- Stewart, A., Stewart, E., & Campbell, L. (2001). The relationship of psychological birth order to the family atmosphere and to personality. *Journal of Individual Psychology*, 57(4), 363-387.
- Sulloway, F. J. (1996). *Born to rebel: Birth order, family dynamics and creative lives*. New York: Pantheon.
- Warren, H. C., & Carmichael, L. (1930). *Elements of human psychology* (Rev. Ed.; Boston, MA: Houghton Mifflin, 1930), p. 333/Cited in Allport, *Pattern & growth in personality* (1937/1961, p.36).

# Mental Health Related to the Working Status of Women

---

---

Dr. Anita Arora

*University Department of Psychology  
Ranchi University, Ranchi*

## **Abstract**

The present study is an attempt to investigate whether mental health is significantly related to working status of women. For this study forty working and forty non – working women were incidently selected. Mental Health Battery was used to assess mental health status of respondents. The t – test was used to find out the significance of difference among comparison groups. The finding revealed that working and non –working women differed significantly on total mental health and its components. It also indicated that working women had poor mental health status compared to non –working women.

Key Words : mental health, working women .

## **Introduction**

Mental health can be described as the ability to respond to many varied experiences of life with flexibility and a sense of purpose. It is the state of balance between the individual and the surrounding world. Someone who is able to think logically and seriously and who copes effectively in stressful situations is considered mentally healthy. Emotional stability and the ability to adjust to new situations that arise over the life course is also a part of mental health (Sarason & Sarason, 2005). Mental health is different from physical health in the way that symptoms of physical health are reorganized easily where as there is no specific list identifying the mental health. In fact the field of mental health is so wide that it is not easy to define this in limited words. In brief mental health refers to the full and harmonious functioning of total personality as well as to bio – socio- psychological and spiritual well being. It has positive aspects like originality, satisfaction, self –actualization and negative aspects like frustration, emotional instability, anxiety and depression. Mental health issues of women have got importance at the international level and in the women studies. Women play a pivotal role in the Indian society .It is the women who have sustained the growth of society and moulded the future of nations (Anand, 2003 ). In the Indian context we have been believing that women are meant for home and they are responsible for housework, where as men are meant for field and they are considered as the bread –winners

Traditional roles of women have changed to some extent, by beginning of the industrial revolution, so they spend most of their time doing outdoor activities instead of doing just houseworks. A working woman is one who goes out of home to work. But the term non-working woman does not imply that she does not work. She works inside her home as housewife and is fully involved in the management of her home affairs.

Several studies have reported that mental health problems and mental illness are more common and frequently occur in women (Lennon, 1994; Devar, 1999; Sinha, 1997 & Chakraborty, 1990). A study by Nathawat and Mathur (1993) demonstrated significantly better marital adjustment and subjective well-being for the working women than those for the housewives. Working women reported higher scores on general health, life satisfaction and self-esteem measures and lower scores on hopelessness, insecurity and anxiety as compared with the housewives. Thakar and Misra (1999) studied the well being experiences of 196 employed and 54 unemployed women. The results revealed that the unemployed women received significantly more social support in spite of that, the well being measures indicating mental health was better in employed group. Bhushan & Sheikh (2002) found significant mental health difference that favour working over non-working women. Few researches found contradictory findings in their studies. The mental health of 120 working and non-working women was determined by Jain & Gunthey (2001). Results indicated that both the groups differed significantly on their mental health scores indicating that working women are getting difficulty in coping strategies to deal with dual roles effectively and thus get mentally strained. The mental strain is reflected in symptoms like anxiety, tension, restlessness or hopelessness. Ojha & Rani (2004) examined level of life stress and various dimensions of mental health among working and non-working women of Varanasi city. Results revealed that working women significantly secured higher on life stress compared to non-working women. Niaz & Hassan (2006) reported that women's lack of empowerment, financial and emotional dependence, family, social and work pressure have a definite and significant impact on women's mental health.

The present study is an attempt to assess that whether mental health is related to working status of women or not?

### **Objective**

The objective is to compare the mental health status among working and non-working women.

*Sample:* In the present study forty working and forty non-working women (housewives) were selected from Ranchi town. Incidental Purposive sampling technique was used. All participants had middle socio-economic status and their age range was 18 to 22 years.

*Tools:* Mental Health Battery was used to assess the mental health status, developed by Singh & Sen Gupta (2000). It has six components – Emotional Stability (ES), Over-All Adjustment (OA), Autonomy (AY) Security – Insecurity (SI) Self-Concept (SC) and Intelligence (IG), which consisted items

15, 40,15,15,15,15 and 30 respectively .Total number of items in Mental Health Battery is 130. Higher scores on the battery indicate better mental health .

Mental Health Battery was administered on working and non –working women . The data were collected and have been analysed keeping in mind the objectives of the study. Means, SDs and t values were used to analyse the obtained data and findings have been presented in the respective tables.

### Results and Discussion

The result of the present study showed that working and non –working women differed significantly from each other on all its components namely – emotional stability,over all adjustment, autonomy, security – insecurity, self – concept, and intelligence as well as on total mental health . Non –working group scored significantly higher than the working group. The higher scores on these scales is indicative of better mental health (Table 1).

**Table: 1** Means, SDs, and t values of Working and Non – Working Women Sub – test of mental health battery

Group		<i>Emotional Stability</i>	<i>Over all Adjustment</i>	<i>Autonomy</i>	<i>Security – Insecurity</i>	<i>Self – Concept</i>	<i>Intelligence</i>	<i>Total</i>
Working Women (N=40)	Mean	8.20	13.5	9.02	8.80	8.55	19.6	67.13
	SD	3.73	6.34	3.22	3.31	3.13	5.90	17.91
Non – Working women (N=40)	Mean	11.05	21.45	12.0	10.78	11.68	24.48	91.7
	SD	1.80	7.18	2.36	1.96	3.94	5.26	6.11
	t	4.38**	5.23**	4.73**	3.24**	3.91**	3.90**	8.22**

Emotional stability refers to experiencing subjective stable feelings which have positive or negative values for the individual .The mean scores (11.05 ) of non- working women on emotional stability was higher than working women mean scores (8.20 ), their t value was 4.38,significant at 0.01

Level. It means non –working women had significantly more emotionally stable feelings compared to working women .

In over all adjustment scale non –working group had better adjustment score in comparison to working group. The difference between their mean scores ( t value 5.23) was statistically significant at 0.01 level. This revealed that working women had definitely more adjustment problem than non –working women .

Autonomy scale refers to a stage of independence and self determination in thinking . The t -value between the mean scores of working and non –working women was 4.73, statistically differed at 0.01 level.

Security – insecurity scale tells us a high or low sense of safety, confidence, freedom from fear, anxiety to fulfill the person’s needs . Non – working group had more secured compared to working group, their t value was 3.24, significant at 0.01 level.

Self –concept scale refers to the sum total of the person’s attitudes and knowledge towards himself and evaluation of his achievements .Working and

non –working groups were significantly differed in their mean scores ( t value 3.91) related to self –concept.

In Intelligence scale working and non –working groups differed significantly (t value 3.90 ) at 0.01 level . Non –working group had higher mean scores (24.48) compared to working group mean scores (19.6),which indicated that non –working women had more general mental ability in comparison to working women.

In total mental health battery both groups (working and non- working women ) differed significantly.

The result of the present study clearly showed that working and non –working group of women differed significantly on total mental health and its components .It also indicated that non –working women had better mental health compared to working women.

The result support by the findings of earlier studies conducted in this area ( Mukhopadhyay, 1997; Padma, 1991; Sahoo & Rath, 2002; Bhati & Gunthers,1999). This result reveals that working women play a dual role in the family and the work place .They experience a sustained stress to cope in both the conditions and hence their mental well being gets affected .Excess work load, less freedom, high need for motivation and working situations are powerful source of stress among working women .The effect of stressful life events and the effect of conflict arising from the juggling of work responsibilities have individual and interactive adverse physical and mental health consequences on women.Non –working women spend a quantitative and qualitative time with family members consolidated emotional bond help them to remain healthy.

On the basis of above findings and discussion the conclusion may be emerged out that working women had poor mental health status compared to non –working women.

## References

- Anand, N. (2003). Working women : Issues and problem . *Yojana*, 11-14.
- Bhati & Gunthers (1999) . Working women, family environment and mental health .*Indian Journal of Clinical Psychology*,26(2),246-249
- Bhusan, A. & Sheikh,K. (2002) . A study of insecurity feeling, social anxiety and mental health among working and non- working women .Paper presented at the Symposium on psychological perspective of women and their empowerment . Varanasi.
- Chakraborty, A. (1990) .Social stress, and mental health : A social psychiatric field study of Calcutta . New Delhi . Sage publication.
- Davar, B. V. (1999) . Mental health of Indian women –A feminist agenda .New Delhi. Sage Publication.
- Jain, N. & Gunthey, R. (2001) . Dual role of mental health among working women .*J.com. Gui Res* . 18 (2). 183-187.

- Lennon, M . L. (1994). Women, work and well being . The importance of work conditions, *Journal of Health and Social Behaviours* . 35(3), 235-247.
- Mukhopadhy, S. (1997) . Working status and health : A study of middle class Calcutta Women .*The Indian Journal of Social Work*. 57(2),327-336.
- Nathawat, S.S.& Mathur, A. ( 1993) .Marital adjustment and subjective well being in Indian Educated housewives and working women .J . Psychology 127.
- Niaz,Unaiza & Hassan, S. (2006). Culture and mental health of women in South East Asia, *World Psychiatry* .5(2), 118-1205
- Ojha, S. & Rani, U. (2004).A comparative study of the level of life stress and various dimensions of mental health among working and non- working Indian women . J. Com. Guid. Res. 21(3): 297-303.
- Padma,M. S. (1991) . Research in correlations of achievements : A trend report . In M. B.
- Buch (Ed). Fourth survey of educational research . 109-133. New Delhi. NCERT.
- Sahoo, F. M. & Rath, S. (2002) . The role of involvement in the psychological well – being of working and non- working women. *Indian Journal of Psychological Issues*. 10(1) & 221-30.
- Sarason, I. G. & Sarason, B. R.(2005). Glossary, Abnormal Psychology: The Problem of maladaptive behaviour . 10<sup>th</sup> Ed. Pearson Education, New Delhi.
- Singh, A.K. & Sen Gupta, A. (1983). Mental Health Battery, Lucknow : Ankur Psychological Agency
- Sinha,B. (1997). Anxiety among working and non –working women. *Prachi Journal of Psycho –Cultural Dimensions*. 13(2), 105-180.
- Thakar, G.& Misra,G . (1999). Daily hassles, well being and social support :Experiences Of employed women in India . *Psychological Studies* . 44(3), 69-76.

# Parent-Child Relationship and Academic Achievement of Tribal School Students

---

---

Dr. Bharati Roy

*Professor, Department of Psychology  
Ranchi University, Jharkhand*

## **Abstract**

The present study aimed at examining the impact of parent-child relationship on academic achievement of tribal school students. The study was conducted on 200 school students (100 boys and 100 girls) studying in class XI of Ranchi, Bokaro and Dhanbad towns of Jharkhand state between ages of 17 to 18 years (mean age = 17.2 years). The marks obtained in class X<sup>th</sup> of Central Board of Secondary Education was used as the indicator of academic achievement. Students were classified into two groups namely high achiever (students obtained over 75% marks) and low achiever (students obtained below 50% marks). Parent-Child Relationship Questionnaire (PCRQ) developed by Singh (1981) was administered on students. On the t-test, the two groups differed significantly on different dimensions of PCRQ. Parental rejection and punishment adversely affect the academic achievement of the students.

*Key Words:* Parent-child relationship, Academic Achievement.

## **Introduction**

The problem of academic achievement has viewed seriously by educationists and educational planners because of accounted huge wastage of human and economic resources on the one hand and its consequent adverse effect on country's development on the other. It is an established fact that education is an essential ingredient for national development and progress and it is the most essential for success of democracy.

The goal of all academic activities is to provide better knowledge and thus to create a new generation which would meet the challenges of the emerging world. A scientific analysis of factors affecting academic achievement would provide us an understanding of constraints and factors facilitating it. This would form the basis for future educational planning.

Academic achievement is a function of many cognitive and non-cognitive factors of personality. Every aspects of environment and personality may affect the academic achievement.

Studies in the past have revealed that intelligence, personality, parental attitude and behaviour, campus climate, need for achievement, aspiration level, study habit etc influence academic achievement.

Psychologists believe that child's personality largely depends upon his interaction with family members, especially fathers and mothers. A better understanding between parent and child ensures a sound personality of the child.

Ainsworth (1974), Agrawal (1977) and Abraham (1974) found that parents not only as a source of protection but also as a source of aspirations, expectations, guidance and motivation. Some parents teach knowingly and some teach behaviours, they wish they could erase, but all parents teach. Like other environmental agents, parents may serve as models whose behaviour the child can imitate. Parents are stimulus providers who determine how enriched the developmental life space will be. Parents are social reinforcers who can deliver reward and punishment to control behaviour. Finally parents are agents of control who provide structure by means of rules, instructions and restrictions. Through the ways in which they control, parents teach their children not only observable behaviour patterns but also many values, attitudes and beliefs that will pervade their academic achievement (Worell and Stilwell, 1981). Numerous studies have been conducted on parental attitude and child adjustment but only a small number of studies are reported regarding the effects of parental behaviour and parent-child relationship on academic achievement.

Mehta (1969) has pointed out that when the parents attitude was too harsh, dominant or indulgent, even the bright children also become backwards.

Elder (1965) found that parental dominance particularly maternal dominance and parental submissiveness both adversely affect the academic achievement.

Park, Young-Shin, Kim, and Uichol (2006) observed that students who evaluate their relationship with their parents in a more positive light tend to have higher academic achievement.

Xiao and Chen (2004) reported that there is a positive and significant association between PCRQ and academic achievement.

Adedokun and Balschweid (2008) found that the students with positive and supportive relationship with their parents/mothers were found to perform better in their academic performance compared to their other peers.

The present study intended to examine the effect of parent child relationship on students' academic achievement.

### **Sample**

The sample consisted of two hundred school (XI) students studying in different streams under the Central Board of Secondary Education (CBSE). Their age range were from 17 to 18 years. All the students belonged to the families of middle socio economic status. The high achiever group consisting of upper 15% of the students obtained over 75% marks and the low achiever group consisting of lower 15% of the students obtained below 50% marks in the same examination. The selected sample was matched on age, sex, family income and locality.

## Instrument

- i. Parent-child relationship questionnaire developed by Singh (1981) was used to measure parent-child relationship as experienced by the children. This scale includes six dimensions of parent - child relationship; they are Loving, Dominating, Rejecting, Protecting, Punishing and Discipline. The subject's score will indicate the degree of parent-child relationship on a particular scale. High scores indicating greater degree of parent-child relationship and low scores indicating low relationship on each scale of both mother and father form of parent-child relationship questionnaire.
- ii. The aggregate marks obtained by students in class X<sup>th</sup> of Central Board of Secondary Education was used as an indicator of academic achievement.

## Result and Discussion

The analysis of PCRQ scores of both groups of students was done with the help of "t" test. To examine the relationship between academic achievement and PCRQ scores product moment correlation was computed. The result displayed on Tables I, II and III respectively.

*Table: I Means and SDs of high and low achieving boys and girls on parent-child relationship questionnaire.*

Boys (N = 100)

Girls (N = 100)

Groups	Dimensions of PCRQ	Mother Form		Father Form		Mother Form		Father Form	
		M	SDs	M	SDs	M	SDs	M	SDs
High Achiever	Loving	8.47	1.50	8.88	1.66	7.18	2.05	8.16	1.76
Low Achiever		8.10	1.75	9.05	1.75	8.30	2.26	8.06	1.82
High Achiever	Dominating	3.82	1.05	4.18	2.20	3.75	1.99	3.87	1.66
Low Achiever		3.78	1.15	4.02	1.85	3.06	1.86	2.15	1.50
High Achiever	Rejecting	3.35	1.15	4.66	2.18	3.64	2.05	3.48	1.62
Low Achiever		5.60	1.88	6.85	2.02	3.12	1.98	3.02	1.98
High Achiever	Protecting	7.18	1.55	6.74	1.58	6.45	1.58	6.18	1.34
Low Achiever		6.74	1.36	5.18	1.23	6.12	1.32	5.19	1.82
High Achiever	Punishing	4.16	2.05	3.26	2.12	4.85	2.10	3.45	2.32
Low Achiever		6.05	2.16	4.43	2.34	3.94	2.36	3.58	1.85
High Achiever	Discipline	7.60	1.65	6.15	2.50	3.45	1.44	4.86	5.17
Low Achiever		9.03	1.58	4.36	1.98	4.44	1.82	1.05	1.16

**Table: II** *t* values of mean difference between high and low achieving boys and girls on PCRQ.

Groups	Dimensions of PCRQ	Boys (N = 100)		Girls (N = 100)	
		Mother Form	Father Form	Mother Form	Father Form
High Achiever	Loving	1.12(NS)	0.5(NS)	1.15(NS)	0.28(NS)
Low Achiever					
High Achiever	Dominating	0.18(NS)	0.2(NS)	1.82(NS)	2.26*
Low Achiever					
High Achiever	Rejecting	1.26(NS)	5.21**	1.3(NS)	1.28(NS)
Low Achiever					
High Achiever	Protecting	1.52(NS)	5.57**	1.14(NS)	3.09**
Low Achiever					
High Achiever	Punishing	4.5**	2.66**	2.07*	0.31(NS)
Low Achiever					
High Achiever	Discipline	1.96	3.98**	3.00**	1.11(NS)
Low Achiever					

\*Significant at 0.05 level

\*\* Significant at 0.01 level

NS:- Not Significant

The tables I and II indicate the following main points.

- High and low achieving groups of boys and girls did not differ significantly on loving scale scores of parent-child relationship questionnaire.
- High and low achieving girls differed significantly on Father form of dominating and protecting scales of PCRQ ( $t = 2.26$ ,  $P < 0.05$  and  $3.09$ ,  $P < 0.01$  respectively). High achieving girls reported father as more dominating and protecting than low achieving girls. Low achieving girls reported mother as more dominating than high achieving girls, but the difference between the two means was statistically insignificant.
- It is evident from the table that significant difference is obtained between high and low achieving girls on Mother form of Punishing and disciplining dimensions of PCRQ ( $t = 2.07$ ,  $P < 0.05$  and  $3.00$ ,  $P < 0.01$ ). High achieving girls reported mother as more punitive than low achieving girls and father as more disciplining than high achieving girls.
- High and low achieving boys differed significantly in Father form of rejection, protection, punishment and discipline dimensions of PCRQ ( $t = 5.21$ ,  $5.57$ ,  $2.66$  and  $3.98$ ,  $P < 0.01$ ). Low achiever boys scored higher on Father form of rejection and punishment scale, where as high achiever boys obtained higher scores on protection and discipline.

*Table: III Correlation-coefficients of academic achievement with six dimensions of PCRQ.*

<i>PCRQ Dimensions</i>	<i>r</i>	<i>P value</i>
Loving	.03	NS
Dominating	.07	0.05
Rejecting	.06	0.05
Protecting	.08	0.01
Punishing	.06	0.05
Disciplinary	.07	0.05

It is clear from the table III that the correlation between academic achievement with the dimensions of protecting and disciplining was found to be high and positively significant at 0.05 and 0.01 levels. Rejecting, Dominating and punishing scores on PCRQ was found to be significantly and negatively related with academic achievement.

### **Conclusions**

- High and low achieving group of boys did not differ significantly on loving scale score of PCRQ.
- Parental rejection and punishment adversely affect the academic performance of the students.
- High and low achieving boys differed significantly in parental rejection, protection, punishment and discipline.

### **References**

- Abraham, P.A (1974). Influence of the basic personality factors on academic achievement cited in M.B.Buch, Survey of Research in Education. Faculty of education and Psychology M.S.University of Borada.
- Adedokun, O.A & Balschweid, M.A (2008).The mediating effects of self-esteem and delinquency on the relationship between families. Social capital and adolescents educational achievement. Educate, 8.
- Agrawal, S. (1977). Personality traits of under and over achieving boys of class XI. Asian Journal of Psychology and Education.2 (1)44-45.
- Ainsworth, M.D. (1974). Phases of the development of infant mother attachment. In R.A.Levine (Ed.), Culture and Personality Chicago: Aldine.
- Elder, G.H. (1965). Family structure and educational attainments: A cross sectional analysis. American Sociological Review. 30:81-96.
- Mehta, M. (1969). Level of school performance of backward and non-backward higher secondary boys. Journal of Psychology of Research.36 (2):64-67.
- Park, Young-Shin, Kim, and Uichol. (2006).Family, parent - child relationship and academic achievement in Korea: Indigenous, cultural and Psychological analysis. Korea: Inha University.
- Xiao, F & Chen, M. (2004). Parental involvement and students' academic achievement. A meta analysis. Educational Psychological Review. 13:1-22.

# Ethical Aspect of Abortion

---

---

**Dr. Ajit Kumar Barnwal**

*Assistant Professor, Department of Philosophy  
Sindri College, Sindri, Vinoba Bhave University, Hazaribag*

Now a days, abortion has become a burning issue to discuss. Termination of pregnancy before delivery is called "abortion". There are two kinds of abortion:

1. Natural Abortion
2. Voluntary Abortion

In natural abortion the pregnancy terminates itself due to biological disorder. Here the mother has no control and no choice over this mishaps.

But in case of voluntary abortion termination of pregnancy is performed by a doctor on request of the mother. Here mother has a choice whether to end the pregnancy or not.

Natural abortion is not concerned with ethics as no moral judgement can be given on it.

Ethics is related with voluntary action only. So voluntary abortion is concerned with ethics. Moral judgement can be given only for voluntary abortion. Therefore, we are here to discuss with merely voluntary abortion.

The question is whether it is right to terminate a pregnancy before a normal child birth.

In Canada abortion is available on demand while in Nicaragua it is illegal<sup>1</sup>. In Canada abortion is the right of a woman to have an abortion during the first six months of a pregnancy. It can be performed solely at mother's request.<sup>2</sup>

In Nicaragua abortion is extremely banned by law even in case of rape or where the mother's life be in danger.<sup>3</sup>

Some people think that abortion is always wrong while others think that under various circumstances it is morally acceptable. For example, when mother's life is at risk, then it is morally right to terminate her pregnancy before normal delivery.

Here, we have two cases. If we say that abortion is not morally wrong, then it is incorrect to say that it is always right. And if we say that abortion is wrong, then it is incorrect to say that it should always be denied.

But before we go ahead we must discuss the position of foetus in human context. 'What is foetus?' Foetus is an would be human being. It is foetus only which grows into a child in mother's abdomen, then after birth it grows into human being.

Now, whatever values are meant for human race, can be extended to foetus too. So, abortion or killing of foetus means killing of human race.

Dr. Avinash Kumar and Dr. Diwakar Pathak says, "As per Hindu Philosophy, non-violence is based on equality of all living creatures. According to Indian Philosophy, all creatures are equal and they have equal rights of life, so it is wiseman's duty not to kill any creature"<sup>4</sup>.

Dhammapada says that everybody fears from punishment and death, all beings like to live, having these in mind one should neither kill anybody nor inspire anybody to do so.

"Sabbe Tasanti Dandassa, Sabbe Bhayante Machchuno.

Attanam Upamam Katva Na Haneyya Na Dhataye..

Sabbe Tassanti Dandassa Sabbesam Jivitam Piya.

Attanam Upamam Katva Na Haneyya Na Dhataye..<sup>5</sup>

There are three kinds of killing:

1. act of killing
2. inspire someone to kill
3. sanction of killing<sup>6</sup>

Question and ethics of killing a man is extended to foetus. "Is killing of a man a moral act?" This question extends to foetus and it can be questioned likewise as: "Is killing of foetus morally right?"

If ethics does not allow the killing of a man, then killing of foetus too should be strictly prohibited and condemned.

Again we have a question striking our mind : "Can it be morally permitted to kill a man?" Lord Buddha, Mahatma Gandhi and Lord Mahavira were the preachers of "non-violence". But Buddha, and later, Mahatma Gandhi were against the principle of extremes. Buddha taught us to follow middle path to do moral actions. Mahatma Gandhi also adopted his middle path for observance of non-violence.

Middle path of non-violence suggests that under certain circumstances killing of a living being may be permitted. Lord Mahavira also more or less accepts it. We can find it by analyzing the theory of "Syadvada" which says that under certain circumstances things are true. This can be extended to moral judgement on killing.

If a living being is caught with highly infectitious disease which may cause destruction to a big mass of population, then killing of such being is permissible. It is the middle way of non-violence.

Can Buddha's middle path of non-violence be applied for killing a man under any circumstance? If right circumstances allow to kill a man then only this principle can be extended to killing a foetus.

Suppose, a man has gone mad and he aims only at killing of men i.e. he is meant for mass destruction of human life, and there be no other ways left to control his attitude and action, then it is better to kill him in order to save the life of the mass. Here, ethics permits to kill a man.

But, what about an innocent foetus? Here too, under no-choice circumstances foetus killing can be permitted. For example, suppose, a foetus

developing in mother's abdomen be caught with highly infectitious and incurable disease which after birth may destroy a very large mass of population, then abortion can be allowed. Thus, abortion can be permitted only when it is essential and there be no other remedy.

For the sake of desire, voluntary abortion or selective abortion or female foeticide must never be allowed. Every being has the right to live and ethics does not allow to take the life of other being whether potential human being (foetus) or full grown human being.

If female foeticide is practised at length, as it happens now, then there will be crisis of women in the society and other social, ethical and cosmological problems will evolve. We know that sex ratio in India is at an alarming situation. Punjab, Haryana and Rajasthan are suffering from short of female population. It has become a social problem there. The male population is not getting married easily as there is scarcity of women. This will ultimately cover the whole country. It has been found that marital life is more happier than a nuclear life. A wife supports her husband emotionally, economically, psychologically and socially. A life without wife can not constitute a society. Due to nuclearity a man do not share his problems, he goes in depression and under mental stress he sometimes decide to suicide.

Scarcity of women may cause other ethical problems also. There may be more cases of kidnapping and rape cases may increase. Anyway, suppose there be the world with no women, then, isn't it alarming for human race? The human race will become extinct one day as many species did so. Therefore in order to protect human race we must stop female foeticide. In other words, voluntary abortion must be prohibited.

### **Reference**

1. 1970-75, Dictionary.com, unabridged based on the Random House Dictionary © Random House
2. Dictionary.com, 2007-05-01
3. Divisions deep over abortion ban. BBC News, 2007-10-12
4. Dr. Avinash Kumar and Dr. Diwakar Pathak, Bharatiya Darshan Ki Mul Samasyayen, Janaki Prakashan, Patna, 1984, page 194
5. Dhammapada, page 129-30
6. Kritakaritanumodita, Yogasutra, 2/34

# Sun Worship in Gaya

---

---

Dr. (Prof.) Kumkum Sinha

*Ph.D, D.Litt, Head Department of Philosophy  
Jagjivan College Gaya ( M.U. Bodh-Gaya)*

Sun is a huge, glowing ball of gases at the center of the solar system. The earth and the other eight planets travel around it. The sun is the only one of billions of stars in the universe. As a star, there is nothing unusual about it. But the sun is more important to the people than any other star. Without the heat and light of the sun, there could no life on earth. 1 today, we know we must have the sun as a source of heat, light, and other kinds of energy. All life on the earth -people, animals and plants- depends on this energy from the sun.

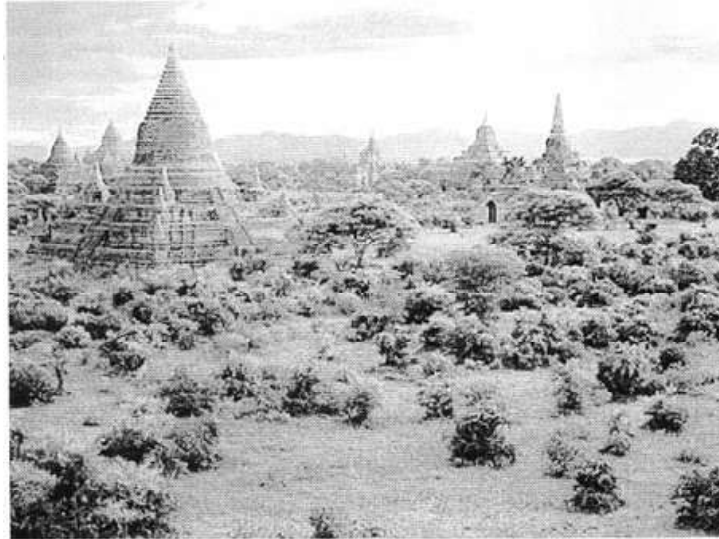
Many ancient people worshiped the sun as a god. They included the Egyptians in Africa, Sumerians in Asia, the Greeks in Europe, the Aztec and Maya Indians in south America. Surya (the Sun god) is one of the most important deities of the Vedas. He usually has a lotus in each hand and is usually shown in a chariot drawn across the heavens by seven horses or one horse with seven heads. He is also shown with four hands, three carrying a wheel, a conch-shell and a lotus and the fourth in a protective mode. 1-us charioteer is Aruna, the god of dawn, who carries a whip in his hand. Being the source of light and warmth, he has the ability to control the seasons and the power to grant or withhold the ripening of the crops. As the economy was agricultural based, Surya is placed amongst the highest of the gods, specially for the agricultural communities.

Also known as Savita, Surya was very popular in the early times, but later on lost some of his importance to Vishnu. Even then he is the god to whom the famous Gayatri Mantra (Prayer) is chanted everyday when he rises. Everyday in the morning one can see hundreds of devotees chanting the mantras and offering water to the Sun god. Small images and visual representations of the Sun god can be seen in the temples of other gods, but he rarely has a full-fledged temple to himself. One of the exceptions is the famous sun temple at konarak in Orissa.

God Surya (सूर्य) can be called the only god in Hindu religion who can be seen and prayed to in daily life. The Surya is depicted as having a body as shiny and radiant as pure gold. He is believed to be a golden red man with three eyes and four arms, riding a chariot driven by seven white horses. The Chariot harnessed by seven horses represent the seven colours of the rainbow or the seven chakras.

Surya is the life giver, sustaining all life on earth by providing all radiance and energy. He by mounting the wheel of time is also the one who is responsible for the beautiful seasons and causing the cycle of day and night.

The Surya is referred to in Sanskrit as “Mitra” or “Friend” down to the invariable warmth. Surya is depicted with two hands holding a lotus in both; sometimes he has four hands holding a lotus, chakra, a conch and a mace.



The Sun Temple Gaya Bihar

The Dakshinaarka temple in Gaya is ancient shrine to the Sun God. Gaya has been an ancient pilgrimage center since time immemorial. The ritual of offerings pindas or offerings to the dead has been long associated with Gaya and has been mentioned in the epics.(Vaayupuraana). The Sun temple is an ancient structure in Gaya Offerings to the ancestors are made at the Surya Kunda or the Dakshina Maanas tank in front of the temple.

### **Origin of Sun worship**

Sun worship apparently was very popular in the Magadha region which included Gaya. Numerous old images of the Sun God Aditya are found in the Gaya region and there are still quite a number of sun worshippers in Gaya. It is said that they may have descended from the fire worshippers of Central Asia. In fact, the granite image of Aditya (this particular image here is also referred to as Dakshinaarka) or the Sun God worshipped here is portrayed as wearing a jacket, a waist girdle and high boots in the Iranian tradition. Hundreds of people visit this temple on Sundays.

### **Antiquity**

Sun worship in the Magadha region has been mentioned in the Puranas and thus this temple is said to be of very ancient origin. The current structure dates back to the 13th century, where the South Indian emperor Prataparudra of warangal is said to have built it.

### **Architecture**

This temple faces east and it stands close to the Vishnupaada temple. To the east of the temple is the tank Surya Kunda. The temple is a simple and plain one, with a dome over it. The comparatively larger sabha mandapa stands in front of the sanctum. Massive pillars line the mandapa where there are graceful stone sculptures of Shiva, Bhramaa, Vishnu, Surya and Durga.



Image Of Sun Temple Gaya

There is an ancient Sun temple at Gaya in the state of Bihar. Offerings to the ancestors are made at the Surya Kunda or the Dakshina Maanas tank in front of the temple. Sun worship apparently was very popular in the Magadha region which included Gaya. Numerous old images of the Sun God Aditya are found in the Gaya region and there are still quite a number of sun worshippers in Gaya. It is said that they may have descended from the fire worshippers of Central Asia. In fact, the granite image of Aditya ( this particular image here is also referred to as Dakshinaarka) or the sun God worshipped here is portrayed as wearing a jacket, a waist girdle and high boots in the Iranian tradition. Hundreds of people visit this temple on Sundays.

Sun worship in the Magadha region that encompassed Gaya has been mentioned in the Puranas and thus this temple is said to be of very ancient origin. The current structure dates back to the 13th century, where the South Indian emperor Prataparudra of Warangal in Andhra Pradesh is said to have built it.

The Sun Temple at Gaya faces east and is located close to the famous Vishnupada temple where a footprint of Vishnu is said to be enshrined. To the east of the temple is the tank Surya Kunda. The temple is a simple and plain one, with a dome over it. The comparatively larger sabha mandapa stands in front of the sanctum. Massive pillars line the mandapa where there are graceful stone sculptures of Shiva, Bhramaa, Vishnu, Surya and Durga. There are two other notable Sun temple at Gaya, namely the Uttaraka temple near the Uttara Maanas tank and the Gayaditya temple on the river Falgu.

## Surya in Ancient Literature

In Vedas, numerous hymns are dedicated to Surya, the Sun personified, and Savitr, "the impeller" a solar deity either identified with or associated with Surya. Even the Gayatri mantra, which is regarded as one of the most sacred of the Hindu hymns is dedicated to the Sun. The Adityas are a group of solar deities, from the Brahmana period numbering twelve. The ritual of sandhyavandanam, performed by some Hindus, is an elaborate set of hand gestures and body movements, designed to greet and revere the Sun.

The mantra in Rig Veda praise to the Surya as:

आ कृष्णो रजसा वर्तमानो निवशयन् अमृतं मर्त्यं च ।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ (1/35)2

(Throughout the dusky firmament advancing, laying to rest the immortal and the mortal, Borne in his golden chariot he cometh, Savitar, God who looks on every creature)

Gaytri Mantra in Vedas for Lord Surya (Om bhoor-bhuvaH svaH, tat-saviturvareNnyam, bhargo devasya dheemahi, dhiyo yo naH prachodayaat.)<sup>3</sup> In the Vedas Surya Dev is referred to as the god of light who is responsible for all life on earth.



Dakshinaarka Sun temple is situated in the Gaya district of Bihar. This temple is considered to be very religious and people visiting this place devote

themselves to Lord Sun. This temple is dedicated to Devi Savitri. Idols of different Devis can be seen in this temple along with an idol of Lord Sun.

Gaya has always been considered to be a very religious place. This place has always been a centre of attraction for tourists and devotees. Other places of religious value can also be seen in Gaya along with the Dakshinaarka Sun temple.

Dakshinaarka Sun temple is one of the ancient Sun temple in India. It is distinct from the other temple on the basis of its beauty. This temple is famous for its religious value. It is believed to have been built prior to Mauryan period. But some scholars believed that this temple was built during the thirteenth century A.D. Even archaeologists believe it to have been built around the same period. According to legends, this temple was built by King Varangal of South India.

This temple has been magnificently built and faces the eastern direction. The temple comprises of a big gathering pavilion and another pavilion opposite to the central part of the temple. A number of different pillars comprising of beautiful crafts can also be seen. Idols of different Gods can be seen in the temple. Beautiful idols of Lord Shiva, Lord Brahma, Lord Vishnu, Lord Sun and Goddess Durga can be seen.

### **Importance of Dakshinaarka Sun Temple**

Dakshinaarka Sun temple enhances Gaya's religious value and importance. Gaya has always been a place of religious importance to people from different religions. There are a lot of different temple present in Gaya including Manglagauri temple, Vishnupad temple etc.

A huge crowd can be seen on the occasion of chatt festival. Two Kunds named Surya Kund and Dakshin Manas Tirth Kund are present here. People worship their ancestors in this place and perform ceremonies like Shradh etc. They pay their homage to the dead. It is believed that one's ancestors go to Surya Lok if a person sees the Sun from Dakshin Manas Tirth Kund.

Lord Sun has been worshipped in this place for ages. Many texts and idols related to Lord Sun can be seen in this place. Various Puaranas also talk about the relationship between Lord Sun and this place. This place is filled with a huge crowd on the occasion of Chatt festival. A lot of devotees visit this place during this period and offer prayers to Lord Sun.

Surya Shasthi Puja (also known as Chhath) or Chhath Festival celebrated on "Kartik Shukla Paksha Shasthi" to offer respect to the "Surya Dev"(Sun God). Chhath" is celebrated twice in a year. First on "Kartik Chhath" and the second occasion comes in the summer season in March- April which is called "Chaiti Chhath". Chhath is the leading puja of Eastern Uttar Pradesh and Bihar. It has also spread to Jharkhand and adjoining Chattishgarh and Madhya Pradesh.

A sea of humanity offered "arghya" to the Sun God at sunrise on various ghats of River Ganga (xaxk) on November 19, 2012 at Patna, bringing an end to the four-day Chhath festival. In Delhi and othar places large number of devotees also offered "arghya" to the Sun God at sunrise on various ghats of River Yamuna

(;euk). The devotees greeted the rising Sun with full devotion and exchanged greetings with each others, offering prasad, fruits and sweets.

Surya Puja is divine boon for those who face problems, hurdles and misfortune in their lives. Worship of Sun is beneficial when people get stuck, no matter how hard working, honest and intelligent they are good luck seems to ignore them. People who aspire for sound health, prosperity, good eyesight, strength and courage, success, cure of chornic diseases like leprosy, heart ailment, nervous weakness, asthma etc. Should worship the Sun. This planet is known for his Power, strength and glory. An ill- placed Sun could also lead to difficulties in health, relating to heart or blood pressure/ blood circulation. In such a case, it is advisable to recite Surya japa or Dhyana Mantra. After planning to perform the Surya Puja, one should wear clean red clothes on Sunday and offer lotus flower to the God, facing the east direction.

“Aum Hrim Hrim Suriyaye Namah Aum”<sup>4</sup>

People can observe fast on Sundays and can take salt-free food (one time meal before sunset). It is regarded as beneficial. One should meditate on the rising sun. If not possible, they should meditate on a ruby. After reciting and meditating on the Sun, one should offer water adding a few rice grains and vermilion to the Sun Lord. It is really beneficial for every person. The Sun is the god of light and intellect, may god bless you with all the grace. Read more to know about the Sun and its affects. Surya Puja or Sun worship is dedicated to Lord Surya. Graha Shanti Surya Puja or Sun worship is recommended to these, having malefic Surya or wrongly placed sun as per the horoscope. Here is a list of things associated with the worship of Surya- the Sun God.

Surya is the only visible God whom we can see, perceive and pray. The Sun God is considered as the life-giver, “Prannadata” of the entire universe. Surya is essential for life. All Vedas regard Surya as the witness (Saakshi) of all actions. The Sun or Surya is also known as “ Atmakaraka”. Being a Sanskrit word, “ Atma” means “soul” and “ Karaka” means “indicator”. The Sun is the “indicator of the soul”. The Surya is the indicator of our ego, honour, status, fame, the heart, the eyes, general vitality, respect and power. There is also an old temple at Brahmani Ghat. It is said this idol of Sun God was found when the washerman were digging the river Falgu for water in summer. The statue is of black stone, it is said that this is one- piece and of Gandhar art. Its size is about seven ft. There are so many places famous for Sun worship i.e. Deo (now in Gaya).

### **Notes and references**

1. World book Britainica pg 974
2. Rig Veda (1\35)
3. Gayatri Mantra
4. Surya Mantra
5. From internet

# Floods in North Bihar and its Management: A Critical Analysis

---

---

**Ranjay Kumar Singh**

*Lecturer, Deptt. of Economics*

*S.T.D. College, Ghurapali*

*Saran (Bihar)*

## **Introduction**

Bihar happens to be one of the most flood affected states of India accounting for 54.63 lakh hectares of the flood prone areas in the state. Disastrous flood have been witnessed as a chronic phenomenon in the state which have causing inundation of a large area of the state, some time culminating in to a cluster of villages getting completely submerged in to the river. Floods have not only been damaging crops and other properties but also the human and animal lives and thus bringing a lot of untold miseries to the people. North Bihar region is more flood affected incomparision to other part of Bihar. Approx 94%of flood affected areas of Bihar lies in North Bihar region. Kale attempted to make a chronological studies of the flood in North Bihar plan and come out with the views that the plains of north Bihar is the most susceptible areas in India, prone to flooding and it has recorded the highest number of floods during the last thirty years.<sup>1</sup>

This paper deals some relevant sub headings like historical background, drainage system of rivers in north Bihar, floods incidence, policies of flood control and management and its critical assessment which provide us a clear explanation of Floods in north Bihar and its other dimensions.

## **Brief explanation of Historical Background**

There is a long history of floods in north Bihar plain. The settlement of this area began as early as 7<sup>th</sup> century BC with agriculture getting to be the dominant productive basis of society. It saw not only the emergence of the first kingdoms like those of Magadha and Vrijjis but also the foundation of the first empire recorded in Indian history, — the Mauryan Empire. The rich agricultural resources made no mean contribution to this process of state formation, extensively irrigated by a network of perennial rivers, the fertile soil base of new alluvium deposits, falling in a favourable rainfall zone with low technological inputs; this engendered a social surplus that could sustain civilization growth down the centuries. The natural fertility of the soil was replenished by the silt deposits of inundating rivers.

However, this inundation which could once be rated as nature's bounty, gradually transformed itself into a curse. This feature, initiated by colonial

intervention became particularly pronounced from the onset of the 20<sup>th</sup> century. An expanding population within the constraints of a colonial economy led to growing pressure on land. During the British Raj, Bihar experienced the worst form of exploitative imperialism. The permanent settlement stripped peasants of customary rights, deserting them to the mercy of landlords. Their bargaining position was further eroded by the simultaneous ruination of traditional arts and crafts (often referred to as deindustrialization) which pushed people into agriculture and brought to bear considerable pressure on land. Cumulatively, these two factors led to the occupation and cultivation of marginal and sub marginal lands. The appropriation of control over more fertile tracts for purposes of commodity production by the floods plains consequently, floods started wreaking greater havoc than they had done before, or at least seemed to.

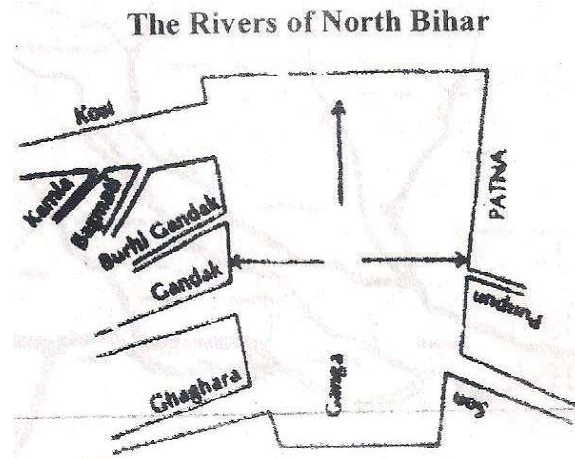
This changed perception about floods is amply reflected in the district gazetteers, which maintain a meticulous record of the floods that ravaged the area from the turn of the 19<sup>th</sup> century. However, the attitude was still not one of viewing them as an unmitigated evil, but a necessary one. For instance the Muzaffarpur district gazetteer states, "This area through which Bagmati flows is the most fertile part of the country and practically every acre of land is cultivated. The fertility of this area is renewed by the visitation of floods depositing alluvial silt brought from the hills. Flood is almost a necessary evil and this part of the country cannot do without flood." There are numerous references to how the loss of kharif was more than compensated for by a bumper rabi harvest thanks to the rich silt deposit left by the receding waters, The Darbhanaga district gazetteer explicitly states, Owing to this combination of circumstances, the district has always been subject to severe and widespread inundation, which cause a good deal of temporary suffering. But as a rule the distress they cause soon passes way the dwellings which are destroyed are quickly replaced as the cost of erecting such mud walled huts is small and the cultivators are compensated in large measure, for the losses they sustain by the fertilizing silt left by the receding waters, which increases the productivity of the soil and ensures rich crops." <sup>2</sup>

A Substantial part of the kharif produce was lost in years of exceptional flooding. In years of moderate floods, not only would the kharif crop survive but it would also be followed by a bumper rabi harvest. The flood waters in most cases would recede in 8 to 10 days- a period of submergence the kharif paddy could often safely withstand. At a popular level living with floods was not only considered necessary but also desirable. The Darbhanga district gazetteer, speaking of the 1902 floods, says "In spite of the losses they sustained the cultivators in the north welcomed the floods. In the preceding year the rainfall had been deficient, and the winter rice crop had nearly failed in some parts. Here the floods were of comparatively short duration but they sufficed to replenish the empty tanks and wells, and left a thick deposit of silt, which was invaluable for the rabi crop an ensured a full winter rice harvest, where seedlings were available."

But due the policies adopted by Britishers and specially Indian policy makers about floods control, now this flood in now curse then boom. Which are explain in the following paragraph.

### **Drainage and Floods in North Bihar**

Drainage Comprises of Various rivers and streams which drain the area. The drainage pattern refers to the way they flow, the pattern they form on the surface which, in turn, are influenced by the surface relief and the rock arrangements beneath the surface. The drainage and drainage pattern of Bihar, has a nevertheless, been influenced greatly by the surface relief and climate. These rivers, as a powerful agent, have contributed in modifying the natural lands cape over which they flow.<sup>3</sup>

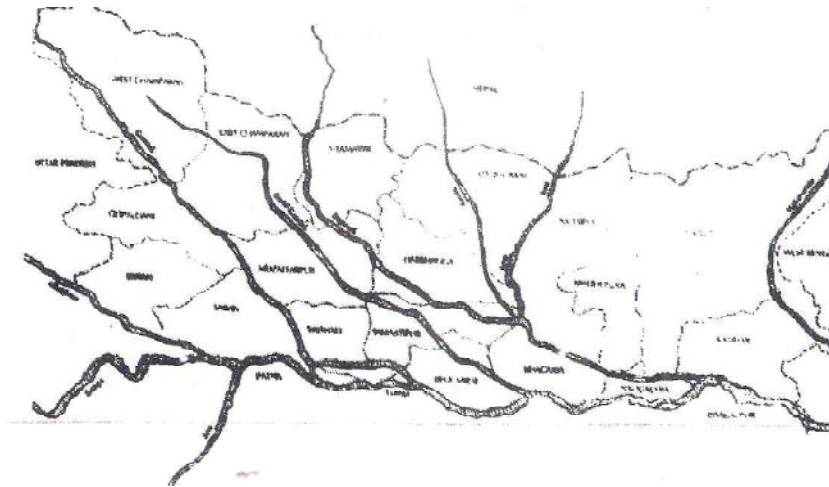


*Figure: North Bihar plains are drained by an extensive network of Rivers most of which flow into Ganga. (Cortesy-Flood, Flood plain and environmental myth, p.110)*

Ganga forms the main artery of the drainage system of north Bihar, under this category comes the Ganga and those rivers which rain her on its left bank. Important among them are Ghaghra, Gandak, Burhi Gandak, Bagmati, Kosi, Mahananda and other numerous smaller streams. They all have their origin in the Himalayas and are Snowfed Rivers. As a result they contain water throughout the year i.e, they are perennial rivers. Where they cross the hilly tracts of the Himalayas, they carry along with them a huge mass of eroded materials and as they enter they plain area, their velocity is suddenly checked and the debris mainly consisting of rough and coarser materials is deposited along their courses as they proceed towards their mouth. As soon as they enter the plains, they take a meandering course. Further sediments are added to it by lateral erosion, slip-off slopes etc. and the gentle gradient slackness its velocity

which causes silting of the bed and ultimately raises beds, changes in course and frequent floods become their common feature.

**The North Bihar Drainage**



*Figure: North Bihar is drained by an extensive network of Rivers, and practically all of them have their catchments in the Nepal Himalayas.*

**Flood incidence in North Bihar**

The available figures of the flood prone area in north Bihar reveal a very interesting feature. As per the figures contained in the BBA, report, 2.50 mha were flood affected in north Bihar in 1954. The draft annual plan (1988-89) for irrigation and flood control of the government of Bihar places the Flood prone area at 6.46 mha. This is 37.24 percent of the geographical area of the State (17.35mha) But this report glosses over the magnitude of the problem in north Bihar of the 6.46 mha that are flood prone, 3.78 mha fall in the north Bihar plains.

*Table 1.1 Flood Prone Area of Bihar*

<i>River basins</i>	<i>Flood-Prone Area Mha</i>
North Bihar Rivers	3.777
BurhiGandak	0.821
Gandak	0.500
Bagmati	0.322
Kosi	1.015
Mahananda	0.515
Kamla	0.370
Ghaghara	0.234

*Source: Govt. Of Bihar, Draft Annual plan 1988-89.*

This does not include the flood prone area in the Ganga basin, which is put at 1.13 mha given the fact that the Ganga floods areas on both its banks some 0.4 mha. Can be conservatively added to the estimate for the north Bihar plains. That would make the flood prone area of north Bihar to be 4.18 mha. In other words, almost 65.7 of the flood prone area of the state lie in north Bihar. As north Bihar has a total geographical area of 5.24 mha, this means nearly 80% of these plains are flood prone.

*Table 3:4 Flood –prone area of North Bihar*

Geographical area of Bihar	17.35
Flood prone area of Bihar	6.46mha
Of which in north Bihar plain	3.78mha
In Ganga basin	1.11mha
Total flood Prone area north of the Ganga in Bihar	4.18
Per cent of flood-prone area of Bihar(%)	65
Geographical area of north Bihar	5.24mha
Per cent of Geographical area flood- prone in north Bihar (%)	80

Source: Govt of Bihar, Draft Annual Plan 1988.89. Irrigation and Flood Control Water Resource Development and Flood Control Dept. Patna

Due to aforesaid reasons North Bihar districts, despite all efforts continue to get flooded regularly, causes extensive damage to life and property. Following table clearly shows the impact of floods in the region.

*Table 1.2 Flood damage trends in Bihar*

	Average annual crop area affected			Average annual population affected	Average annual total damage	Average annual crop damage	
	Average Annual Area affected	Actual (mha)	%of total affected (%)	(m)	(Rs.crore)	Actual (Rs.crore)	% of total damage (%)
1950s (1953-59)	1.18	0.67	57	4.25	12.65	10.38	82.05
1960s (1960-69)	1.00	0.45	45	43.75	14.14	13.37	92.85
1970s (1970-79)	1.89	0.75	40	9.18	121.92	83.15	63.03
1980s(1980-84)	1.64	0.74	45	7.17	83.20	61.55	71.98

Source: Govt of Bihar, Draft Annual Plan 1988.89 irrigation and Flood Control Water Resource Development and Flood Control Dept. Patna.

Year	Dist.	Blocks	Village	Person (Lakh)	Animals (Lakh)	Affected area (Lakh hect)	Cropped area (Lakh hect)	Estd. crop damage (Rs. Lakh)	House damage
2009	16	91	1546	22.03	1.346	11.05	0.475	2182.57	7674
2008	18	116	2585	49.95	12.1	8.824	3.672	3420.57	297616
2007	22	269	18832	224.43	27.13	18.83	10.603	76837.8	784328
2006	14	63	959	10.89	0.1	1.81	0.87	706.63	18.63
2005	12	81	1464	21.04	5.35	4.6	1.35	1164.50	5538
2004	20	211	9346	212.99	86.86	27.0	13.99	52205.6	929773
2003	24	172	5077	76.02	11.96	15.08	6.1	6266.13	45262
2002	25	6	8318	160.18	52.51	19.69	9.4	51149.6	419014
2001	22	194	6405	90.91	11.7	11.95	6.5	26721.7	222074
2000	33	213	12351	90.18	8.09	8.05	4.43	8303.7	343091
1999	24	150	5057	65.66	13.58	8.45	3.04	24203.8	91813
1998	28	260	8347	134.7	30.93	25.12	12.84	5737.6	199611
1997	26	169	7043	69.65	10.11	14.17	6.55	7169.2	174379
1996	29	195	6417	67.33	6.6	11.89	7.34	19514.3	116194
1995	26	177	8233	66.29	8.15	9.26	4.24	5616.33	297765
1994	21	112	2755	40.12	15.03	6.32	3.5	13950.1	33876
1993	18	124	3422	53.52	6.68	15.64	11.35	58.09	219826
1992	08	19	414	5.56	0.75	0.76	0.25	2361.03	1281
1991	24	137	4096	48.23	5.13	9.8	4.05	1818.8	27324
1990	24	162	4178	39.57	2.7	8.73	3.21	704.88	11009

Source: Disaster management Department Govt. of Bihar (year-2010-2011).

### **Policies of Food Control and Management**

During the first plan (1951-1956) flood control schemes were envisaged as a part of multipurpose river projects and no separate provision was made for flood control programme. As such there was a proposal to build dams on the flood-prone rivers of Damodar (Damodar valley Corporation), Kosi (Kosi dam at Barahkshetra in Nepal). It appears that multipurpose dams for flood control in India were intended more to articulate certain economic and political agendas rather than genuinely addressing the multifaceted problem of floods.

After formulation of the National Flood Control Policy in 1954, the dominant measure of flood control adhered to in north Bihar has been the construction of embankments. Since then all major north Bihar Rivers have been systematically embanked and the effort goes on to this day. As stated in a Bihar government report of December 1987, a total of 3,438 km of embankments had been constructed Bihar up to the end of 1986-87 of these, 2957 km fall in north Bihar.

About Rs. 375 crore has been spent on the construction of the embankment and Rs. 475 crore has been spent on their maintenance.<sup>4</sup> Still the balance sheet has an alarming story to tell. The flood prone area in Bihar shot up from 2.5 mha to 6.4 mha between 1954 and 1988. Recurrence of embankment failures has assumed unmanageable proportion. Flood damage cost has shot astronomically.

The construction of embankments has had a disastrous impact. Though the absence of data for a dependable evaluation of the performance of embankments is a severe constraint in making an objective assessment of their

impact, there are other reasonable indicators, which can help to judge them. Some of them are as follows.

In case of most of north Bihar Rivers, have gone up following the construction of embankments. The relief and rehabilitation Commissioner in his report on the floods of 1987 has explicitly admitted that siltation has had a negative impact on the flood discharge capacity of Kosi, the highest flood level (HFL) at Baltara (in 1987 ) exceeded the high flood level ever known by one metre. This happened when the maximum flood discharge was slightly above 14,100 cumecs where as the discharge of the Kosi was as high as 24,200 cumecs in 1954 and 1968. This shows that heavy siltation has occurred. <sup>5</sup>

This admission is a direct pointer to the way embankments have adversely affected the river's morphology. The figures on record flood levels and the incidence of breaches adding up to 90 in 1987-on the different rivers are further pointers to the problem created by embankments as a flood protection measures.

The natural fertilization of the flood plains has traditionally far outweighed the negative consequences. Farzand Ahmed of India today reports that "The Bagmati river project in sitamarhi district in Bihar (has) reduced the once fertile district area into a dust bowl." According to Ahmed, however, the farmers of the area welcomed the floods which time and again increased the land's fertility. As a local resident put it to him, "Until the embankment came up, the district was considered a gold mine with bumper crops almost every post-flood period. But now the district is a dry patch as the Bagmati water locally called amrit (nectar) has been caged. <sup>6</sup>

The Hindi daily Hindustan has also highlighted in its Patna edition (octo. 20, 1987) the devastation caused by the embanking of kamla Balan. The report quotes 80-year old prem shah, "prior to embankment construction, annual flooding would leave behind rich silt deposits ideal for dalhan (pulses) and telhan (oilseeds) cultivation without using manure and fertilizers. Following the construction of embankments, this potential for annual replenishment of slit was lost consequently, agriculture has become fertilizer and irrigation dependent' The Hindustan report goes on to add that while period to construction of embankments there is no record of loss of life the 1987 floods had left thousands dead in their wake. Elders of several villages also argued that in Benipatti sub- division where no embankment has been constructed, there has been little damage to life and properly and productivity, too, has not been adversely affected. <sup>7</sup>

All these factors, notwithstanding, certain experts argue that the losses suffered due to silt loss have been more than compensated by the cropped area protected from floods. Simply speaking, it is suggested that crops which would otherwise have been damaged by the floods stand protected in the wake of embankment construction. This is offsets the losses accruing from the loss of silt deposit.

Journalist Kuldip Nayar's report on north Bihar floods also quoted people claiming that dykes and embankments had brought disaster to them would have been better off if the flow of rivers had not been obstructed. In the old days, floods did less harm and they had learnt to live with them.<sup>8</sup> Prior to embankments, the rivers would swell gradually giving the people considerable warning time to retreat to safer quarter. The embankments, by engendering a false sense of security, have made the people complacent. They continue to occupy the hazardous flood plains till the breach occurs. This, coupled with the fury with which the flood waters now strike the adjacent countryside, has considerably added to the magnitude of the damage.

Drainage congestion has become a particularly significant problem in north Bihar with the construction of embankments as it fall in a heavy rainfall zone and consequently has a large run off. During heavy rains, there is run off from the field which then accumulates at all where embankments of two rivers meet. North Bihar is drained by an extensive network of rivers and because they have been embanked to a great extent, this particular aspect of drainage congestion has assumed a significant dimension. The impact of embankments on drainage congestion is testified to by the local populace. In their opinion, while the flood water would in most cases, subside in a week's time in the pre-embanked stage, it persists for a much larger duration in the post embanked phase with river beds rising after embanking, the protected area along with the embankment on rivers Kosi and Gandak is getting water logged. The programme evaluation organization of the Planning Commission in its report submitted to the RBA states. "On the negative side, the continued rise of river bed has created problems of seepage and drainage congestion, aggravating the water logging problem of the protected area, particularly in a strip along the eastern flood embankments."<sup>9</sup>

Most north Bihar Rivers have a shifting nature. The Central water Commission states that embankments along Kosi have at best served to jacket the river and thus, prevent inundation of nearby land. No effort has been made to identify a stable regime for the river and channelize it into this course. Unless this is done, the river would continue shifting its course within the embanked area and attacking the embankments. The incidence of breached has been very high in north Bihar embankments.<sup>10</sup> Apart from embankments, communication networks like road and railways which have inadequate provision for water ways, have played a major role in creating this problem. All major roads and railway lines run from east to west, thus cutting across the natural drainage as the rivers flow from north to south. Inadequate water-ways on bridges build up the volume and velocity of flood waters. Both upstream and downstream of the bridge, the river attacks is banks with added fury, eroding it and subsequently inundating the adjacent country side.

The inadequate provision of culverts on roads and railways has also aggravated drainage congestion. Flood waters remain in the fields long after the actual flood. Since the groundwater table is already high, this leads to

permanent water-logging and salinity has become an imminent danger over considerable tracts. Even the canals that have been laid out in the region cut across natural drainage and they too, have inadequate cross-drainage works. Thus they have also contributed their bit to drainage congestion.<sup>11</sup>

While conceding the limitation of embankments as flood control mechanism, the expert Committees set up in the wake of 1987 floods, nonetheless, recommended a further elevation of the existing embankment. The government argued that until the time big dams came up in the Nepal Himalaya, it will be forced to stick to embankment construction as a measure of flood control.

### **Critical assessment**

As described earlier that drainage congestion is the main problem due to various reasons but no attempt is made to get into the causes from which it stems. While siltation is stressed as an important aspect of the problem, no attempt is made to explain its likely impact on the river bed in case of embanked rivers. Inundation is related to excessive precipitation.

The mounting cost of anti erosion works due to shifting courses is conceded but little effort is made to evaluate the sagacity of embankment construction in a situation like these Breaches in embankments and canals are enumerated but their causation is attributed to the excess of nature. The problem of water-logging is admitted in the major irrigation schemes but is made out to be managerial causes rather than an environmental, one. There is a never-tiring effort to rationalize the measure taken till date. Their persistent effort is to place the blame squarely on the unpredictability of natural phenomena and, to the extent human accountability is to be considered, on the shoulders of Nepal.<sup>12</sup>

The available facts clearly show that flood control measures have been ineffective. Despite all efforts, north Bihar districts continue to get flooded regularly. As per the figures contained in the RBA report, 2.50 mha were flood affected in north Bihar in 1954.

The draft annual plan (1988-89) for irrigation and flood control of the government of Bihar places the flood prone area at 6.46 mha. Above facts show that almost 65% of the flood prone area of the state lies in north Bihar. As north Bihar has a total geographical area of 5.24 mha, this means nearly 80% of these plains are flood prone.

The RBA report further states, by construction of 2,957 km of embankments in north Bihar and some channel improvement works about 2.73 mha has been given some reasonable degree of flood protection. Thus, out of a total of 4.18 mha of flood prone area in north Bihar, 2.76 mha have given a reasonable degree protection. This leaves 1.45 mha as unprotected. In 1987, 3.12 mha were affected in the state until august, of which 2.47 mha were affected in north Bihar. Even if one takes the entire unprotected area (1.45 mha) to be flood affected, that still leaves 1.02 mha of protected area as being flood affected. This accounts for an almost 40% failure of the flood protection works in north Bihar.

The above discussion also shows that flood prone area in the north Bihar plains has gone up phenomenally – from 2.56 to 4.18 mha – since 1954. The draft annual plan itself admits, ‘Despite the amount of investment, flood damage continues to be a major problem of the state.’ But the report only calls for more and higher embankments. “It may be mentioned that the policy laid down by governments of India is that the embankment should be designed in urban and, strategic location for a 100year flood and in other cases for a 25-years flood”. This means that the embankments are not intended to provide protection beyond a specific magnitude of flood. The report also adds, “The major rivers of north Bihar originate far away from the northern border of the state, in Nepal. Long terms measures of flood control, such as construction of storage reservoirs with earmarked flood cushions are thus possible only if such measures are permitted to be located beyond the border of the state (in Nepal). This is one of the reason due to which the flood control measures in the flood prone region of north Bihar has to be limited to only short-term measures.<sup>13</sup>

Therefore, the policy of embankment as important tools of flood control, Sought to be rationalized on the plea that until efforts are undertaken to build dams in Nepal, such a policy perforce has to be taken recourse to. Meanwhile, embankment construction is facing more and more financial constraints. With constructed embankments failing to control floods, more and more money is being used to repair, widen and elevate the existing ones. Consequently, the pace of extension of flood protection works has come down considerably. As the relief and rehabilitation commissioner’s states, “In view of the fact that 72% to 75% of the outlay on flood control gets spent on the new anti-erosion works or their repairs, it is difficult to provide funds for the protection of additional areas.”

Non-completion embankment further aggravates the problem of flooding in non-embanked section. Therefore the Relief and Rehabilitation commissioner report argues, “The spills of the river up in Nepal bypass the embankment and inundates protected area in Bihar. This necessitates continuation of the embankments in Nepal up to the uppermost spilling reach.”

The Bihar Government is caught up of in a financially insurmountable situation as far as its flood protection objectives are concerned.

Thus, Flood protection works have proved unsuitable not only on technical and environmental grounds, but their financial viability is also an impossibility. However, it offers to the state a self defeating cyclic logic. Responsibility for failure of flood protection works can always be pinned on inadequate investments without forcing the government to look for a new policy for flood control. Dissent is mellowed by playing up the Nepal factor, namely, stressing that deforestation in Nepal is responsible for the excessive siltation in north Bihar Rivers and that storage reservoirs in the Nepal Himalaya are the only

viable solutions to the problem. The scientific evidence of a strong link between deforestation in Nepal and flood in north Bihar plains is at best tenuous.<sup>14</sup>

The reclamation of terai swamps in Nepal may have affected the current status of floods, though again the evidence is scanty, as this is a very under researched area. C.C. Patel, irrigation Secretary in the Union government, has recommended No large scale reclamation of swamps, bils, chrs and tals (which act as detention basins) should be undertaken as this would cut off most valuable valley storage which has been moderating the floods.<sup>15</sup>

### **Conclusion**

Bihar continues to languish under the recurring impact of flood while the scale of damage might vary from year to year; it has displayed a consistent pattern. Apart from direct damaged floods have caused massive disruption in the lives and economy of the affected region with ripple effects. Not just in the flooded areas and not confined to the actual periods.

The present flood control measures of the Bihar government have been grossly misplaced. Most of it has been characterized by a high degree of adhocism which over the year has gravely complicated the problem. An observation made a geologist Sobrata Sinha of Geological survey of India flood control measures had been characterized by an exclusive emphasis on development by construction and not conservation."<sup>16</sup>

In Bihar primary emphasis has been on flood modification through protection works, particularly embankments, which creates problems like non productivity of land, drainage congestion, water logging, and enhance intensity of Floods. The policies of Flood management should modify which are explained in the above paragraph of the paper, which would channelize the natural resources i.e water in the process of development at the state.

### **References**

1. Kale.V. S. (1997). Flood studies in India: A brief review Jour. Geol. Soc-India. v. 49,pp.359-370.
2. Sarda Nand Chaudhry, Geography of floods in North Bihar, Darbhanga, 1993.
3. Mrs. Anima Singh, Drainage and floods in North Bihar. P. Dayal, Md. Ataulah, A. Sami (ed), Bihar Resources and Planning.
4. Bindeshwari Singh, River Embankments of no avail, Indian Express, New Delhi, April 26, 1988.
5. Government of Bihar, Memorandum on Floods in Bihar, July and August, 1987, Relief and Rehabilitation Department, Patna.
6. Farzand Ahmad, "The Bagmati Blunder", India Today, New Delhi, Dec 15, 1982.
7. Willaim J. Cosgrone- Water Resource Sector in the coming Decades: Global perspective (ed) kamta Prasad-Water resources and Sustainable Development, p.105.

8. Kuldip Nayar, 'Thousands in Bihar Face Death, the Tribune, Chandigarh, Nov.22, 1987.
9. Rastriya Barh Ayog, 1980, Report, Volume I, Ministry of Energy and Irrigation, New Delhi.
10. Central Water Commission, The Kosi River; Its Morphology and Mechanics in Retrospect and prospect, vol.1, Central Water Commission, New Delhi, April, 1982.
11. *ibid*, p-110.
12. *ibid*, p-113.
13. Government of Bihar, Memorandum of Floods in Bihar, July and August, 1987, Relief and Rehabilitation Department, Patna.
14. *ibid*, p-114.
15. C.C. Patel and National Policies and International Co-Operation, Keynote paper, Secretary, Ministry of irrigation, Govt. of India, Miemeo.
16. Subrata Sinha, Problems and Prospects of Flood Control in Eastern India, Miemeo.

# Marketing of the Products of Barauni Refinery

---

---

**Dr. Hira Lal Pandit**

*Department of Economics  
P.R. College of Sonpur, Saran (Bihar)*

Indian refineries Ltd. And Indian oil company Ltd. Were set up in 1958 and 1959 respectively to build national competence in the oil refining and marketing business on first September 1964. After independence these international companies built three refineries in private sector. Two Bombay and one at Vishakhapatnam.

Barauni refinery is situated at 10 km. west from Begusarai, 9 km. north from Ganga bridge (Rajandra bridge). It is established in north Bihar, which was the only agriculture area in that time.

The product are directly sent to marketing terminal of Barauni Refinery by way of pipeline from oil movement and storage (dispatch) to marketing terminal where the products are exported to all parts of Bihar by tank lorries etc. some finish products are sent to Kanpur by Barauni – Kanpur pipeline) where catering the areas of Mugalsarai, Kanpur, Gorakhpur, Siwan etc. to meet the extra demands of petroleum products to each and every place. Indian oil corporation limited has launched a jubilee retail outlet on highways, conenio, INDANE LPG etc. The jubilee outlet provided by Barauni Refinery management at two location left and right side of township at national high way 31. This jubilee retail outlets have comprehensive value added facilities like motels, restaurants, parking lots, weigh bridges sale of tyres, batteries, accessories, agricultural machinery repairs and recreational facilities. Apart form this free air check, medical etc, This jubilee outlets have a convenio(shopping stores, snap services, quick lube change, automatic car wash and multi products dispensary pumps.) The area of marketing the valuable petroleum products covers all the district of Bihar and Jharkhand states, Kanpur, Mugalsarai etc. as employees of Indian oil corporation limited where a recent launched CITIBANK CARD which is only expected at Indian oil petrol pumps where employees can take as much fuel and shopping items on credit.

The network of Indian oil marketing is 18000/- sales points which is the largest in the country. The INDANE LPG is being marketed in as many as 1335 town with a customer population of 170 lakhs served by a network of 2902 distributors. Indian oil is the only largest network of petroleum product marketing terminals. The highest ever petrol pump in the country in between 10 km is Barauni Refinery 'o' mile to Begusarai station. As the petroleum products sealed through this pumps are not enough to meet the additional

requirements for the nearby area. The facility like free air check medical, stationery stores, motels, restaurant, weight bridge, STD booths etc. are not functioning in this pumps so the Indian oil corporation limited had planned to adopt to sell their petroleum products by way of its jubilee outlets adjust ion to their company near high ways giving all facility in one face. Barauni Refinery had also tried to supply their petroleum products to other companies like Bharat Petroleum corporation limited area office, Barauni, Hindustan petroleum Corporation limited, area office, Barauni and IBP, area office Barauni. They take the petroleum products from marketing terminals of baruani and sell in their names to meet the additional requirement of the customers nearby and in and around the state. As BPCL/HPCL/IBP has their own terminal at many locations so they can get the petroleum products easily from our company. These also an achievement for us because our products are sealed in other name in different part of the country.

The Barauni refinery after the implementation of the SAP/ERP System at Barauni Refinery then all the employees' related and day to day work can be monitored by the single terminal. As many employees waste time in getting details regarding of their personal aspects. Which can access easily sitting in the work place if having a PC at work place? The working affectivity will be increased the profitability.

Indian Oil's Marketing network is speed throughout the country with over 18 . 000. sales points (the largest in the country. ) These include petrol/diesel vices at the most reasonable cost. The "New Look". Petrol/ diesel service stations selectively have a "Convention". Shopping stores, snap services, quick Lube change automatic car wash and multi-product disposing pumps. To facilitate easy transaction, many of our stations accept major credit cards. In fact, Indian Oil and City-Bank have launched a special co-brand card-"Indian Oil Citibank Card". Which is not only accepted at IndianOil petrol stations but at many restaurants, shops, airlines etc? Also Indian Oil's tie-up with Coca- cola ensures that selects petrol stations stock and dispenses "Coke". Thus quenching the thirst of the vehicles and the motorists.

Indian Oil's "INDIAN LPG" is being marketed in as many as 1335 towns with a customer population of 170 lakhs served by a net work of 2902 distributors-one of the largest net works in the worked. Servo lubricant range is the largest selling lubricant brand of lubricants in India.

Liberalization is the downstream oil marketing seeter more players more players would beken to eater the business of bulk and retail marketing of the product would be determined based on tariff adjusted in part parity price. The industry is expected to the experience rationalization of price. The industry is expected to experience rationalization of price policy in order avoid frequent changes of price in response to movements in international crude oil prices.

# Resource Mobilization for Universal Old Age Pension in India

---

---

Prashant Prakash

## Abstract

While most of literature and analysis regarding Social Security in India have focused on the 'expenditure' side of the issue, little has been said about how to 'finance' the same. Introducing to the state of old age pension provisions in India, the paper presents various cost estimates that are given for universal old age pension in India and where India stands internationally at its social contributions mobilization efforts. Then it tries to explore taxation policy as a tool for financing the same. Comparing India's tax base and progressivity across G-20 countries, the paper discovers India's poor performance on almost all parameters. Doing some preliminary calculations on the basis of available data and taking support from existing literature, paper finds that ample scope exist in Indian tax structure for increased revenue mobilization. Paper concludes with a view that, given a political will by the government, taxation policy can be used as an instrument, to raise enough revenues for funding a Universal Old Age Pension in India.

## Introduction

The Union government in India provides an old age pension of Rs 200 per month under the Indira Gandhi Old Age National Pension Scheme (IGOANPS). However this pension is limited only to citizens above 65 years of age and people who are Below Poverty Line (BPL). Poverty Line statistics in India have been debated a lot for exclusion and inclusion error in same regarding the poor. This has considerably reduced the amount of beneficiary of old age pension to meagre 1.65 crore as against 8 crore people who should have been rightfully included by this scheme<sup>2</sup>.

Increasing of monthly pension to around Rs 2000 per month, reduction in age of beneficiaries from 65 to 55 years and universalization of pensions irrespective of poverty line statistics, as demanded by Pension Parishad<sup>3</sup>, can result in old age pension costs of around Rs 1,90,000 crore for the government<sup>4</sup>. This turns out to be around 2 % of GDP. A major hurdle facing this demand of the Pension Parishad is the fiscal deficit limits set by the Fiscal Responsibility and Budget Management (FRBM) Act 2003. In this context taxation policy for revenue mobilization for increased expenditure on social security becomes important. Internationally Social contributions mobilized by government are actual or imputed receipts from either employers on behalf of their employees or from employees, self-employed, or non-employed persons on their own

behalf that secure entitlement to social benefits (including old age pension) for the contributors, their dependents, or their survivors. The contributions may be compulsory or voluntary<sup>5</sup>.

Comparing the social contributions raised by government across various countries shows that India performs very poorly in its efforts regarding same. A quick comparison on basis of IMF Government Finance Statistics 2011 shows that India ranks around 77<sup>th</sup> in terms of social contributions raised as percent of GDP<sup>6</sup>. While India raised 0.02 % of GDP as social contributions in year 2009, it ranked lower than many developed and developing countries. France ranked top by raising around 18.45 % of GDP as social contributions.

Here it need to be mentioned that OECD countries are so strict about social contributions collections that OECD documents treats social security contributions<sup>7</sup> as tax payments because they are *compulsory, unrequited payment to the general government*. Comparing the social contribution efforts at G20 level, in table.1 below, also shows that India performs poorly with respect to other developed and developing countries and ranks almost last in terms of social contributions raised as percent of total revenue raised.

*Table:1 Social Contributions across G20 Countries*

<i>Country</i>	<i>Year</i>	<i>Social Contribution(% Revenue)</i>
Germany	2009	38.5
France	2009	38.1
Japan	2009	35.7
Italy	2009	30.3
Brazil BCG	2009	26.1
US	2009	22.4
Argentina	2009	21.3
Turkey	2009 P	21.3
UK	2009	21.2
Mexico	2009	16.7
Korea	2008 P	13.0
China	2008 P	12.8
Canada	2009	12.7
Russia	2009	11.6
South Africa	2009 P	1.8
India CG	2009 F	0.2
Australia	2009 P	0.0
Indonesia BCG	2009 P	0.0

Source: 1. IMF Government Finance Statistics,

2. For Mexico and Argentina, Revenue Statistics in Latin America 2012.

Note: 1. Figure for Mexico and Argentina are for Social Security Contributions

2. BCG (Budget Central Government), CG (Central government)

With 0.2 % of total revenue realized as social contributions India ranks last among G20 countries, beating only Indonesia and Australia. Among developed figure is as high as 38.5 % for Germany and all other BRICS countries also finds themselves comfortably far above India.

Given the fact that most of social contributions classification is based on contributions by employers, employee or self-employed, it becomes imperative to have a look at the labour employment statistics in India. While unorganized sector contributes around 50 % of GDP, it employs nearly 93 % of labour force on India (NCEUS 2008). These figures clearly shows that unorganized sector by itself won't be able to share the burden of providing social security to the disproportionately high share of labour it employs vis a vis production contributed. This calls for effective resource mobilization from the organized sector which though produces 50 % of GDP, but employs only around 7 % of labour force. Hence sector specific resource mobilization policy in India calls for a two pronged strategy. While on one hand all efforts should be made by the government to bring unorganized sector in each industry under the tax net, on other hand efforts should be made to mobilize additional revenue from organised sector by higher effective taxation in form of surcharge or a cess.

Unorganized sector worker is defined to include persons whose employment relationship is, in law or practice, not subject to labour legislation, social protection and certain employment benefits (NCEUS 2006). This labour in unorganized sector is hardly in position to make contributions for social security benefits given the fact that they are not even receiving minimum wages fixed by the government. According to NCEUS 2007, among casual workers around 83.72 % of workers in rural India and 57.20 % of workers in urban India were getting wages below minimum wage level Rs 66 per day. Among regular workers in rural sector 57.27 % of workers in non-agricultural unorganized sector and 56.80 % of workers in non-agricultural organized sector received wages less than minimum wage level. For regular workers in urban sector around 47.20 % of workers in non-agricultural unorganized sector and 34.35 % of workers in non-agricultural organized sector received wages less than minimum wages. Problems are further amplified by huge skill gap that exist between organized and unorganized sector and gender discrimination in payments.

In backdrop of this analysis, it can be safely asserted that labour in India is not at all in a position to contribute for the social security benefits and hence main responsibility for same should be shared by the government and the employer. For this purpose the government needs to mobilise additional resources using taxation policy and at same time try to look out for industry and sector specific solutions for tackling the social insecurity that labour in India is facing. Also given the dismissal performance of India at international level, it won't be irrational if government decides to go for a Social Security Cess on lines of Education Cess for raising resources for universal old age pension. For the year 2011-12, total tax revenue raised by centre and state government combined were Rs 14,62,864 crore<sup>1</sup>. Levying a cess at 3 % on lines of education cess can help raise Rs 43,885 crore and levying a cess at 5 % can

help raise around Rs 73,143 crore. This cess is also not expected to increase tax burden on the economy as India already has one of lowest tax-GDP ratios across developed and developing countries and many of tax policies are already so liberal that they are resulting in considerable revenue loss for the government.

Section I of the paper introduces us to tax base and structure in India by comparing same across G20 countries. Section II deals with specific tax policies in India and how can same be used for increased revenue mobilization. Paper later concludes by collating findings of the preceding sections and drawing from analysis carried out in same.

## Section I:

### Tax Base and Tax Structure across G20 Countries

This section tries to show that potential of taxation policy to mobilize resources for social sector spending, including food security, has been grossly underutilised in India. Paper justifies these claims by first comparing tax base in terms of tax-GDP ratio across G20 countries and then comparing progressivity of tax structure in terms of share of direct taxes in total taxes across G20 countries.

#### Tax Base across G-20 Countries

With a Total tax-GDP ratio of 15.5 % (as of 2009-10), India has one of the lowest tax bases among G-20 countries (beating only Mexico and Indonesia), as given in Table.1 below. In addition to BRICS countries like Brazil (25.4 %), Russia (22.9 %), China (18.9 %) and South Africa (26.5 %); other developing countries like Argentina (24.7 %) and Turkey (21.1 %) also perform better than India. Needless to add that all developed G-20 countries perform much better with tax-GDP ratio figures as high as 28.7 % (for Italy).

*Table:2 Tax Base Comparison across G-20 Countries*

Rank	Country	Year	Total Tax Revenue (as % of GDP)	Rank	Country	Year	Total Tax Revenue (as % of GDP)
1	Italy	2010	28.7	11	Turkey	2010	21.1
2	UK	2010	28.5	12	Korea	2010	19.4
3	South Africa	2010	26.5	13	China	2009	18.9
4	Canada	2010	26.4	14	US	2010	18.4
5	Australia	2010	25.9	15	Japan	2010	16.5
6	France	2010	25.6	16	<b>India</b>	<b>2009-10</b>	<b>15.5</b>
7	Brazil	2010	25.4	17	Mexico	2009	14.5
8	Argentina	2009	24.7	18	Indonesia	2010	10.9
9	Russia	2010	22.9				
10	Germany	2010	22.4		G-20 Avg.	2009/10	21.9

\***Source** – Compiled from the data provided in:

Government Finance Statistics 2011, IMF

For Argentina and Brazil, Revenue Statistics in Latin America, 2011 OECD/ECLAC/CIAT

For India: India Public Finance Statistics 2011-12, Ministry of Finance, Government of India.

For Mexico and OECD: Revenue Statistics 2011. OECD

- \*Note:**
1. For comparability of data between OECD Revenue Statistics, IMF Government Finance Statistics and United Nations System of National Account see *Annex A, Revenue Statistics 2011, OECD*.
  2. Figures are for General Government except for Indonesia; Indonesia figures are for its Central Government's budgetary transactions, as it has a unitary form of polity.
  3. No data exist for Saudi Arabia

We may also note here that the tax-GDP ratios reported here are those in which the tax revenue figure does not include social security contributions (if any). However, the methodology adopted in some of OECD's publications does make a strong case for including social security contributions (which are compulsory, unrequited and made to the government) in the tax revenue figures for countries. Hence, if we take into account the tax-GDP ratios for all these countries including the social security contributions, the differences between their figures and those of India would be even bigger.

### Tax Structure across G-20 Countries

Direct Taxes comprise taxes on i) Income, profits and capital gains and ii) Property. Unlike Indirect taxes, Direct taxes are linked to the tax-payer's ability to pay and hence are considered to be progressive. In order to expand the tax 'base' in India in a *progressive* manner, new avenues within Direct taxes should be explored. However, with Direct tax share of 37.7 % in Total taxes, India's tax 'structure' is perceived to be less progressive. This is further confirmed by comparing the same with other G-20 countries in Table.2 below. Even developing countries like South Africa (57.5 %), Indonesia (55.85 %) and Russia (41.3 %) have a more *progressive* tax 'structure', in terms of the contribution of Direct taxes to Total tax revenue. All developed countries that are part of the G-20 have greater share of Direct taxes in their Total taxes than India, with figures as high as 75.8 % for USA.

*Table:3 Tax Progressivity across G-20 Countries*

Rank	Country	Year	Direct Taxes Revenue (as % of Total Tax Revenue)	Rank	Country	Year	Direct Taxes Revenue (as % of Total Tax Revenue)
1	USA	2010	75.8	11	Korea	2010	50
2	Canada	2010	68.8	12	Russia	2010	41.3
3	Australia	2010	65.8	<b>13</b>	<b>India</b>	<b>2009-10</b>	<b>37.7</b>
4	Japan	2010	61.2	14	Mexico	2009	36.6
5	UK	2010	60.9	15	China	2009	33.2
6	South Africa	2010	57.5	16	Brazil	2010	32.1
7	Indonesia	2010	55.85	17	Argentina	2009	32
8	France	2010	53.7	18	Turkey	2010	28.9
9	Italy	2010	52				
10	Germany	2010	51.4		G-20 Avg.	2009/10	49.92

\*Source: Calculated from the data provided in: Government Finance Statistics 2011, IMF For Argentina and Brazil- Revenue Statistics in Latin America 2011, OECD/ECLAC/CIAT For India- India Public Finance Statistics 2011-12, Government of India For Mexico and OECD- Revenue Statistics 2011, OECD

**\*Note:** 1. Figures are for General Government except for Indonesia; Indonesia figures are for its Central Government's budgetary transactions.

Therefore as shown from the analysis above, narrow tax base and lack of progressivity in tax structure can be said to be two of main weaknesses plaguing the Indian tax system. Searching for possible reasons for same and to suggest possible policy interventions to correct it, the following section try to have a look some specific tax policies in India.

## Section II Tax Policies in India

### 1. Personal Income Tax

While the Budget 2013-14 has proposed surcharge of 10 % on people with taxable income above Rs 1 crore (\$ 0.18 mn) per annum, this will increase effective peak tax rate on super rich to 33.99 % as compared to present 30.9 %. However, even at 33.99 % India peak tax rate falls below G20 headline peak tax rate average of 37.8 % as shown in table.3 below. Also at 43.8 %, developed countries within G20 have average peak tax rate far above India.

*Table: 4 Peak Personal Tax Rates across G20 Countries for Year 2013*

Rank	Country	Peak Tax Rate (%)	Rank	Country	Peak Tax Rate (%)
1	Japan	50	11	Korea, Republic of	38
2	United Kingdom	50	12	Argentina	35
3	Australia	45	13	Turkey	35
4	China	45	14	India	30
5	France	45	15	Indonesia	30
6	Germany	45	16	Mexico	30
7	Italy	43	17	Brazil	27.5
8	South Africa	40	18	Russia	13
9	United States	39.6	19	Saudi Arabia	-
10	Canada	39		G-20 Avg.	37.8

Source: KPMG<sup>9</sup>

Note: For Canada figure are for federal and provincial combined

For India adding 10 % surcharge and 3 % education cess makes effective tax rate 33.99 %

Another matter of concern is the high annual income level of Rs 1 crore ( \$0.18 mn ) above which peak tax rate will apply. Applying peak tax rate at income slab of Rs 20 lakh ( \$0.037 mn) per annum could have increased the tax base by considerable amount. As table.4 below shows that for year 2011-12, Rs 93,229 crore (\$17.1 bn) were collected from 4.06 lakh (0.4 mn) people with annual taxable income above Rs 20 lakhs (\$0.037 mn). If these people were taxed at 40 % instead of 30 % then additional Rs 31,076 crore ( \$ 5.7 bn) could have been realized by the government.

**Table: 5** Number of Income Tax Payers in the different Tax Slabs for FY 2011-12

Estimated number of taxpayers			Estimated Tax collected	
Slab	Number (in lakhs)	Percentage of taxpayers	Rs Crore	Percentage of Tax collected
0-5 lakh	288.44	89.0	15,010 (\$2.8 bn)	10.1
5-10 lakh	17.88	5.5	21,976 (\$4 bn)	14.8
10-20 lakh	13.78	4.3	17,858 (\$3.3 bn)	12.1
>20 lakh	4.06	1.3	93,229 (\$17.1 bn)	63.0
Total	324.16	100	1,48,073 (\$27.2 bn)	100

\*Source: Parliament Standing Committee on Finance (2012)

Another weakness at personal income tax level in India is low compliance level. Various earlier reports by Comptroller and Auditor General of India have shown that India has compliance level way below 50 %. Low peak tax rates and low compliance level together have resulted in a miniscule share of personal taxes in total taxes at 12.2 % for India compared to G20 average of 26.7 %, with figure going as high as 46.2 % for USA.

## 2. Corporate Tax

In recent years though share of corporate taxes in Direct and Total tax collection have increased considerably still the tax collection from corporate in India is far below potential. In fact there exist a huge gap in statutory corporate tax rate (32.44 %) and Effective rate of corporate tax (22.85 %) in India due to various exemptions by the government and sophisticated tax planning by corporate. Corporate income tax exemptions, in central government tax system alone, resulted in Rs 61,765 crore (\$11.4 bn) of revenue forgone in year 2011-12, which comprised around 0.7 % of GDP.<sup>1</sup> Budget 2012-13 explicitly mentions that majority of companies contributed disproportionately lower amount of taxes in relation to their profits. A miniscule 6 % of total companies accounted for 29.75 % of total corporate profits, but contributed only 15.04 % in total taxes paid. Effective tax rate paid by these companies was below 20 %.

Around 50 % of domestic firms also engage in domestic transfer pricing by parking their profits in low tax SEZs. Real estate firms also route transaction through hundreds of subsidiaries and associate companies<sup>2</sup>. This shows amount of tax dodging done by domestic companies via intra firm transaction. Hence if India want to make its tax 'structure' broad based and more *progressive*, it needs to come out with policy options that check the aggressive tax planning, resorted by corporates, to legally avoid taxes in India.

## 3. Tax Exemptions /Revenue forgone

Budget 2012-13 estimates the total magnitude of tax revenue forgone due to exemptions/ deductions/ incentives in the Central Government tax system to

be around Rs. 5,33,582 crore (\$98.4 bn) for 2011-12, which is a staggering 6 % of GDP. Budget 2012-13 also accepts that revenue forgone is showing an upward trend over time. Exemptions for indirect taxes (Rs 4,32,442 crore)(\$79.8 bn) were far greater than direct taxes for 2011-12, and of all the taxes, the highest proportion was in the case of Customs Duties followed by Excise Duty as shown in table.5 below.

**Table: 6** Revenue Foregone by Union Government during 2011-12 (in Rs. Crore)

Items/Year	Revenue Foregone	Revenue Foregone
	(Rs Crore)	(% of GDP)
	2011-12	2011-12
Corporate Income Tax	61765.3 (\$11.4 bn)	0.7
Personal Income Tax	39375.4(\$7.3 bn)	0.4
Excise Duty	195590 (\$36.1 bn)	2.2
Customs Duty	236852(\$43.7 bn)	2.7
Total	533583(\$98.4 bn)	6.0

Source: Union Budget 2013-14

Customs tax exemptions on gold and diamond alone accounted for Rs 65,975 crore (\$ 12.2 bn) of revenue forgone in year 2011-12. In 2011-12, India imported gold worth \$53.6 billion<sup>1</sup> which turned out to be one of the main factors for a large current account deficit (CAD) that India is witnessing now. Increasing import duty on these imports by 4 % could have helped mobilise around Rs 12,393 crore (\$2.3 bn) or could have helped arrest the current account deficit.

#### 4. Capital Gains Tax

Capital gains tax is tax paid by individual on gain accrued by him due to appreciation of any asset / capital possessed by him. Asset can be real or financial. Capital gains on real estate are grossly under-reported in India to escape tax. As regards capital gain on financial assets, for transactions that have paid Securities Transaction Tax, gains accrued on listed securities held for more than one year are exempt from any tax and gains on listed securities held for less than one year are taxed at 15 %. This make India as one of few countries, like Turkey, among G20 which exempts individual from capital gains tax specifically based on the criteria of holding period.

Bagchi (2007) has estimated that elimination of long term capital gains tax in 2004-05 and taxing of short term capital gains tax at flat rate resulted in revenue loss of Rs 14000 crore (\$2.6 bn) and 15000 crore (\$2.7 bn) respectively in year 2005-06. Hence liberal capital tax regime is resulting in considerable revenue loss for government which amounted to around Rs 29000 crore (\$5.3 bn), i.e. 0.78 % of GDP in 2005-06.

#### 5. Wealth Tax and Inheritance Tax

India has a very narrowly defined and non progressive wealth tax structure. As regarding wealth inequality in India, latest India Human Development

Report (IHD) 2011 released by Planning Commission presents a highly skewed distribution of assets in India, with the top 5 % of the households possessing 38 % of the total assets and the bottom 60 % of households owning a mere 13 %. The number of dollar billionaires in India as per the Forbes list has also risen from 13 in 2003 to 55 in 2011. The combined net worth of these 55 dollar billionaires stood at over \$240 billion (Rs 13,04,920 crore) in March 2011<sup>2</sup>. If these families are taxed an Inheritance tax equal to USA's highest rate of 55 %, then Rs 7,17,706 crore (\$132.4 bn) can be realised over a spread of 45.4 years<sup>3</sup>, giving an annual revenue of Rs 15,808 crore (\$2.9 bn)<sup>4</sup>. According to another estimate, India has at least 8200 ultra-high net worth individuals worth at least US\$ 945 billion<sup>5</sup> (Rs 51,38,140 crore) while the collection of Wealth Tax was just about Rs. 1000 crore (\$0.2 bn) in 2011-12. If the wealth of these individuals are taxed at even at present low level of 1 % around Rs 51,381 crore<sup>1</sup> (\$9.4 bn) can be realised annually.

Also, Wealth Tax mobilized only around 0.007 % of GDP in India (in 2009-10), as compared to 0.89 % in France, 0.32 % in Argentina, 0.2 % in Canada and 0.1 % of GDP in Italy (IMF GFS 2011). Estate Duty (Inheritance Tax) was suspended in India in 1985 and Gift tax collections are far too minimal to be calculated in terms of GDP. However, these taxes have ratios of around 0.05 % of GDP and 0.04 % of GDP for Brazil and South Africa respectively (as of 2010). Figure for France (0.39 %), Korea (0.25 %), USA (0.24 %), Germany (0.19 %), UK (0.17 %) and Italy (0.03 %) also implied a significant reliance on Estate, Inheritance and Gift taxes (as of year 2010).(IMF GFS 2011)

## **6. Service Tax**

Service sector contribute 59 %<sup>1</sup> to GDP, however its share in total tax revenue of general government is only miniscule 5.5%<sup>2</sup>. However, around Rs10000 crore (\$1.8 bn) to Rs15000 crore (\$2.7 bn) have been added additionally, by service tax to the government treasury annually. Also since June 2012, Service Tax has been broadened to cover all services except a well-defined negative and exemption list. This can help government mobilize around Rs 1,27,000 crore (\$23.3 bn) as compared to Rs 97,000 crore (\$17.8 bn) during 2011-12.<sup>3</sup> Hence Rs 30,000 crore (\$5.5 bn) can be raised with immediate effect and if services grow at same rate of 7 to 9 %, as in past, then sustained increase can also be expected in future.

## **7. Urban Local Body Tax**

Municipal Property tax is an important source of local revenue in many countries (Lall and Deichmann 2006). However urban property tax levied by municipalities is an underused source of revenue in India. In a study done for Thirteenth Finance commission, the all-India collection of property tax yield, blown up from the 36 city sample, was estimated to be between a low of Rs 6274 crore (\$1.1bn) and a high of Rs 9424 crore (\$1.7 bn). Even at high end it amounted to just 6 % of gross rental value of urban dwellings as estimated in the National Accounts Statistics.<sup>4</sup> Municipal Property tax revenues could

increase to Rs. 22,000 crore (\$4 bn) to Rs 32,000 crore (\$5.8 bn), merely by bringing all cities to an 85 % coverage level and 85 % collection efficiency, without changing any other variables (Government of India 2009).

## **8. Agriculture Income Tax**

Structure and organization of agricultural operations has changed in India in recent times indicating that there is an increasing presence of both commercial crops and commercial participants in this sector. While agriculture accounted for about 12.3% of gross domestic product (GDP) in 2009-10, its contribution to taxation is limited to the value added tax (VAT) paid on some of the products and the agricultural income tax paid on a few plantation crops like tea. If agricultural incomes too were treated on par with other incomes and subject to income tax, a potential revenue in the range of Rs 50,000 crore (\$9.2 bn) (for 2007-08) (Sengupta and Rao 2012) i.e., about 1.2% of GDP or about 9% of the GDP of agriculture could be realised. Apart from revenue considerations, according to the Report of the Task Force on Direct Taxes (Kelkar Committee), there is massive under-reporting of incomes under the guise of exempt agricultural income and hence the need to bring it under the tax net.

## **9. International tax**

With changing nature of global economy and countries getting more and more interlinked with rising globalization it becomes necessary to change or introduce new tax rules in line with changing reality of global economy. Some of these provisions with their revenue potential are discussed below.

### **a. Reviewing Double Tax Avoidance Agreements (DTAA)**

Many of bilateral DTAA treaties are based on OECD model which is biased against developing countries and in favour of developed. India's DTAA with Mauritius and Singapore are two such examples which are used by speculators to invest in Indian market as capital gains on investment from these countries is non-taxable according to DTAA's with them. Sridhar have calculated that revenue loss only on account of FII from Mauritius to be around Rs 28,139 crore (\$5.2 bn) for the decade 1990 to 2000 (Sridhar 2003). This figure turned out to be 10 % of the gross tax revenue of the union for year 2003-04, or around 1 % of Gross Tax revenue lost per year.

### **b. Transfer pricing and Advance Pricing Agreement (APA)**

Transfer pricing is used by MNC to transfer profits to their subsidiaries in low tax countries. In 2011-12, with around 3500 disputes, India had third largest number of transfer pricing cases in world after Japan and Canada.<sup>1</sup> According to Directorate of Transfer Pricing there is mispricing of Rs 67,768 crore (\$12.5 bn) in 2010-11 and Rs 43,531 crore (\$8 bn) in 2011-12. Not only this, transfer pricing have been found by Income Tax to be key to the illicit fund flow out of country. According to Global Financial Integration Report as much as 77.6 % of unaccounted fund outflow worldwide occur through misuse of transfer pricing.<sup>2</sup>

### **c. Indirect transfers of capital assets.**

The Finance Bill 2012 has proposed a retrospective amendment, which will bring (under the jurisdiction of Indian tax authorities) all cross border transactions that involve indirect transfers of shares whose underlying assets are located in India and hence seeks to override the Supreme Court ruling in *VodafoneIH vs Union Of India* (2012). Around Rs. 35,000 crore (\$6.4 bn) to Rs. 40,000 crore (\$7.3 bn) are at stake from deals similar to the Vodafone deal<sup>3</sup>. According to another estimate around Rs 1 lakh crore (\$18.3 bn) can be raised by these retrospective amendments.<sup>4</sup>

### **10. Tax Arrears Collection**

Tax amount raised but not realized amounted to a whopping amount of Rs 2,49,442.95 crore (\$45.9 bn ) at the end of reporting year 2010-11.<sup>1</sup> Out of these Rs 61,432 crore (\$11.3 bn) were not under dispute while Rs 188,010 crore (\$34.6 bn) were under dispute. Tax arrears referring to corporate taxes amounted to Rs 65,763 crore (\$12.1bn) and other income taxes to Rs 138,564 crore (\$25.5bn). In 2010-11 the arrears further increased by 33 % to Rs 3.89 lakh crore (\$71.5 bn).<sup>2</sup> Taking a strict view on tax arrears, the Supreme Court of India slammed government for laxity in tax arrears collection, especially when it involves rich and influential persons.<sup>3</sup>

### **11. Excise Duty on Diesel cars/SUVs<sup>4</sup>**

Diesel is subsidized in India and its price is regulated because of its inflationary potential. However, from 4 % in 2000 the share of diesel cars in new car sales has increased to nearly 40 % (CSE 2012). According to Kirith Parikh Report 2010 private cars consumes around 15 % of total diesel consumption in India. The total excise duty on petrol is seven times higher than diesel. Hence with each litre of petrol replaced by diesel to run a car the excise earnings of the government drops by 7 times. In addition to tax difference, under recovery of actual price of diesel results in losses to oil marketing companies. Diesel price accounts for around 58 % of under recovery of Oil Marketing Companies (OMC). If new diesel cars were taxed at same excise rate as that of petrol cars, potential revenue of Rs 28,333 crore (\$5.2 bn) annually can realized for period 2009-15<sup>5</sup>.

### **12. Tobacco Taxes**

Out of 120 million global smokers nearly 10 % are Indians (John et al 2010). Higher taxation of tobacco products is the most effective intervention to reduce consumption (Jha 2009). Present tax on bidis and cigarettes in India, averaging about 7 % and 43% of retail price respectively, are much lower than the average rate of 63% of retail price for most high income countries (WHO 2010) and well below World Bank recommended rate of 65%-80% of retail price. Studies have found that raising tax as % of retail price from 7 % to 33 % for bidis and 43 % to 58 % for cigarettes would raise about Rs 7300 crore (\$1.3 bn), while incurring no economic harm (Jha et al. 2011). According to John et al increasing tobacco taxes can help realize around Rs 18,320 crore (\$3.4 bn) and save 19 million lives.

In its recent released report, the Asian Development Bank (2012) has also called higher taxation of tobacco products in India as a win-win strategy.

The double advantage of tobacco taxes are clear from health cost study conducted by Indian Council of Medical Research, according to which the cost of treatment diseases caused by tobacco accounted for roughly 25 % of all public spending on health<sup>6</sup>. India spends approximately Rs 30,000 crore (\$5.5 bn) annually both in public and private spending on treatment of tobacco related illness.<sup>1</sup> If these expenses can be arrested then lot of fiscal burden on government can be eased. The Budget 2013-14 though have proposed higher tax rates for cigarettes, it need to be seen whether this policy will be carried out as last year also an ad-valorem tax was proposed on tobacco products but rolled back later on.

### **Conclusion**

Even after 20 years of economic reforms India is one of poorest countries in world (Dreze and Sen 2011). There is probably no other example in the history of the world development of an economy growing so fast for so long with such limited results in terms of broad based social progress (Dreze and Sen 2011). Growth in itself not sufficient to solve poverty, hunger and malnutrition (IFPRI 2012, Dreze and Sen 2011, Kadiyala et al. 2012). Converting growth in development calls for active state intervention by means of both expenditure and revenue mobilization policies. It is here that taxation policy can play an important for ensuring inclusive growth, by distributing growth gains.

As regarding the expenditure estimates for universal old age pension in India it has been found that resources to the tune of 2 % of GDP will be required. Also majority of labour in India is in unorganized sector and don't receive minimum wages and hence are not in position to contribute for old age pension. Therefore it becomes responsibility of the government and the employers to contribute for old age pensions of these workers. However India performance is highly dismissal regarding its revenue mobilization efforts for social security. This is shown by comparison across many G20 countries. Also taxation policy as a tool to mobilise additional resources for funding social security schemes in India is grossly underutilized. Comparison across G20 countries reveals that India has one of lowest tax GDP ratios and one of least progressive tax structure across same. A short term goal to broaden tax GDP ratio from 15.5 % to G20 average of 21.93 %<sup>2</sup> and BRICS average of 21.84 %<sup>3</sup> can help raise considerable amount of resources not only to finance Universal old age pension but other social security needs also. But increasing the tax base of a country in a progressive way, i.e. by increasing the share of Direct taxes in total taxes, calls for a strong political determination on the part of the government. Direct taxes directly affect the person to be taxed and can't be shifted and hence face a tough resistance in a democratic polity. Rathin Roy (1998) also reiterates that fiscal policy in India becomes interesting only when interwoven with story of economic development and political economy perspective is critical to telling this story. Analysis carried out in this paper, regarding specific tax policies, also shows that a lot of scope exists for policy intervention using taxation policy but this in turn requires a

strong political will by the government. Therefore to ensure universal old age pension in India government needs to ensure tax justice in the economy which in turn requires strong political will by the government.

### Footnote

1. *The author works with Centre for Budget and Governance Accountability (CBGA), a New Delhi-based policy research and advocacy organisation; he can be contacted at prashant@cbgaindia.org. and skn.prashant@gmail.com*  
Views expressed are personal and not necessary view of the organization that author works for.
2. According to Pension Parishad (<http://www.thehindu.com/opinion/lead/for-a-universal-oldage-pension-plan/article3401455.ece>)
3. Group of Civil Society Organisations in India demanding Universal Old Age Pension
4. Prabhat Patnaik in Hindu (<http://www.thehindu.com/opinion/lead/for-a-universal-oldage-pension-plan/article3401455.ece>)
5. International Monetary Fund, Government Finance Statistics Manual 2001(IMF GFS)
6. Comparing only countries for which data is available.
7. Ignoring mild definitional difference between Social Contributions of IMF and Social Security Contributions of OECD
8. Net of education cess, from Indian Public Finance Statistics
9. As viewed on 1 March 2013 (<http://www.kpmg.com/Global/en/services/Tax/tax-tools-and-resources/Pages/individual-income-tax-rates-table.aspx>)
10. Statement of Revenue Foregone, Union Budget 2012-13, Govt. of India.
11. Business Standard 2012b. <http://www.business-standard.com/india/news/transfer-pricing-revenue-to-rise-rs-3000-crore-in-2013-14/475552/> (As viewed on 1 March 2013)
12. Reserve Bank of India Bulletin, February 2013
13. Parliament Standing Committee on Finance (2012), Appendices I, Dissent Note.
14. Assuming billionaires are all adults above 18 years of age and have average life expectancy of 63.4 years i.e. average of life expectancy of 62.6 years for Males and 64.2 years for Female for 2010-11(Source: Registrar General of India and Economic Survey Appendix). Also assuming that age of billionaires is spread uniformly across 18 to 63.4 years
15. This is highly conservative estimate as it assumes, wealth of these individuals will remain constant over next 45.4 years and considers only top 55 billionaires and not all high net worth individuals, which include millionaires also.
16. Rediff Business 2011<http://www.rediff.com/money/slide-show/slide-show-1-india-has-8200-hnw-individuals/20111115.htm> (As viewed on 1 March 2013)
17. Ignoring categorization between productive and non-productive assets.
18. Advance Estimate for 2011-12, Economic Survey 2011-12
19. Calculated from Indian Public Finance Statistics (IPFS) 2011-12.
20. Deccan Herald: "Government widen service tax".
21. Business Standard, 8 November 2012, as viewed on 1 March 2013 (<http://www.business-standard.com/india/news/bnitin-desaiib-taxingland/491992/>)
22. The Economic Times, 20 August 2012, viewed on 1 March 2013 ([http://articles.economictimes.indiatimes.com/2012-08-20/news/33288009\\_1\\_transfer-prices-e-y-partner-inter-company-transactions](http://articles.economictimes.indiatimes.com/2012-08-20/news/33288009_1_transfer-prices-e-y-partner-inter-company-transactions))
23. Business Today, 27 January 2011, viewed on 1 March 2013 (<http://businesstoday.intoday.in/story/consensus-on-gst-may-take-time-fm/1/12800.html>)
24. Business Standard, 28 April 2012, viewed on 1 March 2013 (<http://business-standard.com/india/news/with-rs-40k-cr-tax-at-stake-finmin-firmi-t-amendments/472832/>)

25. The Economic Times, 24 October 2012, viewed on 1 March 2013 ([http://articles.economictimes.indiatimes.com/2012-10-24/news/34707956\\_1\\_retrospective-tax-shome-panel-tax-authorities](http://articles.economictimes.indiatimes.com/2012-10-24/news/34707956_1_retrospective-tax-shome-panel-tax-authorities))
26. Union Budget 2011-12, Budget Receipts, Annex 11
27. Business Standard, 9 August 2011, viewed on 1 March 2013 (<http://www.business-standard.com/india/news/tax-arrears-389-lakh-cr-not-realised-in-fy11/143877/on>)
28. DNA, 17 September 2012, as viewed on 1 March 2013 ([http://www.dnaindia.com/india/report\\_rs58636-crore-tax-arrears-sc-slams-govt-for-laxity\\_1741775](http://www.dnaindia.com/india/report_rs58636-crore-tax-arrears-sc-slams-govt-for-laxity_1741775))
29. Unless mentioned, analysis is reported for petrol and diesel prices before 13/14 September 2012 midnight change.
30. Calculated from CSE 2012
31. Keshav Desiraju, Union Health Ministry, India.com Health
32. Dr Kelly Henning, CTCHP, viewed on 1 March 2013 ([http://www.ctchp.org/index.php?option=com\\_content&view=article&id=441:the-dilemma-of-tobacco-taxation&catid=21&Itemid=111](http://www.ctchp.org/index.php?option=com_content&view=article&id=441:the-dilemma-of-tobacco-taxation&catid=21&Itemid=111))
33. Calculated from Table.1
34. Calculated from Table.1

### Reference

- ADB (Asian Development Bank) 2012: "Tobacco Taxes: A win win measure for fiscal space and Health 2012"
- Bagchi Amaresh 2007: Rethinking Tax Treatment of Capital Gains from Securities, *Economic and Political Weekly*, January 27
- Business Today 2011: Global Financial Integrity Report 2011 (<http://businesstoday.intoday.in/story/consensus-on-gst-may-take-time-fm/1/12800.html>) (As viewed on 26 December 2012)
- CBGA (Centre for Budget and Governance Accountability) 2012: *Response to Union Budget 2012*
- CSE (Centre for Science and Environment) 2012: Proposal for Additional Excise Duty on Diesel Cars to Reduce Public Revenue Losses and Public Health Costs, January.
- Desai, Sonalde, Amaresh Dubey, B L Joshi, Mitali Sen, Abusaleh Shariff and Reeve Vanneman (2010): *Human Development in India: Challenges for a Society in Transition* (New Delhi: Oxford University Press).
- Dev Kar and Karly Curcio 2011: *Illicit Financial Flows from Developing Countries: 2000-2009*, Global Financial Integrity, January
- Dreze Jean and Amartya Sen 2011: Putting Growth in Its Place, Outlook, Nov 14
- Government of India .2002. *Report of the Taskforce on Direct Taxes*. Ministry of Finance
- \_\_\_\_\_.2007a: National Family Health Survey 2005-06, IIPS (International Institute of Population Science) and MacroInternational
- \_\_\_\_\_.2007b: National Sample Survey (61st Round, 2004-05), MOSPI .August 2007
- \_\_\_\_\_.2008: *The Eleventh Five Year Plan*, Planning Commission.
- \_\_\_\_\_.2009.*Report of the Thirteenth Finance Commission*.
- \_\_\_\_\_.2010: *Report of the Expert Group on a viable and Sustainable System of Pricing of Petroleum Products*, New Delhi. 2 Feb 2010
- \_\_\_\_\_.2011:*India Human Development Report (IHD) 2011*, IAMR Planning Commission
- \_\_\_\_\_.2012a: *Report on General Anti Avoidance Rules (GAAR) in Income Tax Act 1961*, September 1
- \_\_\_\_\_.2012b: *Report of The Committee on Roadmap for Fiscal Consolidation*, September 28
- \_\_\_\_\_.2012c: *Draft Report of the Expert Committee on retrospective amendments made by Finance Act, 2012 to Income-tax Act, 1961 relating to taxation of non-residents on indirect transfer*, October 9

- Government of India.(Various Years a): *IPFS (Indian Public Finance Statistics)*, Ministry of Finance.
- \_\_\_\_\_.(Various Years b): *Union Budget*.
- \_\_\_\_\_.(Various Years c): *Economic Survey*
- \_\_\_\_\_.(Various Years d) : *National Accounts Statistics, MOSPI*
- IMF (International Monetary Fund) 2001: *Government Finance Statistics (GFS) 2001 Manual*
- \_\_\_\_\_. (Various Years): *Government Finance Statistics (GFS)*
- Jha et al. 2011: A Rational Taxation System of Bidis and Cigarettes to Reduce Smoking Deaths in India, *Economic and Political Weekly*, October 15
- Jha, P (2009): "Avoidance of Worldwide Cancer Mortality and Total Mortality from Smoking", *NatRev Cancer*, 9: 655-64.
- John, R M et al (2010): "*The Economics of Tobacco and Tobacco Taxation in India*" (Paris: International Union against Tuberculosis and Lung Disease).
- Kadiyala Suneetha, P K Joshi, S Mahendra Dev, T Nanda Kumar and Vijay Vyas 2012: A Nutrition Secure India: Role of Agriculture, *Economic and Political Weekly*, February 25
- Lall Somik.V and Deichmann Uwe (2006): 'Fiscal and Distributional Implications of Property Tax Reforms in Indian Cities', *Economic and Political Weekly*, July 22.
- NCEUS (National Commission For Enterprises In the Unorganized Sector) 2006: "*Social Security Report*"
- \_\_\_\_\_. 2007: "*Report on the condition of work and promotion of livelihood in the unorganized sector*".
- \_\_\_\_\_. 2008: "*Contribution of the unorganized sector to the GDP. Report of the sub committee of NCEUS task force*"
- OECD 2011: *Revenue Statistics 1965-2010*
- OECD/ECLAC/CIAT 2011 : *Revenue Statistics in Latin America 1990-2009*
- Parliament Standing Committee on Finance (2012): '*Forty Ninth Report, The Direct Taxes Code Bill, 2010*', Ministry of Finance.
- Roy Rathin 1998: 'Riches Amid Sterility: Debates on Indian Fiscal Policy', in Terry Byres (ed.) *The Indian Economy : Major Debates since Independence*. Delhi, Oxford University Press, p. 335-382
- Sengupta, D.P and R KavitaRao (2012): 'Direct Taxes Code and Taxation of Agricultural Income: A Missed Opportunity', *Economic and Political Weekly*, April 14.
- Sridhar V 2003: Mauritius as Tax Haven, *Frontline* November 8-21 <http://www.frontlineonnet.com/fl2023/stories/20031121002108900.htm> (As viewed on 26 December 2012)
- WHO (World Health Organization). 2010 : "*WHO Technical Manual on Tobacco Tax Administration*" (Geneva: World Health Organisation).

# Post-modernist Elements in the Novels of Vikram Seth

---

---

**Dr. Raj Kumar Singh**

*Assistant Professor , Department of English  
M.P.S. Science College, Muzaffarpur , B.R.A. Bihar University*

Vikram Seth is an Indian poet, Novelist, travel writer, Children's writer and biographer also. Seth is now best known for his novels. Though he has characterized himself as a poet first and novelist second. He has published five volume of poetry. His first. *Mappings* (1980) was originally privately published. It attracted little attention and indeed Philip Larkin. To whom he sent it for comment. Referred to it rather scornfully among him intimate. Whether or not Seth's poetry is expressly influenced by Larkin, it contains similar elements like a highly colloquial vocabulary and syntax with closely constructed form but without rigidity.

Vikram Seth's range is demonstrated by the historical accuracy of 'A suitable Boy' with the nuanced cultivated Indian English of the narrative voice. It has the entirely in character voices of the principals of the story. "The Golden Gate," consists correspondingly accurate depiction of northern California Yuppies of the 1980s Likewise he intertwined the real portrait of the world of western classical musicians in "An Equal Musics." He has continued to produce volumes of poetry at intervals alongside his publications in an range of other forms including translation from Chinese poets. Despite his erudition in a widee range of disciplines, both his prose poetry are characterized by their accessibility. In most of Seth's writing (apart from 'An Equal Music narrated in the first person by its central character), there is a strong engaging narrative persona. Sometimes as in 'from Heaven Lake' obviously Seth himself at other times in his novels and pouns intermittently So. He has complained about some of his readers assuming on book tours a degree of intimacy with him that they have not earned. A film of 'A Suitable Boy' is slated to go into production in 2007 an earliar attempt at a television serialization having been abandoned.

As this era is an era of Postmodernism, postmodernist elements are bound to be present there in any work of art. Goethe has said that a work of art represents and reflects its age even when it reacts against it. How History, Myth and Tradition are being reinterpreted in new light is an important and interesting area of study. Vikram Seth in his three novels *The Golden Gate*, *A Suitable Boy* and *An Equal Music* has described various aspects of life, of the society, and of the world in our age. The Narrative technique of these novels in not the same. *The Golden Gate* is a novel in verse, having 7000 lines. There are 594 sonnets,

all written in iambic tetrameter. There are thirteen chapters with an average of forty-five sonnets. This novel is a satirical romance describing the stories of young professionals in San Francisco through their quests and queries to find, and then deal with love in their own lives as well as in each other's. It offers a perspective look at 1980s Yupie lifestyle in northern California. The term 'Yuppies' is now referred to more than just a demographic profile; it is also a psychological profile. It describes a set of behavioural and psychographics attributes that have come to constitute a commonly believed stenotype. Yuppies' traditional trends in which their parents stood for traditional aesthetic values and postmodern trend in which they are the worshippers of money will present a very interesting reading. It presents a clash between the two sets of values.

A Suitable Boy won for Seth the Commonwealth Prize. This novel made him famous all over the world. It discusses various issues-matchmaking being one. It depicts the social panorama of the decade after Independence. Seth interweaves in a credible way all the larger themes of social, political, and religious conflicts with day-to-day human emotions of his true-to-life characters, which have a strong resemblance to Dickensian characters over which countless readers have laughed and cried. Seth offers a huge, thick, multi-layered slice of life that, in its veracity, serves to counter the widespread false views of India and improve the world's understanding of our country.

An Equal Music is centred on an ill-fated love affair. In our post modern world love has lost its passions and only physical attractions are being false considered to be love. The result is that the moment physical satisfaction takes place, all emotions evaporate and the partners are left with Arnoldian cry :

Ah, love, let us be true to one another.

This novel examines the impact of Western classical music on the lives and hopes and tears and final, desperate choices of its European protagonists.

The three novels of Vikram Seth require extensive study from different angles so as to find out the qualities that make him one of the great contemporary writers. Postmodernist elements are the extension of Modernist elements and how those elements give a name and local habitation to writers like Vikram Seth would be interesting to study.

Theoretical principles are related to all the isms and this study will not be an exception. First of all the principles of Postmodernism will be discussed at considerable length and then Seth's novels would be analyzed as per those principles.

Vikram Seth is among the crop of those bold writers who belong to the tradition laid down by Salman Rushdie. Seth is among those writers who have opened floodgates to the western reading public. The publication of Midnight's Children in 1981 brought a new and remarkable change in the way Indian English Fiction is being written. Now with writers like Seth, Indian English Fiction has been able to form the mainstream of literature.

## References

- The Golden Gate, New Delhi : Penguin Books India (P) Ltd., 1986.
- A Suitable Boy, New Delhi: Penguin Books India (P) Ltd., 1993.
- An Equal-Music, New Delhi: Penguin Books India (P) Ltd., 1999.
- Agarwalla, Shyam S. Vikram Seth's A suitable Boy: Search for an Indian Identity, New Delhi: Prestige, 1995.
- Alexander, Meena, "Vikram Seth," Post-colonial Studies at Emory, Online. 9 Mar. 2003. <http://www.Emory.edu/ENGLISH/Bahri/Seth.html>
- An Interview with Vikram Seth, " Bold Type, 15 July 1999, Online, <http://www.boldtype.com/0599/seth/interview.html>
- Buchan, James, "A Foreign Country is the Past" Review of A Suitable Boy, The Spectator, 27 March 1993: 32.
- Carey, John, "Music for the Mind", Review, The Sunday Times, 28 Mar. 1999.
- Hill Rowena, "Vikram Seth's The Golden Gate : A Quick Look." The Literary Criterion, 21.4 1986:87-90
- Patel, Devesh, "Vikram Seth: A Poet in Exile." Contemporary Poetry Review, 25 Sep. 2000: Online. <http://doononline.net/highlights/seth/contemporary.htm>.
- Prasad, G.J.V., ed, "Vikram Seth: An Anthology of Recent Criticism." Delhi : Pencraft International, 2004.

# Recent Trends in the Novel 'The Blue Bedspread' of Raj Kamal Jha

---

---

Dr. Ganga Sagar Pd. Singh

*Lectures in English*

*S.N.S. College, Hajipur, B.R.A.B. U., Muzaffarpur*

The scientific advancement, commercial point of view, aspiration for popularity and the extension of education make human beings courageous, bold, broad and free from the bondage of Social, cultural and religious fetters. They are just "The falcon" that "cannot hear the falconer" and run after the physical bliss to get mental insatiable satisfaction. They are ready to sell their soul just like "Dr. Faustus" of Marlowe to adopt the immortality. They are glad to annihilate the laws of nature on which our society is based. There emerges a new tendency to evade the sublimity of thought or the culmination of inspiration or ideal ideology of our society. Some of our ultra modern novelists under the influence of western culture, enhances such types of essences in their fictions to get handsome royalty.

Raj Kamal Jha (1966) was born in Madhubani, educated in Kolkata where his father was a distinguished professor in Hindi. He is now an executive editor of the Indian Express. His first novel - The Blue Bedspread published from Picador, England, won the Common Wealth Writers' Award for Best first Book and was shortlisted for the Guardian Book Award and named as a New York Times, Notable Book of the Year.

In Indian Culture and Civilization, people prefer to lead spiritual life in which excess of physical bliss is discarded, abhorred and neglected. We have some social code of conducts that guide us to steer harmonious lives in society or in family. There is a sacred bond between father and son, brother and sister, husband and wife. Most of the novelists of our country follow the norm, but in the novel of Raj Kamal Jha, all is broken, all is abandoned. The Blue Bedspread has proved a milestone in the field of novels by a bold and courageous confession of incest, sodomy, promiscuous sojourn and a blazing account of Id's pleasure. For these elements, it is well praised or appreciated in abroad. John fowler calls it, "Something rather remarkable, almost a coming of age of the Indian Novel". But the fact is that The Blue Bedspread doesn't foretell the coming of the age of the Indian Novel. Indian expects thought provoking novels rather than commentaries upon the activities of the illicit partners. From the objective point of view M.K. Naik appreciates it as : "Raj Kamal Jha's evocation of the past is far more sensitively done than Bhatia's but the attitude of the protagonist to his abnormal experience remains intriguingly ambivalent, raising suspicious of masochism"<sup>2</sup>

If a piece of literature reflects the spirit of the age, *The Blue Bedsread* doesn't shine back our age or society. A rare exceptional picture is exhibited through the family of the protagonist. Prof. R.B. Singh, from the Socio-culture perspective arrives at the conclusion: "No wonder, father beats his wife and daughter, sodomises his son. Mother waves to her lover, sister sleeps with his brother... All to bizarre, Sickening and nauseating". The head member of the family is drunkard, mean, mentally bankrupt, insane and above all wretched who evades the happiness and bliss, comfort and ease, solace and silence of his family and converts it into hatred and cruelty. But the Biblical power of Confession and the final assertion of truth of the narrator give it strength and refinement of sense.

The novelist has used the stream of consciousness technique to ignite the movement of mind. An unexpected event at midnight comes and pushes the narrator into the dark tunnel of his memory. The novel begins with a telephone at midnight by a police Inspector who informs him that his sister has died in labourpain leaving behind a baby-girl. The question 'Do you know who the father is?' Kindles his reel of sentiment in retrogressive thought process. The narrator delves deep into his past days of intimacy, spent together with his sister. Though he is in the state of quandary and indecision to adopt the baby or not, yet his mind reviews the past events. He goes to the hospital and brings the baby wrapped in the blue towel. He begins to address her his multicoloured episodes of his past life and projects the future of the baby in the same breath. He feels inhibition to expose the reality of his life and showers love over the baby. But soon he overcomes the impediment and pours on her all the love and care he can;

*"And I shall hold the spoon close to my chest so that if you wish to, you can imagine I'm your mother and the milk flows, drop by drop, from her breast (183)".*

The narrator attempts to evade the truth of the origin of the baby.

*'In short, I will tell you happy stories and I will tell you sad stories. And remember, my child, your truth lies somewhere in between (6).*

*He identifies the baby with his sister in sleep, " When she slept, it was as if she had into a photograph (23).*

The novel is obviously divided into five sections : father, Mother, Sister, Visitors and Brother having a sense of seniority but the central theme of the novel revolves round the brother and sister and their rare intimacy to each other. The picture of his father is shameful. He is drunkard who usually beats his wife and daughter and humiliates even his son. In intoxication of wine he shaves and cuts his face and when his daughter sees the cut, She shakes him or sometimes slacks hard to bring him in consciousness. In his drunken stage he hides the sanitary napkins of his daughter to tease her or throws the kitchen knife into the toilet to disturb the daily calls of the members of his family.

At night when there was stillness in the room, outside is full of hubbab. The use of auditory and visual images are exploited to show the striking pattern

of contrast in the background scene. The uproar in outside stimulates a sense of rising within him;

*'It was cold, the rain from the exercise books has seeped into the fabric, I could hear the sound of cars splashing the water in the potholes outside, I could hear the minibuses conductors show their destinations : Dum Dum, Howrah, Entally, Roxy Cinema.*

Someone laughed from the street outside : I think I shouted, I'm not sure. Even if I had, my scream would n't have gone beyond the places where buses go (59).

" The narrator seems to explore the music of silence for the suitable focus upon the bedroom scene:

*That night, my sister didn't switch on the bedside lamp. And with all the stars locked in the darkness of the bedroom, we held each other tight.... my chin to rest upon the small pillow of her breast and my hands pressed, Warm and soft, between her legs (61)*

*We could hear father's snore in the next room the rattle of the window whenever a huge Bengal-Bihar Cargo truck rambled by....."*

No doubt, the picture of uncouth father resembles the father in D.H. Lawrence's *Son and Lovers*. But Lawrence's novel advocates a type of philosophy where Jha's fails to convey any. Here we find simultaneous love affairs that never exports any principle or theory that would be harmonious for our society. She elopes with her lover at the age of nineteen and never returns alive. She characterises elopment as a sacrifice for his brother and that gives him perhaps solace and heals his wound.

'And then, slowly, like sunrise on a winter's day, it dawned on me, cold and clear, that perhaps my sister had to run away for me to carry on. Because, in a way, it is essential that one of us should leave never to return. It saved both of us the discomfort and the pain of sitting together as adults and talking about everything except those nights on the blue bedspread, that July night on the blue bed spread, moments that were key to our survival and better left untouched and unsaid (62-63)

There emerges another aspects of the father. Like other Indian father he loves his children and gives a rupee everyday when they go to school. His sense of guilty and repentance culminates into his silent departure from the scene.

'On Certain rainswept night, when I lie in bed, I can see father standing in the rain outside, his hair all wet, the water streaming across his face... Instead he looks weak, lost like a child left stranded in the blinding rain (63)

He further Adds :

*'But When I look at the window again it's late, father is gone, leaving behind the rain pouring out from a dark Calcutta night,... (63)*

The narrator is indifferent to the suffering of his father and sister. He does not take interest in saving the life of his father or sister. His sense of humiliation

and opprobrium coerced by his father and sinful deeds done with his sister blunts his sense of sympathy, compassion and humaneness. Their departure from the world purges his awareness of stigma and soon he overcomes the suffocation to lead a normal life. The narrator is in the mood to get rid of the blemish life through the sacrifice of the two stimuli. He wants to forget the two hellish incidents that occurred in his life. Their immolation lends a view of solace, consolation and satisfaction for the narrator. Later on he comes into the trap of a nymphomaniac medical student who uses him as a sex partner. He begins to imagine her as his wife and probable offspring. But she refuse to marry him.

The novel can better be explained on the psycho analytical prospective and seems to be plotted on the basis of Freud's Oedipus Complex. Since the narrator has lost his mother, his father has become dispassionate and insulated him. Naturally brother and sister are compelled to draw near to each other. The lack of space in two-room flat and the absence of mother force them to share the same bed. She was elder so she naturally looks after him. This physical and psychological intimacy provides ample scope to the id to play on its pleasure principle. Even his father pours intoxication through his abusive language and activities. When they grow up, they know the social code and intercept the id's pleasure play.

Letter on in the last chapter 'Eight words' he accepts, "I am the father of my sister's child". But it is not clear whether he is the real father or simply the foster father of the child. The salient feature of the novel pops up through its art of narrative. The very first section "First Story" acts as workshop of the novel and establishes a sympathetic relationship with the reader. The anonymous characters represent the symbolic presentation of the human beings. " I could begin with my name but forget it, why waste time, it doesn't matter in this city of twelve million names" (1) All main characters are nameless and faceless. They all are representative of common masses such as father, mother, visitors, sister and Brother.

The stream of consciousness method and first person narrative technique gratify the artistic method of the novel. 'The authorial voice and the voice of the leading characters' lead us to instill into the unconscious and subconscious layers of the characters mind. Only in the stream of two actions- cremation of his sister's body and bringing her baby home from the hospital, the narrotar drifts along with the current of consciousness. The novel contains rest of the essences from the recollection of the past and the version of the future for the baby. Thus present is intercepted by the past and the past leads to future. The novel begins to culminate with the question, "Do you know who the father is?" and ends with the answer in dramatic fashion, "I-am-the-father-of-my sister's-child". The Blue Bedspread is' a symbol of earth and heaven for the brother and sister :

'There are several smells in our garden, The earth is the blanket, musty and warm; the grass is our clothes, smelling of water and soap and sun, the blue bedspread is the night, the flowers are my sisters's shampoo, the wind is the breath of approaching sleep (109-110).

The novelist has universalised the glory and personality of his sister through the comparison of her broadness with the blessing of the nature.

Its narrative skill, craft, simple structure of sentences, soft and poetic language and rich images of visuals, sound and colour predict the prosperous and progressive expertness of the novelist for the next coming novels. I wish that he will get the Nobel Prize for Literature but not on the theme of the novel which lacks the sublimity of thought and matrix of inspiration. Its theme doesn't emit good flavour of odour for our society and some of its delineations seem incredible in Indian Culture.

### **Works Cited**

1. Quoted from Narrative Noodles: Essay on Indian Novels in English (Book Enclave, 2008); Dr. C.L. Khatri P227
2. Indian English Literature 1980 to 2000; A critical survey, Delhi; Pencraft, 2001 M.K. Naik. P72
3. The Blue Bedspread : Spreading Incest in Indian writing in English: Voice from the Oblivion,(ed) Dr. C.L. Khatri, Jaipur : Book Enclave, 2004 P176
4. The Blue Bedspread; Picador 2000, London (subsequent references are from the edition): by Itaj Kamal Jha.

# Diaspora Writing: The indian perspective

---

---

Ishrat Fatma

Literature is referred to as a slice of life; it is an amalgamation of real life and fancy or imagination. Not only is literature a reflection of the social-cultural, political and economic background of the region and the period to which it belongs, it also addresses and represents the major issues and concern of its times. Literature also acts as a medium/means of portrayal of human emotion and feelings, ideas and thoughts, fears and anxieties and so on. Like wise Diaspora Literature too mirrors the experience of diaspora-individual as well as community. Defining diasporic writing is however not an easy task. For it is not merely a physical, geographical journey; it involves a virtual snapping of ties with the mother country. It is a movement away from a familiar frame of references and relationship.

In diasporic writing the nostalgia for the lost 'home' or 'the way of life' is always present in one form or the other. It involves formation of links 'with the home land' and the past generation' by going down the memory lane. At the same time diasporic writing tends to project a determination to find relevance in the new land. Thus diaspora literature mirrors a double vision at once of yearning backward and looking forward. This yearning backward or the sense of nostalgia leads to and an urge to reclaim the past and lost heme. But this reclaiming of the past or the home is not possible due to the physical separation of the diaspora writer form the native land, instead it results in creation of as Rushdie suggests "...fictions...imaginary homelands...Indians in the mind." (10). Thus the reclamation of the past is established thorough the plots and sagas of the diasporic writing. Themes of diaspora writing also revolve around assimilation and absorption in the new land/host land. In diaspora narratives thus there are two threads being unraveled simultaneously one of the dominant culture and the other of the ethnic sub-culture. Some times the two are so intertwined that is not possible to differentiate the one from the other.

Another remarkable feature of diaspora literature is its experimentation with lechnique, form and language, as a disavowal of the nerrative patterns of the given dominant traditions. Often new styles are evolved by selective borrowing and mixing of native and host linguistic traditions. In some other cases, the diaspora writing fuses into the dominant tradition distinguishable only in location and concerns rather than in narrative lechniques.

Language as we know is a part of the identity formations and expression of the cheracters and is as much important to reach the audience who are likely to favour high-prestige languages. Thus some of these writers either make minor or no variation or invent styles and idioms that match the anticipated andiences of the character's language. Thus the language of diaspora literature involves

language maintenance, language death and language revival. Often diaspora literatures try to maintain the language through bi/multilingual creativity and defend the use of diaspora language varieties.

On the other hand the cultural in-between ness of a diasporic writer is reflected in the appropriation of the dominant of language like the use of hybrid language or the "chutney English" by Rushdie is indicative of as well as celebration of his linguistic in-between ness. Rushdie's characters speak what is known as the 'Forked Tongue'-more than one pronged, seem to celebrate their hybridity and multilingualisms. Still some other writers in order to exoticize the ethnic culture depicted in their narrative and make it more appealing and interesting for the readers particularly the western, use a lot of indigenous/native words and phrases followed by and explanation in the text itself or by using footnotes or references. Their writing is a fertile site of language of contact facilitating the production of literature on translation, intertextuality in narratives inscribing cultural interactions.

A diaspora writer is confronted with the words like diaspora, emigration, nationality, marginality, hybridity, ethnicity that constantly resonate in their works. A diaspora writer is conscious of his/her diasporic status that manifests itself in a variety of ways a sense of loss and dispossession, a feeling of remaining straddled between two cultures, an anxiety to belong to either the native or the host environment an assertion of one's ethnicity and immigrant status; an acceptance of the hybridity and heterogeneity of multiculturalism; an enquiry to traditional notions of belonging and celebration of unbelonging, and an ultimate urge to prove oneself. The status of diaspora writers has been equated with that of the mythical figure of Trishanku who neither belongs to the earth nor to the heaven for which he aspired but occupies a space somewhere in-between, the both, with opposite forces of pull and push acting against each other maintaining his status quo. A diaspora writer likewise, remains in a perpetual state of animated suspension as suggested by Manju Jaidka. (Shailja Vol. 1. 39).

The writers of the Indian diaspora are spread across different nations like Canada, Britain, USA, and Trinidad etc. Their writings appear to be sharing certain common themes like issues of identity, confrontations with racial discrimination, inter-familial conflicts. However it would be utterly wrong to homogenize the differences with in the broad spectrum of Indian diaspora writing by viewing all Indian expatriate writers across several continents as linked by common heritage, history and racial descent. It would be a kind of "ethnic absolutism" which was highly criticized by Gilroy in the context of African diaspora. Not all the diaspora individuals have gone through similar cultural or social circumstances, nor do they belong to the similar linguistic or regional background Indian diaspora comprise of diverse communities like Punjabis, Bengalis, Tamils, Telugus and so on. It includes the descendants of first generation immigrants who have subsequently moved across different geographical spaces, like the multiple migrations of Indo-Caribbean's to Canada and Britain, Indo-African to Britain, US and Canada and so on.

Also writers of the Indian diaspora greatly differ from each other in the perception and the response to diaspora experience. Some writers like V.S. Naipaul remain attached to their state of homelessness, and insist on identity that is shaped by exile and loss, some others like Bharati Mukherjee call for an end to the futile nostalgic engagements with the past and a bold affirmation of the adopted land. They assert that affirmation would be the answer to the discontentment of the diaspora. Still others like Salman Rushdie celebrate the old and the new, India and diaspora, myths and realities thus imaginatively claiming a territory of their own. The second generation immigrants as well as the third generation immigrants who have a history of multiple traversals do not consider India as home, as for them India is a mere abstraction.

Thus the genre of diaspora Indian writing in English is as diverse in composition and concerns as the Indian diaspora itself. With Indians spread across the whole world there have emerged as many varieties of diasporic writing as Indo-Caribbean, Indo-Africa, Indo-fijian, and Indo-Australian and so on. But these are not fixed or compartmentalized divisions or categories with constant overlapping and intersection among each other. Also there is sub-division within each category as there is a vast difference in the writings of the first generation from that of the second or third generation in their perception and response to their diasporic existence in different periods of their literary career. As best exemplified by Bharti Mukherjee who's literary career spans over thirty years started as an exile moved on to immigrant and presently prefers to call herself as a transnational American author. The disavowal of Indian inheritance, of removing the tag of 'indian' author attached to them has been asserted by authors ranging from immigrants like Anita Desai, Salman Rushdie to western born non-immigrants like Hari Kunzru, Jhumpa Lahiri and so on, perhaps it is indicative of their allegiance to the current globalist tendencies.

Under the broad spectrum of Indian diaspora writing in English is included *The Travels of Dean Mahomet* (1794) written by Sake Dean Mahomet, who had emigrated to Ireland and England. This work happens to be the first English piece of writing by an Indian. Toru Dutt, the 19th-century poet considered by many to be the first important Indian poet in English, spent years in Europe, should be a part of this category as most of her works were produced during her brief stay in Europe. Even in the 1940s Raja Rao had spent years abroad. His *Kanthapura* sometimes simplistically considered the quintessentially "Indian" novel of an Indian village, was written in a castle in France. And among the trinity of Rao, Mulk Raj Anand and R.K. Narayan, who laid so much of the groundwork for future generations, only Narayan did not have extensive experience of the west before becoming a novelist. Mulk Raj Anand was also influenced by the socialist ideals that resonate in his works as a consequence of his stay in England. It was here that he became closely associated with the British socialists. Kamla Markandaya left India way back in 1948 and has lived in England ever since. Her works talk about the special diaspora situation long before others started it she is therefore regarded as a pioneering member of the Indian diaspora.

On the other hand we have writers who are the second or third generation descendants of the earliest Indian migrants' i.e., the indentured labours or 'girmityas'. Their link to India has never been actually realized but for them India is a part of the collective memory of the diaspora community to which they belong. The earliest work of such kind is by Sreeprasad Naipaul titled 'The Adventures of Gurudeva and Other Stories' (1943). The stories are concerned with the lives and struggles of the girmitya or sugar diaspora. Naipaul depicts the misfortunes of a community displaced both culturally and physically due to its marginalization by the native culture and its efforts to assimilate. It is a pioneering work that lays the foundation for subsequent narratives, including those by his sons Vidhiadhar and Shivadhar and other of the diaspora whose narratives dealt with the history of plantation. Sudesh Mishra asserts that:

*"...a sense of existential panic, of nomadic terror, which may take form of an abstract homesickness...or the nausea of namelessness allayed but experienced with redoubled intensity by those who opt for a second displacement. Panic, nausea, hysteria, estrangement, violence, nostalgia, madness: these feature variously as a symbol, malady or organizing principle in many a text by writers of the girmitya diaspora.." (279)*

Some prominent writers of the girmitya diaspora other than the Naipauls are Harold Ladoo, Subramani, K.S. Maniam, Neil Bissoondath and the two Dabydeens- Cyril and Divid. There are also writers like Santha Rama Rau who belongs to the privileged class of the society and her migration was voluntary rather than forced. In her narratives she deals more intimately with the motherland. G. Vassanji on the other hand depicts the life of the Gujarati trader of East Africa.

Post independence saw the emergence of writing by new diaspora. The new diaspora writing is characteristic of its conscious awareness that it occupies a 'liminal' zone as reflected in uneasy interaction between gender, class, ethnicity etc. All the major Indian expatriate writers like Salman Rushdie, Vikram Seth, Amitav Ghosh, Anita Desai, Bharati Mukherjee, Shashi Tharoor, Rohinton Mistry and Meena Alexander belong to the category of the new Indian diaspora.

Still there are writers from the second generation immigrant class whose parents had migrated to the west and writers of mixed parentage which also constitute the current expatriate Indian writing in English. These writers pay more insistence on connectivity to host culture than the nostalgic yearning for the home of their parents. Their narratives deal with the individual struggles of assimilation and acculturation and an assertion and celebration of hybrid identity. Prominent writers of this category are Hari Kunzru, Shauna Singh Baldwin, Atima Srivastava, Meera Syal, Amulya Malladi, Pico Iyer and Jhumpa Lahiri to name a few.

The multiculturalism evident in the works of emigre Indian writers is a result of the alienation they have suffered from cultures, Indian and western, and their struggle to bridge the gap between the two. It is often because of the

distance these writers must contend with between themselves and the milieu of their stories that a certain longing and sentimentality often creeps into their works. Though this element of nostalgia has often been debunked by the critics, it may well be seen as the hallmark of an emerging class of Indian writers.

However Diaspora Indian writing in English is not free of criticism. The writers of India diaspora are often charged with the allegation of inauthentic representation of India in their works. It has been said that these writers write exclusively for the western market and audience and in order to increase their readership and profit. Some writers exoticize and project India as a land of the mystics and yogis, magicians and snake charmers. Some others try to cash in the sympathy of the western readers by presenting India as a land of poor - rural and urban - beset with crime and corruption at all levels. The Indians in their works are depicted as a miserable lot, struggling for everyday existence survival in harsh circumstances. Often winning but mostly ending in defeat.

Writers of India diaspora also deal with narratives of people moving out of their homes (in India) primarily to the west i.e., US and Europe in search of better future prospects, to gain financially as well as professionally and of course to be tagged as the illustrious NRIs. But while shifting to a foreign land they forget the fact that they might not be able to adjust to the life and community there. Financial security is often achieved but at the cost of a deep sense of alienation and longing. This sense of longing conflict in the recent works.

The reasons why Indian English writers prefer to live abroad are varied. Residing in the west offers easy access to publishers, agents and even other writers of a similar bent of mind with whom they can discuss their books, work and other things. It lends them a sense of comradeship that helps dispel the feeling of loneliness during the long years that a book can take. Writers who have lived and written in India, such as Anita Desai, often lament the lonely lives that writers must endure, with the absence of western conventions like critique groups and writers' meets that writers abroad have access to. Though the trend is catching up in India, it still is long before writers can find support in this country.

There is another desirable reason for Indian writers to migrate to the Occident. Living abroad is also the way that Indian writers in English learn the objective exactitude, the critical sharpness and the universal essence of world literature, something that cannot be imbibed by reading the works alone. It helps them write about India in a quintessential and objective manner, unforgiving of the preoccupations and foibles that writers in India might fail to deem important enough to be captured. Looking at the growing number of Indian writers choosing to populate the western literary firmament rather than the Indian one, this trend is only going to strengthen..

It is an undeniable fact that the diaspora Indian writing in English today is the Indian writing in English IWE per se, with all major Indian writers in English writing from the diaspora spaces in the west. The names that come to our mind

at the very maintain of Indian writing in English are of sir V. S. Naipaul, Salman Rushdie, Amitav Ghosh, Vikram Seth, Rohinton Mishra, Bharati Mukherji, Anita Desai, Jhumpa Lahiri and so on. If Indian writing is making waves on international scene, it is mostly because of these writers. One can not dismiss the fact that these writers have been winning international awards like Nobel, Booker, Pulitzer and Commonwealth and so on not to direct the latest addition of Aravind Adiga bagging the 2008 Man Booker prize for 'The White Tiger'.

Whatever the reasons, emigration has done more good than harm to the Indian literary scene, with publishing houses and literary agencies setting up base in India, in recognition of the growing importance of Indian writing in the global scene. The press has been flooded for some years now with stories of major publishing houses like Penguin. HarperCollins and Random House flocking to India in expectation of a literary boom in the country. This in turn has helped many English writers living in India find good publishers and recognition for their work.

# Involvement of Various Stakeholders in Health Care Provision in MCD Schools of South Delhi

---

---

**Mrs. Manisha**

*Assistant Research Officer, Distance Learning Cell, National Institute of Health and Family Welfare, Munirka, New Delhi-110067*

---

---

**Prof. S. Vivek Adhish**

*Professor, Department of Community Health Administration, National Institute of Health and Family Welfare, Munirka, New Delhi-110067*

---

---

**Prof. J.V.Singh**

*Director, UP Rural Institute of Medical Sciences & Research SAIFAI, Etawa*

Good health is essential for the overall growth and development of children and more importantly, for their success in their studies. The performance of sick, weak or malnourished children is poor than healthy, well-fed students. Education plays an important part in improving health and nutrition. Schools, after the family, have a vital role to play for the cognitive and creative development of children. The children of today are the future of tomorrow; this powerful statement assumes special significance in our context as children (0-14 years) comprise one third of the total population in the country. This age is the formative stage in the growth and development of a child; physically, mentally, emotionally and socially. Health habits formed at this stage will be carried forward to the adult age, old age and even to the next generations. Preventive measures taken during this period of growth may have a beneficial lifelong effect. School is a socializing institution and stimulates learning environment and positive changes in children. Schools are the places for nurturing roots (learning) and wings (practice). They are important places to address the health issues of children. For the wholesome care of a child, the role of teachers, parents and health care service providers is essential which help the child from preventing accidental hazards, diseases and other serious behavioural problems. School health is an economical and powerful means of raising health of the community.

## **Objectives**

The study was undertaken to (i) assess the health and hygiene practices followed by the children in MCD primary schools of South Delhi (ii) activities undertaken by the teachers, parents and health care service providers towards promoting health in various government schools of Delhi (iii) identify the gaps

and implementation of health interventions for initiating health and hygiene practices among students through teachers and parents (iv) assess the improvement and suggest measures for improvement of health and hygiene in schools

### **Methodology**

The study was conducted in the 8 MCD primary schools of South Delhi. The design of the study was Quasi Experimental with pre & post Intervention with control group. A series of focus group discussions (FGDs) were conducted to extract information from the respondents with regard to the extent of their involvement in SHS and expectation from SHS. The study population comprised the staff of school health clinics, and parents and teachers of the respective schools. In each randomly selected school, two FGDs were conducted, one with the parents for assessing the health and hygiene practices of their children and another with the teachers to find out the activities undertaken by them towards promoting health. In addition to these FGDs, one FGD was also conducted with the health care service providers (nurses, refractionist and pharmacist) as these people were providing health care services to school children.

### **Findings**

#### **FGDs with Teachers**

Seven-Eight Focus group discussions were conducted with 56 primary school teachers to obtain information pertaining to the perception of teachers regarding their role in improving the health and hygiene practices of school children, their opinion about detection of major illnesses, views regarding health education and their attitude towards various health services provided to the school children.

#### **Teachers' Role in Improving the Health and Hygienic Practices of School Children**

The study revealed mixed kind of responses from the teachers. Everyone felt that they were in contact with the children for a considerable part of the day when the child was away from home, they could inculcate healthy habits which helped children to live a healthy life. Most of them believed, by imparting knowledge regarding hygiene, nutrition and prevention of diseases, would have healthy hygiene practices and would also teach their siblings, friends and family members. Very few teachers perceived that providing a safe, clean and child friendly environment in schools was in the hands of a teacher which was a major determinant of children's health.

#### **Teachers Involvement in Detecting Major Illnesses of School Children**

Most of the teachers were of the opinion that by detecting diseases like fever, cold, skin diseases, ear discharges and visual defects, they could play an important role in early treatment of diseases. Their responses were also recorded for the major illnesses among school children like anemia, malnutrition, worm infestation, eye disorders, dental disorders etc. Though most of the teachers

responded with caution that they could make a guess about the anaemic status of the children by looking at the tongue and nails, there was a common agreement that treatment should be started by health professionals only. Most of them were familiar with the symptoms of visual defects and dental caries in children.

### ***Teachers' Views Regarding Health Education***

Almost all the teachers expressed their agreement that health education was crucial in early years of schooling. While the general opinion was health education developed and improved the hygiene and food habits of children, many expressed that it had double advantage. First, it helped in improving health habits of children directly. Second, the children also spread the messages to their siblings and parents who might also be benefitted. Few of them were of the opinion that health education should also be must for parents also as they could reinforce the messages to children in their homes but involvement of the teachers in the health talks was limited due to their busy schedule of teaching in the school as well as frequent indulgence in many other works like different surveys, melas, administrative work and duty in health programmes like pulse polio.

### ***Teachers Attitude towards Various Health Services Provided to Children***

The teachers' attitude regarding health appraisals and referral services were-

#### **Health Appraisals**

Most of the teachers considered health appraisals as very important as it would detect many diseases early so that effective treatment could be given. There was a common feeling that the time spent on each child was very less and they also expressed that every child should be examined by doctor at least once a year. The second major issue was drugs. Though they accepted that there was no shortage of drugs for worm infestation and multi vitamin tablets, often the children were given slips to get medicine from outside as there was virtually no stock for other medicines.

#### **Referral Services**

Almost all the teachers had experience of referring their children to the zonal clinic for further examination and lab tests. Usually they sent a verbal message or a slip through the children to their parents. Sometimes if the doctor had given a slip for specialist consultation, this was also sent to parents but they didn't accompany the referral cases. They also told that however most of the time the health team didn't give any referral case list. On the issue of taking referred cases along with them to School Health Clinic/hospital, a majority of teachers told that they faced many problems in it. They didn't have any vehicle for taking the children to School Health Clinic and if they hired any vehicle for it, then they had to face a lot of problems in reimbursement of the bill. Therefore they didn't accompany with the referred cases. Regarding follow ups, very few of them agreed that this happened. Majority of the cases that were followed

were either for giving spectacles, or other orthopedic appliances for physical disabilities.

### **Conclusion**

While almost (> 90 %) all the teachers agreed that providing school health services was essential in overall development of the child. Majority of them were not fully satisfied with the health services provided to the children. All the teachers had common agreement that all the children should be examined in detail by doctors at least once a year. Majority of them agreed to help in the screening of children for major illnesses if necessary training was provided. Still, they would like their findings to be confirmed by health personnel before starting any kind of treatment. They emphasized that health education was the mainstay for improving the hygiene habits of the children.

### **FGDs with Parents**

FGDs were conducted 200 parents of different school children studying in MCD schools to find out their involvement and expectation from the school health services.

### **Knowledge and Satisfaction from School Health Services**

Most of the parents confirmed that they had the knowledge about the visit of health team in the school. The parents also knew about the regular medical check up activity provided to their children by school health team in schools and they were also satisfied with these services.

### **Health Education Activity in the Schools**

Most of the parents told that very little health education activity was performed about personal hygiene, healthy habits, balanced diet etc. in the schools. They also told that these activities were very irregular also.

### **Extent of Involvement:**

Most of the parents told that as they didn't know the date of medical examination of their children in the school so they couldn't be present at that time of medical examination. Hence they couldn't convey the chronic and other diseases of their children to the health team.

### **Referrals**

Most of the parents told that due to heavy rush in government hospital and absence of special counter for referral children there, they faced a great difficulty in it. They further highlighted that they faced difficulty in reaching the school health clinic which was not centrally located. Due to these difficulties, they had to take their children to private clinics which incurred heavy expenses.

### **Expectations from School Health Services**

Most of the parents told that regular medical checkup and health education activities should be held of their children in the schools and audio visual aids should be used in provision of health education to make the child understand easily. They further expected that special counter for referral children should

also be provided in the hospital to avoid rush. They told that at present no laboratory services were provided in the School Health Clinic, so these services should also be introduced there and ban on loose medicines should be imposed and only good quality medicines should be given to their children. They also showed their interest to get involved at the time of medical checkup of their children so that they could convey health team about their children chronic or other diseases, if any.

### **FGDs with Health Care Providers**

Eight Health care providers including six nurses, one refractionist and one pharmacist were also included in focus group discussion to find out the extent of their involvement and their expectation from school health services. These people were providing health care services to the school children.

### ***Extent of Involvement in School Health Services***

All the health care providers told that they were fully involved in the health service provision in the schools and satisfied with these services. Most of them said that the children should be followed up frequently to keep them fit and healthy.

### ***Disturbances in the Functioning***

Due to posting outside school health services, most of the health care providers told that this produced a lot of disturbances in the routine functioning because of which they were not able to be involved fully in the school health functioning. A few however told that it produced no disturbances as they covered up these disturbances by doing extra work after this.

### ***Method of Delivering the Health Services***

All of them told that they gave health education following class wise approach i.e. provided services to one class and then next individually in which individually or person to person communication on different health topics took place. Nature of this communication was usually related to the problem/defect found in the school children. They told that it was a good method as it was easy to do the follow up of cases by this method. Almost all said that one was in school prayer as this method was more beneficial in delivering health talk to all students together. But most of them agreed that they reached the school late due to unnecessarily signing the attendance prior to leaving the school. They told that they could reach at least 1 hour earlier if they directly went to school instead of going there. This would save time and enabled them to start school health activity early.

### ***Expectation from School Health Services***

A majority of the health care providers expected that there should be more participation of teachers to decrease their workload. Some expressed that they should also be provided vehicle for going to school. Most of them wanted that more staff should be deputed so that regular follow ups of children could also

be done. Almost all (> 90 %) expected provision of Lab and specialist services should also be there.

### **Conclusion**

Based on the above discussion, it was concluded that most of the health care providers were fully involved in the school health functioning. However, the frequent posting outside the school health scheme produced a lot of disturbances in the routine functioning. All of them appreciated the method of delivery of health care services. They agreed for follow up activity. Regarding their expectations, majority of them expected increased participation of teachers and budgetary provision of the medical examination in schools.

### **References**

1. Gupta-. MC. and Mahajan BK (2003) School Health Services; textbook of Preventive and Social Medicine, 3rd Edition, 574-575
2. New Delhi Municipal Council. Official Website. Accessed at [http://www.ndmc.gov.in/main\\_edu.htm](http://www.ndmc.gov.in/main_edu.htm)
3. Economic Survey of Delhi 2008-2009. Planning Department, Government of NCT of Delhi.

# Management for All: Building and Gearing-up Efficiency!

---

---

**Rajnish Kumar**

*M.B.A., Guest Lecturer, Faculty, Management  
Motihari College of Engineering*

This article is conceptualized for generals and professionals!

Satisfaction of mind can be obtained only by taking the mind away from thoughts of sense enjoyment . 1The more we think of sense enjoyment, the more the mind becomes dissatisfied .In present age we unnecessarily engage the mind in so many different ways for sense gratification, and so there is no possibility of mind's becoming satisfied .The best course is to divert the mind to real knowledge and thus become purified If above one exercises e.g persons,states, beaurecracies,managements only than an intention by objective we can accomplish .In today context man's behaviour universally selfish on major mode,that is why our attitude acts and result ends with marginal gain. Mission of health, education, races, social disorders, environment, global warming, conservations,poverty, corruption fail in wide gap towards objective despite best of budget and technology applied. This has had been .Failure of not identification of mal-adjustment and mal-intention by states,managements,planners, executors, governments.

Activities are a slice of life, not the entire pizza!.<sup>2</sup>One of the most basic human activities is mananging, knowingly and unknowingly being practiced by human since olden days to improve their efficiency and solve their wanted purposes. Management has been indetified as an indispensable discipline during 18<sup>th</sup> century much in solving business problems and unfortunately less to improve one's efficiency.

The globe is, in my opinion "Do we have anything on your breakfast that taste like lunch?" Now everyone engaged in rampant consumerism-is year round priority, <sup>3</sup> Are malls our new temple? Everyone is hankering about consume needs on regular basis with maximum-has mundane's requirement, at present. As we know, a society is a comprised of a series of relations, a son is not only son of father besides son is a brother and student and holding veritable manifestations of relations amidst society.

<sup>4</sup>Man is a product of thoughts. Everyone is hunger for coining one's earning at the cost of forgetting one's accountabilities and realizes by them (one's),this is best of thing is being discharged by them (one's). This is USED-TO-METHOD-TO-SURVIVE has far reaching impacts with ugly manifestations of disorders e.g family irresponsibility, emotional bankruptcy, dullness in societal activities can not be substituted by even best of economics.

I feel pleasure to acknowledge and propound a basket of models e.g\* *RAMA*, \**SAI*, \**HANUMAN*, \**GOPE* which are propellants towards building-up

efficiency. Undersaid models' steps are instruments(tantra) for drawing efficiency. The name of model has been characterized by models' actions .I can not overrule exception of models as details hereunder:

**\*RAMA model (Suited for competitive Aspirants)**

<i>SSStep</i>	<i>Character</i>	<i>Force(actionable)</i>	<i>Status</i>
1st	REJECTION	+	Under each step one may stay once or several times.
2nd	AGITATION	++	Same as above
3rd	MELLOW-DOWN	+++	Same as above
4th	ACCEPTANCE	++++	Same as above

Step 1<sup>st</sup> is a phase of Rejection,one can stay into rejection once or several times, virtually this is the critical phase for considertations, reviews, recommendations and efforts. As one would multiply- up one's efforts under rejection, if one could not have success then step 2<sup>nd</sup>, is vital for inserting all Agitation starts positives attitudes towards assigned aim. Mellow-down is a green signal for success and ensures efforts and directions is one right track. Finally, step 4<sup>th</sup> is Acceptence. In sum-up, in conclusion, the success is not a chance but success is earned aim attained by well co-ordinated and well directed efforts made by aspirants.

The battle between Rama and Ravana is classical example for **\*RAMA model**. if one pursues for aim silently applying **\*RAMA model**. Sometimes, under phase of rejection and agitation do not insert their positive attitudes towards aim finally trapped under clutch of negativity and depression.

**\*SAI model (Suited for setting aim for Aspirants)**

<i>Step</i>	<i>Actionable</i>	<i>Opportunities</i>
1st	Specific	Doctor, Engineer, Professional, Poet, Academician, Administration, Politician, etc.
2nd	Analysis	SWOT Analysis, scrutinsed judiciously strongness Vs weakness.
3rd	Interest	One capacity and capability judiciously viewed towards specific analysis.

In conclusion, if an aspirant is careerist about Engineering and his interest in administrations then there must be dare to apply **\*SAI model** to promote the interest level would enable aspirants for job-enrichment.

**\*HANUMAN model (Suited for Statesman, Humantarian, Teacher, Guru, Saint, Scientist, etc.)**

<i>Step</i>	<i>Actionable</i>
1st	Human
2nd	Action
3rd	Non-self
4th	Utilization
5th	Management

Hanuman is a rare character in the Ramayana! Hanumana does each and every activities unconditionally and selflessly with a great application of values, as<sup>6</sup>Tulsidas signifies and paints Hanuman's vitality in Hanumanchalisa:

"Sukshamroopdharisiyahidikhawa

Bikatroopdhari lank jarava

Bhimroopdhariasursanhare

Ramchandrakekajsamhare

Layesanjeevanlakhanjiyave"

\*GOPE model (Suited for careerist employee)

Step	Actionable	Actionable
1st	Goal or Aim	Set aim for higher aim for specialization or education.
2nd	Opportunity	Would higher aim be appreciated?
3rd	Place	Would this place is right?
4th	Energy	Could carrieristic aspirant spare energy toward aim?

Case study: A employee of a organization is B.tech, he is careerist about higher education and pursuing M.tech, employee assumes himself his M.tech will add value in his earning and recognition too in existing organization! If this opportunities would not provided by existing organization only then employee would in quest of other options and would examine pulse in external environment to ensure his earning and recognition.

Lord Krishna, the superhead of God, reserves strong opinion the body is stationed while the soul is permanent so we must care of real knowledge of the soul than the body. one must earn real knowledge to realize the ever lasting power of building-up efficiency forever unconditionally.

In conclusion, one's aim can be accomplished with good percentage if one apply oversaid models only with proper sense of selections of models as per requirement with backed by moral values.

*Acknowledgement: During prepration for article as over inscribed my daughter Saumya helped me a lot.*

## References

- \* As models, conceptualized and propound by Rajnish kumar, please feel free to mail your esteemed feedback about these models as discussed in the over inscribed article *MANAGEMENT FOR ALL : BUILDING AND GEARING-UP EFFICIENCY!* on E-mail i.d : rajnish.kumar44@gmail.com and call to me on cell number: 918986320111 for 24x7.
1. A.C. Bhaktivedanta Swami Prabhupada, Second edition, in introduction, pp.69.
  2. Harold Koontz & O'donell, Fourth edition, The essential of management, pp.1.
  3. Reader's Digest, feb edition, publication year, 2011.
  4. Mahatama Gandhi.
  5. Tulsidas in Hanumanchalisa.
  6. As Lord Krishna delivered in The Gita.

# India–China in Africa: Issues and Debates

---

---

Sushmita Rajwar

*Assistant Professor, Department of Political Science  
Maharaja Agrasen College, Delhi University*

In the last two decades there has been an increasing interest in investments in Africa both by India and China as major Asian players. The notion of ‘Scramble for Africa’ is so central to the western mind that it is almost impossible to speak of India in Africa without comparing it with China. India and China are being accused of the charge of ‘new-colonialism’ and to be at loggerheads with each other in the continent. China’s increasing presence over the African continent is being a major area of concern all over the world especially for India which is not a new player in the continent. India has been strengthening its relationship with the African countries since the time of its independence. Not only are these two emerging giants making notable waves in the way that international finance, trade and investments are being shaped but also in the way that the rules, which govern the global governance regime are being influenced. Nowhere is this more apparent than in the realm of the international architecture on aid effectiveness. While the debate rages on around whether China and India are new or reemerging donors in the world today, their behaviour as development partners is certainly changing the global aid picture and most importantly in Africa, and China has clearly gone far ahead of India in this race. Thus, India is always uncomfortable to draw a comparison with China in the African continent. However, the series of changes in its policy towards Africa over the few years show that the presence of China is an issue of concern for India too like others. On the other hand, China has been giving India tough competition in many of the countries in Africa especially the ones India always boasted of its time-tested and historical ties.

## **Chinese Presence in Africa**

In order to mark its presence in Africa and compete with the MNCs from Western countries (especially USA), the Chinese government according to Chris Alden in his book *China in Africa* developed a three-point strategy based on the following: competitive political advantage- in which China was willing to invest in any of the African states regardless of its international standing on human rights and rule of law, comparative economic advantage- in which China aggressively employed low cost bidding based on the use of low skilled labour and management and diplomacy and development assistance- in which China used aggressive and intensive diplomacy and lavished African states with projects and low interest development assistance.

The reasons behind the Chinese –African trade boom constitute China’s drive for resource security. As the world’s second largest consumer of oil and

only with limited natural resources, China was attracted to relatively underexploited petroleum. China has 2.3% of the world's known oil reserves and 1% of the known natural gas reserves. First, Africa is rich in terms of the natural resources required to feed Chinese industry. Second, Africa's population of over 700 million was singled out as an enormous potential market for China's relatively inexpensive low and medium grade consumer products. Third, economic reform in many African countries has opened the door to economic co-operation. And fourth, several African countries were identified as key-targets for profitable long term investments where the emphasis was clearly on oil producing nations and those with growing economies. China's turning point for energy came in 1993 when it changed from a net exporter to a net importer of petroleum. Another factor that corroborated Beijing's view that a global foreign policy had become a sheer necessity was the financial crisis in Asia in 1997 which alerted the Chinese leadership to the risks of economic interdependence as it exposed the vulnerability of the country's outward-oriented economy to external shocks. Apart from the above, what was most important is the One China principle, the fundamental exception to China's 'no-strings attached' policy, has seen the Chinese government use African support in its cross- Straits campaign.

### **India's Policy towards Africa**

The main thrust of India's policy towards Africa has been support for the struggle for decolonization and racial discrimination in South Africa, historically. Economic engagement between India and Africa is increasing like never before though it is not new (this character of the historical relations between the two countries is being claimed to avoid any comparison with the Chinese involvement). During the colonial period, India played a significant role in the freedom struggle and has been an important component in its economy too. Presently, the scale and swiftness of India's economic engagement with Africa is expanding. This has been facilitated by the changing African outlook in recent years. On the political side there has been an end in sight for some of the debilitating conflicts that have ravaged the continent. India has supported various African nations in the international forums. At the same time, Africans are more interested than ever before to take charge of their own destiny. For its part, the Indian government laid out its broad economic co-operation frame work during the India-Africa Forum Summit in April 2008 and again this year in Addis Ababa, Ethiopia. This conference gained significance because of an attempt to forge a closer partnership between India and African countries and address the common goals and challenges they face. An important aspect of India's approach towards Africa is the growing presence of the private sector in African countries. The private companies are flourishing in Africa at a greater pace. The Indian company ONGC Videsh Limited also has a remarkable presence in the continent.

### **Conflicting Interests: India and China**

India lacks the capacity to compete with China in Africa at various levels.

Simultaneously, it cannot ignore the growing presence of China all over the continent which is projected to be at loggerhead with Indian presence. A cursory reading of the different views on Chinese presence in the continent as Constantino Xavier suggests that Africa is just another strategic context in which India will have to blindly follow and match China's maneuvers, if it wants to keep its great power ambition intact. In contrast to this, there are others who refuse any possible comparison with China and emphasize India's 'absolute uniqueness' and authenticity. It seems that Indian diplomats have harnessed the belief that eventually Africa will realize the cost of the Chinese development model and opt for India as their privileged partner. Both these approaches have failed to serve Indian interests in Africa and have often led to sub-optimal policy making. In fact, the above views have overlooked the fact that India simply lacks the financial and political capabilities to compete with the China. An example to this is that ONGC Videsh Limited has lost bidding to the Chinese companies in quite a number of places in Africa for example, in Angola, Nigeria and a rail project in Ethiopia.

India had announced its first India Africa summit in 2008 to be held at New Delhi and the second one took place this year in 2011 at Addis Ababa, Ethiopia. India gave \$ 5 Billion line of credit to Africa for the next three years. 'This \$5 billion makes a statement that India is continuing to re-engage in Africa seriously' said Alex Vines, of London-based think tank Chatham House. The India Africa summit in 2008 was seen widely as India's response to Forum of China Africa Cooperation (FOCAC) set up by China in 2000. India on the other hand has been avoiding to draw any kind of comparison with China in Africa. Partly because of the reason that India does not have the financial capacity to match China in the continent but it needs Africa for oil and for political reasons (acquiring a permanent seat in the UN). So, it is trying to cooperate with Africa in other fields like engineering, IT, technology, agriculture etc.

In recent years, bilateral trade between India and Africa has soared from about \$1 billion in 2001 to \$46 billion this year. However, it still lags far behind China. Last year, Beijing's bilateral trade with Africa surpassed \$120 billion. Some scholars have also pointed out that India is not trying to catch up with China in resource acquisitions or investments in the mineral and oil fields — it is trying to catch up with China in terms of geopolitical influence.

The Indian interests in Africa are not very different from that of the Chinese, but the approach of both the countries marks a huge difference and the presence of both the countries differs. Both the countries have had a different relationship with Africa, one has developed over a period of time and gone through good and bad times while the other is more of a recent phenomenon. Today, its not only external pinches that have made awaken Africa but they themselves have realized the urgent need to sustain themselves. Therefore, we should try not to impose solutions from outside and should respect and recognize the capability and capacity of Africa itself to sustain itself in the age of globalization. Any *just* solution for the Africans rests on the world's awareness of the fact that Africa can decide for itself.

As for India, there is a need to check its focus areas and to also understand what, when and where Africans really want to engage. The private sector involvement is really important in Africa in the present context of global interdependence. India should also try to identify the areas in which more positive relations with African countries can be developed such as health, medicines, education, infrastructure building etc. There is also a need to formulate a new policy towards Africa working along the lines of the 'look east policy'. It is high time that India should try to look beyond its goodwill in Africa and make its presence felt. Finally, yes the comparison of India with China should be avoided but not overlooked at the same time not being conscious of the Chinese approach and presence in the continent.

### References

- Yu George T (1968), 'Dragon in the Bush: Peking's presence in Africa', *Asian Survey*, 8(12):1026.
- Muekalia, D.J. (2004), 'Africa and China's Strategic Partnership', *African Security Review*, 13(1), 5-11.
- Alden Chris (2005), 'China in Africa', *Survival*, 47(3): 147-164.
- Payne J Richard & Cassandra R Veney (1998), 'China's Post Cold War African Policy', *Asian Survey*, 38(9): 867-879.
- Broadman Harry G (2007), *Africa's Silk Road: China and India's New Economic Frontier*, Washington DC: The World Bank.
- Slawecki Leon (1963), 'Two Chinas in Africa', *Foreign Affairs*, 41, 398-409.
- Mendes Carmen Amado & Nascimento Daniela (2009), 'China in Africa: a mutually beneficial strategic partnership? The case of Sudan', Paper for the ISA Annual Convention, 15-19 February, 2009, New York.

# Education in the Emerging Indian Society: A Sociological Perspectives

---

---

Kanak Chaturvedi

Associate Professor, Department of Education, N.I.E.C., B.B.D., Lucknow

## Education for Changing Indian Society

Following India's independence a number of rules were formulated for the backward Scheduled Castes and the Scheduled Tribes of India, and in 1960 a list identifying 405 Scheduled Castes and 225 Scheduled Tribes was published by the central government. An amendment was made to the list in 1975, which identified 841 Scheduled Castes and 510 Scheduled Tribes. The total percentage of Scheduled Castes and Scheduled Tribes combined was found to be 22.5 percent with the Scheduled Castes accounting for 17 percent and the Scheduled Tribes accounting for the remaining 7.5 percent. Following the report many Scheduled Castes and Scheduled Tribes increasingly referred to themselves as *Dalit*, a Marathi language terminology used by B. R. Ambedkar which literally means "oppressed".

The Scheduled Castes and Scheduled Tribes are provided for in many of India's educational programmes. Special reservations are also provided for the Scheduled Castes and Scheduled Tribes in India, e.g. a reservation of 15% in *Kendriya Vidhyala* for Scheduled Castes and another reservation of 7.5% in *Kendriya Vidhyala* for Scheduled Tribes. Similar reservations are held by the Scheduled Castes and Scheduled Tribes in many schemes and educational facilities in India. The remote and far-flung regions of North East India are provided for under the Non Lapsable Central pool of Resources (NLCPR) since 1998-1999. The NLCPR aims to provide funds for infrastructure development in these remote areas.

The government objective for the *Sarva Shiksha Abhiyan* (SSA), started in 2001, is to provide education to children between 6-14 years by 2010. The programme focuses specially on girls and children with challenged social or financial backgrounds. The SSA also aims to provide practical infrastructure and relevant source material in form of free textbooks to children in remote areas. The SSA also aims at widening computer education in rural areas. However, some objectives of the SSA, e.g. enrolment of all children under the scheme in schools by 2005 remain unfulfilled. Education Guarantee Scheme and Alternative and Innovative Education are components of the SSA.

Women from remote, underdeveloped areas or from weaker social groups in Andhra Pradesh, Assam, Bihar, Jharkhand, Karnataka, Kerala, Gujarat, Uttar Pradesh, and Uttarakhand, fall under the *Mahila Samakhya Scheme*, initiated in 1989. Apart from provisions for education this programme also aims to raise awareness by holding meetings and seminars at rural levels.

The government allowed 340 million rupees during 2007–08 to carry out this scheme over 83 districts including more than 21, 000 villages. Currently there are 68 *Bal Bhavans* and 10 *Bal Kendra* affiliated to the *National Bal Bhavan*. The scheme involves educational and social activities and recognising children with a marked talent for a particular educational stream. A number of programmes and activities are held under this scheme, which also involves cultural exchanges and participation in several international forums.

India's minorities, especially the ones considered 'educationally backward' by the government, are provided for in the 1992 amendment of the Indian National Policy on Education (NPE). The government initiated the Scheme of Area Intensive Programme for Educationally Backward Minorities and Scheme of Financial Assistance or Modernisation of Madarsa Education as part of its revised Programme of Action (1992). Both these schemes were started nationwide by 1994. In 2004 the Indian parliament allowed an act which enabled minority education establishments to seek university affiliations if they passed the required norms.

### **Concept of Culture—Salient Features of Indian Culture**

The term culture refers to a state of intellectual development or manners. The social and political forces that influence the growth of a human being is defined as culture.

Indian culture is rich and diverse and as a result unique in its very own way. Our manners, way of communicating with one another, etc. are one of the important components of our culture. Even though we have accepted modern means of living, improved our lifestyle, our values and beliefs still remain unchanged. A person can change his way of clothing, way of eating and living but the rich values in a person always remains unchanged because they are deeply rooted within our hearts, mind, body and soul which we receive from our culture.

Indian culture treats guests as god and serves them and takes care of them as if they are a part and parcel of the family itself. Even though we don't have anything to eat, the guests are never left hungry and are always looked after by the members of the family. Elders and the respect for elders is a major component in Indian culture. Elders are the driving force for any family and hence the love and respect for elders comes from within and is not artificial. An individual

takes blessings from his elders by touching their feet. Elders drill and pass on the Indian culture within us as we grow.

“Respect one another” is another lesson that is taught from the books of Indian culture. All people are alike and respecting one another is ones duty. In foreign countries the relation between the boss and the employee is like a master and slave and is purely monetary whereas in Indian culture the relation between the boss and the employee is more like homely relations unlike foreign countries.

Helpful nature is another striking feature in our Indian culture. Right from our early days of childhood we are taught to help one another in need of help and distress. If not monetary then at least in kind or non-monetary ways. Indian culture tells us to multiply and distribute joy and happiness and share sadness and pain. It tells us that by all this we can develop cooperation and better living amongst ourselves and subsequently make this world a better place to live in.

Ancient civilization in India reveals marvellous facts about our heritage. It is a eye opener as to how kingdoms ruled and how people went about life in a logical way. Though medieval, it is actually amazing to find how people transacted and went about building dams and tended to the chief occupation which was agriculture. Dance and rituals were always a part of Indian culture and this was the chief mode of entertainment.

Indian culture is also about respecting elders, honouring heroes and cherishing love. It is a land of aspirations, achievements and self reliance. Indian culture has a very high level of tolerance and hence the advent of so many external cultures was not restricted. Adaptation to any culture or embracing a religion was always the democratic culture. Indian history is about war heroes during Indus valley civilization and the initial time when currency was coined. Indian history talks a lot about self reliance especially in terms of food and agricultural produce. This was the great effort put in by the farmers and support received through irrigation. The modern agriculture also shows a lot of indigenous methods of preserving the produce. The Chola dynasty, the great King Emperor Ashoka and the secular era of Emperor Akbar will always be green in our memory. Several books are written on the rich Indian culture wherein the saints preserved the Vedas and scriptures.

There are shlokas and mantras i.e. chants that can evoke positive energy and revoke enthusiasm in life. The rich culture of yoga as a part of life and the goodness of ayurveda has now got an universal lifestyle approach. Our roots are strong and despite the westernization and access to technology, the distinct Indianness is still maintained whilst celebrating Diwali or observing the Shravan fast. This is also believed to be a land of Lord Rama which is Ayodhya or the birthplace of Sri Krishna is considered as Mathura. The birth of Sikh religion and the reverence felt by all Indians is still intact. Indians are extremely secular and especially in the metros there is seamless blending of Indians during Xmas

and Id. Ethnic charm is exuded in simple outfits in India. The tropical climate is well adapted to the range of muslins and cottons. The mixed variety in cotton goes from viscose, polycot and also cotton silk which has a sheen of its own. Attires are very much about the region and climate. The Himalayan costume is suited for the environment where the dress is a blanket wrap in red and black secured with a ethnic pin. The ornaments or jewellery is a festive adornment with a big red bindi to complete the outfit.

The sari happens to be the most versatile drape with its amazing styles of draping and design. The sari is the traditional dress of India which also modifies as per material, drape and style with each region. This has also gone up to international drape style followed by ranking designers on the ramp shows. The chungari sari of the south has the tie and dye pattern that finds its counterpart in the bandhi print of Gujarat. There are embroidery types that seem to be the intrinsic talent of certain regions.

The cardigans and shawls are hand-woven from the North especially the Himachal and Arunachal belt. This displays the rich handicraft culture of India. The modernization in winter wear is seen with details like pockets, zippers, blends of fabrics and easy feel wear. The gota work of Rajashtan and Punjab is skilled golden zari strips woven or fixed on to the main garment like a sari or the dupatta. The most comfortable dress is the salwar kameez that radiates Indianness and is also comfortable.

The south Indian Kerala set-saree is the beautiful print in cream and golden which can be teamed with coloured blouses. The navvari sari or the nine yard drape of Maharashtra is usually found in leaf green colour that is symbolic of the newly married bride. The colours also seem to be in mauve, red or blues and the sarees happen as Narayan peth, paithani and various other Belgaum prints.

The padavai is the ghagra choli for young girls in the south that is incomplete without the gold jewellery especially the kaashi gold chain and jhumki earrings. This is also modified as ghagra choli is simple cottons for daily wear in the villages and designed as the lehenga choli in designer wear in the metros. Tradition in India is about values that transcend down generations automatically. These are genetic traits and simplicity is the main ingredient. Ancient culture believed in a lot of dogmas and rituals that can be termed as false beliefs and Indians are an intelligent lot to traverse these paths and modify the social requirements. Indians are highly flexible in the sense they would like to imbibe the changes dictated by western influence and yet clearly affirm their belief in traditions.

It is customary to respect elders and touch their feet as to seek their blessings. Occasions or festivals demand a lot of participation in terms of rangoli drawing, diyas and an array of yummy treats made in the authentic variety as per the

caste and geography. Hindu rituals are a lot about song and dance and each family has a natural way to adjust to these formats. It is a ritual to pray to the Goddess of learning Ma Saraswathi to achieve success. Similarly business people always insist on drawing the Swastika which marks prosperity and worship the Goddess of wealth.

With the advent of technology and women emancipation there is a trend to mingle free with the western concepts of dress, belief, work and also get into a secular concept. But one can feel a distinct Indianness and most of our brethren abroad miss their homeland. Indians all over the world are known for their hospitality and high level of tolerance. Their adaptation power is high and hence they are able to scale heights in the international arena. Putting oneself on the global map, Indians are seeking new vistas of communicating their beliefs and tradition. The gift of health and well being through yoga and meditation is a great source of Vedas in the rich Hindu tradition which has actually benefited the world.

The values in India is about living life with a zest and observing the belief that there is one God prevailing despite so many religions.

Respecting elders, understanding cross culture traditions, free mingling to accommodate tolerance, staying interested in rural welfare are the values of India. The artifacts, cuisine handicrafts, attire and lifestyle of the rural folks is still followed and preserved by Indians. Family is about joy and sharing. In India, the family culture is all about love and patience. A girl weds into a family and adjusts herself seamlessly to the rituals, routine and cuisine. Of late, one can see a lot of love marriages i.e. cross border mingling which is also being accepted by the elders in the family. Association with religious beliefs and sects is also followed by families as many families believe in a particular Guru or saint who guides them in their spiritual path. Families are also getting nuclear owing to independent lifestyle preference and also the concept where in both husband and wife is working and has demanding careers. This is quite common in metros where families are independent in their upbringing and yet love and respect the elders who reside separately. The earlier homes housed themselves together in very large families where one can actually see three or four generations put up together.

Certain families observe a matriarchal concept i.e. the groom resides in the house of the bride or also follows a tradition as per the bride's ancestors. Generally India is patriarchal in the sense the children get the surname of the father and the wife changes her surname to follow that of the husbands. It is also a tradition in certain families that the wife changes her maiden name but again this concept is also changing. Indian families are very accommodating and willing to accept change. It is a concept to observe the karva chauth or the raksha bandhan with great aplomb. There is an occasion for gifting and seeking

the blessings of elders. It is important to respect and hold certain family traditions which are unique in terms of cooking, rituals and beliefs. Families give a lot of importance to lighting the diya in the evening and also each person in family has a habit of doing the puja in his own way.

Metros are also seeing a lot of family value in celebrating birthdays and anniversaries by observing the rituals and also entertaining outdoors. The Indian culture has imbibed the right mix of western influence and yet maintaining the ethnic family tradition. There is more love in every family while blowing candles on the birthday cake and also lighting the diya to observe an Aarti for the birthday person.

### **Education for Preservation**

Historic preservation or heritage conservation is a professional endeavour that seeks to preserve, conserve and protect buildings, objects, landscapes or other artifacts of historic importance. Other names for the discipline include "urban conservation," "landscape preservation," "built environment conservation," "built heritage conservation," "object conservation," and "immovable object conservation."

The role of education as an agent or instrument of social change and social development is widely recognized today. Social change may take place – when humans need change. When the existing social system or network of social institutions fails to meet the existing human needs and when new materials suggest better ways of meeting human needs. According to Maclver social change takes place as a response to many types of changes that take place in the social and nonsocial environment. Education can initiate social changes by bringing about a change in outlook and attitude of man. It can bring about a change in the pattern of social relationships and thereby it may cause social changes.

Earlier educational institutions and teachers used to show a specific way of life to the students and education was more a means of social control than an instrument of social change. Modern educational institutions do not place much emphasis upon transmitting a way of life to the students. The traditional education was meant for an unchanging static society not marked by any change. But today education aims at imparting knowledge. Education was associated with religion. It has become secular today. It is an independent institution now. Education has been chiefly instrumental in preparing the way for the development of science and technology. Education has brought about phenomenal changes in every aspect of men's life. Francis J. Brown remarks that education is a process which brings about changes in the behaviour of society. It is a process which enables every individual to effectively participate in the activities of society and to make positive contribution to the progress of society.

## References

- Ahmad, Intiaz : *Caste and Social Stratification Among Muslims in India*, New Delhi, Manohar, 1978.
- Birley Derei: *Planning and Education*; Routledge and Kegan Paul, London and Boston, 1972.
- Chaklader, Snehamoy : *Sociolinguistics: A Guide to Language Problems in India*, New Delhi, Mittal, 1990.
- Donaldson, Gordon A. : *Cultivating Leadership in Schools*, New York, College Press, 2001.
- Erickson, Erik H.P. : *Gandhi's Truth: On the Origins of Militant Nonviolence*, New York, Norton, 1970.
- Grace, G. : *School Leadership: Beyond Educational Management*, London, Falmer, 1995.
- Kochar, S.K.: *Pivotal Issues in Indian Education*, Sterling Publisher (Private) Ltd., Allahabad, 1981.
- Naik, J.P.: *The Education Commission and After*, Allied Publishers (Pvt.) Ltd., New Delhi, 1982.
- Paliwal, M.R.: *Social Change and Education: Present and Future*, Uppal Publishing House, New Delhi, 1984.
- Shrimati, K.L.: *A search for values in Indian Education*, Vikas Publications, Delhi. 1971.
- Shukla, P.D.: *Towards New pattern of Education in India*, Sterling Publishers (Pvt.) Ltd., New Delhi. 1976.
- Simkins, T. : *Non-formal Education and Development*, Manchester, Manchester University, 1977.
- Steele, T. and Taylor, R. : *Learning Independence, A political outline of Indian Adult Education*, Leicester, National Institute of Adult Continuing Education, 1995.
- Sundram, P.S. and Shah, A.B.: *Education or Catastrophe*, Vikas Publishing House (Pvt.) Ltd., Delhi, 1976.
- Thrupp, J. & Willmott. : *Educational Management in Managerialist Times: Beyond the Textual Apologists*, Maidenhead, UK, 2003.

# The Modes of Transport and Patterns of Movement

---

---

Santosh Ram

*(UGC NET Qualified), Research Scholar  
Department of Geography, Magadh University, Bodhgaya*

Transport or transportation is the movement of people and goods from one location to another. Modes of transport include air, rail, road, water, cable, pipeline, and space. The field can be divided into infrastructure, vehicles, and operations. Transport infrastructure consists of the fixed installations necessary for transport, and may be roads, railways, airways, waterways, canals and pipelines, and terminals such as airports, railway stations, bus stations, warehouses, trucking terminals, refuelling depots (including fuelling docks and fuel stations), and seaports. Terminals may be used both for interchange of passengers and cargo and for maintenance. Vehicles travelling on these networks may include automobiles, bicycles, buses, trains, trucks, people, helicopters, and aircraft. Operations deal with the way the vehicles are operated, and the procedures set for this purpose including financing, legalities and policies. In the transport industry, operations and ownership of infrastructure can be either public or private, depending on the country and mode. Passenger transport may be public, where operators provide scheduled services, or private. Freight transport has become focused on containerization, although bulk transport is used for large volumes of durable items.

Transport plays an important part in economic growth and globalization, but most types cause air pollution and use large amounts of land. While it is heavily subsidized by governments, good planning of transport is essential to make traffic flow, and restrain urban sprawl.

## **Mode**

A mode of transport is a solution that makes use of a particular type of vehicle, infrastructure and operation. The transport of a person or of cargo may involve one mode or several modes, with the latter case being called intermodal or multimodal transport. Each mode has its advantages and disadvantages, and will be chosen for a trip on the basis of cost, capability, route, and speed.

## **Human-powered**

Human-powered transport is the transport of people and/or goods using human muscle-power, in the form of walking, running and swimming. Modern technology has allowed machines to enhance human-power. Human-powered transport remains popular for reasons of cost-saving, leisure, physical exercise and environmentalism. Human-powered transport is sometimes the only type available, especially in underdeveloped or inaccessible regions. It is considered

an ideal form of sustainable transportation. Although humans are able to walk without infrastructure, the transport can be enhanced through the use of roads, especially when enforcing the human power with vehicles, such as bicycles and inline skates. Human-powered vehicles have also been developed for difficult environments, such as snow and water, by watercraft rowing and skiing; even the air can be entered with human-powered aircraft.

### ***Animal-powered***

Animal-powered transport is the use of working animals for the movement of people and goods. Humans may ride some of the animals directly, use them as pack animals for carrying goods, or harness them, alone or in teams, to pull sleds or wheeled vehicles. Animals are superior to people in their speed, endurance and carrying capacity; prior to the Industrial Revolution they were used for all land transport impracticable for people, and they remain an important mode of transport in less developed areas of the world.

### ***Air***

Aviation is the design, development, production, operation, and use of aircraft, especially heavier-than-air aircraft.

### **History**

Many cultures have built devices that travel through the air, from the earliest projectiles such as stones and spears, the boomerang in Australia, the hot air Kongming lantern, and kites. There are early legends of human flight such as the story of Icarus, and Jamshid in Persian myth, and later, somewhat more credible claims of short-distance human flights appear, such as the flying automaton of Archytas of Tarentum (428–347 BC), the winged flights of Abbas Ibn Firnas (810–887), Eilmer of Malmesbury (11th century), and the hot-air Passarola of Bartolomeu Lourenço de Gusmao (1685–1724). The modern age of aviation began with the first untethered human lighter-than-air flight on November 21, 1783, in a hot air balloon designed by the Montgolfier brothers. The practicality of balloons was limited because they could only travel downwind. It was immediately recognized that a steerable, or dirigible, balloon was required. Jean-Pierre Blanchard flew the first human-powered dirigible in 1784 and crossed the English Channel in one in 1785.

In 1799 Sir George Cayley set forth the concept of the modern airplane as a fixed-wing flying machine with separate systems for lift, propulsion, and control. Early dirigible developments included machine-powered propulsion (Henri Giffard, 1852), rigid frames (David Schwarz, 1896), and improved speed and maneuverability (Alberto Santos-Dumont, 1901). While there are many competing claims for the earliest powered, heavier-than-air flight, the most widely-accepted date is December 17, 1903 by the Wright brothers. The Wright brothers were the first to fly in a powered and controlled aircraft. Previous flights were gliders (control but no power) or free flight (power but no control), but the Wright brothers combined both, setting the new standard in aviation

records. Following this, the widespread adoption of ailerons versus wing warping made aircraft much easier to control, and only a decade later, at the start of World War I, heavier-than-air powered aircraft had become practical for reconnaissance, artillery spotting, and even attacks against ground positions.

Aircraft began to transport people and cargo as designs grew larger and more reliable. In contrast to small non-rigid blimps, giant rigid airships became the first aircraft to transport passengers and cargo over great distances. The best known aircraft of this type were manufactured by the German Zeppelin company. The most successful Zeppelin was the Graf Zeppelin. It flew over one million miles, including an around-the-world flight in August 1929. However, the dominance of the Zeppelins over the airplanes of that period, which had a range of only a few hundred miles, was diminishing as airplane design advanced. The "Golden Age" of the airships ended on May 6, 1937 when the Hindenburg caught fire, killing 36 people. Although there have been periodic initiatives to revive their use, airships have seen only niche application since that time. Great progress was made in the field of aviation during the 1920s and 1930s, such as Charles Lindbergh's solo transatlantic flight in 1927, and Charles Kingsford Smith's transpacific flight the following year. One of the most successful designs of this period was the Douglas DC-3, which became the first airliner that was profitable carrying passengers exclusively, starting the modern era of passenger airline service. By the beginning of World War II, many towns and cities had built airports, and there were numerous qualified pilots available. The war brought many innovations to aviation, including the first jet aircraft and the first liquid-fueled rockets.

After WW II, especially in North America, there was a boom in general aviation, both private and commercial, as thousands of pilots were released from military service and many inexpensive war-surplus transport and training aircraft became available. Manufacturers such as Cessna, Piper, and Beechcraft expanded production to provide light aircraft for the new middle-class market. By the 1950s, the development of civil jets grew, beginning with the de Havilland Comet, though the first widely-used passenger jet was the Boeing 707, because it was much more economical than other planes at the time. At the same time, turboprop propulsion began to appear for smaller commuter planes, making it possible to serve small-volume routes in a much wider range of weather conditions. Since the 1960s, composite airframes and quieter, more efficient engines have become available, and Concorde provided supersonic passenger service for more than two decades, but the most important lasting innovations have taken place in instrumentation and control. The arrival of solid-state electronics, the Global Positioning System, satellite communications, and increasingly small and powerful computers and LED displays, have dramatically changed the cockpits of airliners and, increasingly, of smaller aircraft as well. Pilots can navigate much more accurately and view terrain, obstructions, and other nearby aircraft on a map or through synthetic vision, even at night or in low visibility. On June 21, 2004, Space Ship One became the first privately funded

aircraft to make a spaceflight, opening the possibility of an aviation market capable of leaving the Earth's atmosphere. Meanwhile, flying prototypes of aircraft powered by alternative fuels, such as ethanol, electricity, and even solar energy, are becoming more common and may soon enter the mainstream, at least for light aircraft.

### **Civil Aviation**

Civil aviation is one of two major categories of flying, representing all non-military aviation, both private and commercial. Most of the countries in the world are members of the International Civil Aviation Organization (ICAO) and work together to establish common standards and recommended practices for civil aviation through that agency.

Civil aviation includes two major categories:

- Scheduled air transport, including all passenger and cargo flights operating on regularly-scheduled routes; and
- General aviation (GA), including all other civil flights, private or commercial.

Although scheduled air transport is the larger operation in terms of passenger numbers, GA is larger in the number of flights (and flight hours, in the U.S.) In the U.S., GA carries 166 million passengers each year, more than any individual airline, though less than all the airlines combined. Some countries also make a regulatory distinction based on whether aircraft are flown for hire:

- Commercial aviation includes most or all flying done for hire, particularly scheduled service on airlines; and
- Private aviation includes pilots flying for their own purposes (recreation, business meetings, etc.) without receiving any kind of remuneration.

All scheduled air transport is commercial, but general aviation can be either commercial or private. Normally, the pilot, aircraft, and operator must all be authorized to perform commercial operations through separate commercial licensing, registration, and operation certificates.

### **References**

- Belden C.: *Landscapes of the Sacred: Geography and Narrative in American Spirituality*, New York: Paulist Press, 1988.
- Cronon, William: *Changes in the Land: Indians, Colonists, and the Ecology of New England*. New York: Hill and Wang, 1983.
- Harvey, David: *Explanation in Geography*. London: Edward Arnold, 1969.
- James, T.: *The Best Poor Man's Country: A Geographical Study of Early Southeastern Pennsylvania*. Baltimore: Johns Hopkins Press, 1972.
- Ray Allen: *The Far Western Frontier, 1830-1860*. The New American Nation Series. New York: Harper, 1956.
- Watkins, Eric: *The Middle Eastern Environment*, London, The British Society for Middle Eastern Studie, 1995.